संक्षिप्त
पृथ्वीराज रासो

(100)

सम्पादक
हजारी प्रसाद द्विवेदी
नामवर सिंह

संक्षिप्त

पृथ्वीराज रासो

[संशोधित संस्करण]



सम्पादक

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी

डॉ० नामवर सिंह

साहित्य भवन [प्रा] लिमिटेड

के.पी. कक्कड़ रोड, इलाहाबाद-२११००३

Prithvi Raj Raso

By

Dr. Hajari Prasad Duvedi

Dr. Namvor Singh

सप्तम संशोधित संस्करण : १९८५ मूल्य : १७·००

साहित्य भवन प्रा० लि०, ९३, के० पी० कक्कड़ रोड, इलाहाबाद
के लिए प्रकाशित तथा विद्या मुद्रण गृह, ९८६, दरियाबाद,
इलाहाबाद द्वारा मुद्रित ।

संक्षिप्त

पृथ्वीराज रासो

[संशोधित संस्करण]

विषय-सूची

●

भूमिका

'पृथ्वीराज रासो' हिन्दी साहित्य का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है। इसके सम्बन्ध में विद्वानों ने अनेक प्रकार के मत प्रकट किए हैं। कुछ लोग इसे एकदम अप्रामाणिक रचना मानते हैं और कुछ दूसरे लोग पूर्ण-रूप से तो नहीं, पर आंशिक रूप से इसे प्रामाणिक ग्रन्थ मानते हैं। इस विचार के लोगों का विश्वास है कि चंद नाम का कोई कवि सचमुच ही पृथ्वीराज के काल में उत्पन्न हुआ था और उसने सचमुच ही कोई काव्य लिखा था जो अब प्रक्षेपों से स्फीत और विकृत हो गया है। प्रामाणिकता और अप्रामाणिकता का विवाद प्रधान रूप से इस प्रश्न पर केन्द्रित है कि सचमुच ही पृथ्वीराज का समकालीन और सखा कोई चंद नामक कवि था भी या नहीं। पृथ्वीराज रासो की घटनाओं को ऐतिहासिक दृष्टि से देखनेवालों ने प्रायः निश्चित रूप से ही कह दिया है कि यह बात संभव नहीं दीखती। समकालीन कवि कभी ऐसी ऊल-जुलूल बातें नहीं लिख सकता। जो लोग पृथ्वीराज रासो को प्रामाणिक रचना समझते हैं वे उन घटनाओं की ऐतिहासिकता सिद्ध करने का प्रयत्न करते हैं। इस प्रकार प्रत्येक आलोचक ग्रन्थागत घटनाओं की ऐतिहासिकता की जाँच में ही अपनी सारी शक्ति लगा देता है। अभी तक ग्रंथ की साहित्यिक महिमा के समझने का प्रयत्न बहुत कम किया गया है।

फिर भी पृथ्वीराज रासो के साहित्यिक महत्त्व को अनुभव किया जाता है। प्रत्येक विश्वविद्यालय अपनी उच्चतर कक्षाओं में रासो का कुछ अंश—जो अत्यन्त नगण्य हुआ करता है—पाठ्यक्रम में रखा करता है। इन अंशों से रासो की महिमा का बहुत मामूली परिचय ही मिल पाता है। पृथ्वीराज रासो इतना विशाल ग्रन्थ है कि उसका संक्षिप्त रूप प्रकाशित करना भी कठिन कार्य ही है। परन्तु प्रत्येक विचारशील अध्यापक यह अनुभव करता है कि विभिन्न विश्वविद्यालयों में जो अंश पढ़ाए जाते हैं वे रासो का ठीक-ठीक परिचय नहीं दे सकते। संक्षिप्त करने में बहुत कठिनाइयाँ भी हैं, किस अंश को लिया जाय, किस को छोड़ा जाय।

गत मार्च बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् ने मुझे हिन्दी साहित्य के आदिकाल पर कुछ व्याख्यान देने के लिए आमंत्रित किया। उस अवसर पर रासो के सम्बन्ध में अपने विचार प्रकट करने का अवसर मुझे मिला। बहुत दिनों से मेरे

मन में रासो के प्रामाणिक अंशों के सम्बन्ध में एक अस्पष्ट धारणा रही है। मैं उन विद्वानों के मत को ही अपना मत मानता रहा हूँ जो स्वीकार करते हैं कि रासो में कुछ-न-कुछ चन्द की प्रामाणिक रचनाएँ हैं अवश्य। 'पुरातन प्रबन्ध-संग्रह में कुछ छप्पयों के प्राप्त हो जाने से यह मत और भी विश्वास योग्य हो गया है। जब मुनि जिनविजय जी शान्तिनिकेतन में थे तो उनकी कृपा से मुझे कई जैन प्रबन्धों को हिन्दी में भाषान्तरित करने का सुयोग प्राप्त हुआ था। उनमें से एक का भाषान्तर (प्रबंध चिन्तामणि) सिंधी जैन ग्रन्थमाला में प्रकाशित भी हो चुका है। बाकी अभी प्रकाशित नहीं हुए हैं। उस समय मुझे पुरातन प्रबन्ध-संग्रह को भी भाषान्तरित करने का अवसर मिला था। तभी से मेरे मन में रासो के मूल रूप के सम्बन्ध में जिज्ञासा उत्पन्न हुई थी। बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् के व्याख्यानों में मैंने अपने विचारों को विद्वानों के सामने रख दिया। अभी भी उस पर पंडितों की प्रतिक्रिया नहीं मालूम हो सकी। उस व्याख्यान में मैंने रासो के मूल प्रामाणिक अंग माने जाने योग्य अंशों की ओर संकेत किया था। प्रस्तुत संक्षिप्त रासो उन्हीं विचारों पर आधारित है। केवल उन्हीं अंशों को संक्षिप्त किया गया है जिनकी प्राचीनता उन व्याख्यानों में प्रमाणित की गई है। यथासंभव इस बात का भी ध्यान रखा गया है कि विद्यार्थियों को रासो की पूरी साहित्यिक महिमा का परिचय मिल जाय। मेरे विचार विस्तार से तो 'हिंदी साहित्य का आदिकाल' नामक पुस्तक में आ गए हैं, परन्तु संक्षेप में उनका उल्लेख यहाँ कर दिया जा रहा है।

काशी ना० प्र० सभा से प्रकाशित पृथ्वीराज रासो[1] में ढाई हजार पृष्ठ हैं जो ६९ सर्गों में विभाजित हैं। सबसे बड़ा समय कनवज्ज युद्ध है जो संभवतः रासो का मूल कथानक है। यह विश्वास किया जाता है कि चन्द पृथ्वीराज का मित्र, कवि और सलाहकार था। रासो में वह तीनों रूपों में चित्रित है।

---

[1]पृथ्वीराज रासो के प्रकाशित संस्करण—(१) एशियाटिक सोसायटी ऑफ बंगाल से १८८३-८६ ई० में आरंभिक अंश प्रकाशित; (२) मोहनलाल विष्णुलाल पंड्या सं०, ई०, जे० लाजरस एण्ड को०, बनारस सन् १८८८-१९०४ ई०; (३) नागरी प्रचारिणी सभा, काशी से श्यामसुन्दरदास आदि द्वारा सं० १९०५-१९१३; (४) पृथ्वीराज रासो के दो समय (रेवातट और पद्मावती समय) लखनऊ १९४२; (५) असली पृथ्वीराज रासो, मोतीलाल बनारसीदास, लाहौर १९३८; (६) केवल रेवातट समय, 'हिन्दी के कवि और काव्य' (प्रथम भाग) में १९३७ में प्रयाग से प्रकाशित।

इस ग्रन्थ के अनुसार दोनों के जन्म और मरण की तिथि भी एक है। इस प्रकार सदा साथ रहने वाले अभिन्न मित्र की रचना निश्चय ही बहुत प्रामाणिक होनी चाहिए। यही सोचकर सुप्रसिद्ध विद्वत्सभा रायल एशियाटिक सोसायटी ऑफ बंगाल ने इस ग्रन्थ का प्रकाशन आरंभ किया था। कुछ थोड़ा-सा अंश प्रकाशित भी हो चुका था, किंतु इसी समय डॉ० बूलर को 'पृथ्वीराज विजय' की एक खंडित प्रति हाथ लगी। उस पुस्तक की परीक्षा करने के बाद डॉ० बूलर इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि पृथ्वीराज विजय इतिहास की दृष्टि से अधिक प्रामाणिक ग्रन्थ है और 'पृथ्वीराज रासो' अत्यन्त अप्रामाणिक, क्योंकि पृथ्वीराजकालीन अभिलेखों से 'पृथ्वीराज विजय' में वर्णित घटनाएँ तो मिल जाती हैं, लेकिन 'पृथ्वीराज रासो' में वर्णित घटनाएँ नहीं मिलतीं। उनका पत्र सोसायटी के प्रोसीडिंग्स (कार्य विवरण) में छापा गया और पृथ्वीराज रासो का प्रकाशन बंद कर दिया गया। उन दिनों के यूरोपियन विद्वान् मध्य देश की रचनाओं का महत्त्व दो दृष्टियों से आँकते थे—ऐतिहासिक तथ्यों को प्राप्त करने और भाषाशास्त्रीय समस्याओं को सुलझाने की दृष्टि से। रासो से यह उद्देश्य सिद्ध नहीं होता था। कितनी ही ऐसी अनमिल बातें इस पुस्तक में मिलीं जो इसके ऐतिहासिक रूप को निर्विवाद रूप से गलत साबित करती थीं। पृथ्वीराज विजय के अनुसार पृथ्वीराज सोमेश्वर और कर्पूरदेवी के पुत्र थे। कर्पूरदेवी चेदि-नरेश की कन्या थीं। जब पुत्र पृथ्वीराज नाबालिग़ था तो माता ने कदम्बबास नामक मंत्री की सहायता से राज्य संचालन किया था। यह बात अभिलेखों से मिलती है। इधर पृथ्वीराज रासो के अनुसार ये दिल्ली के राजा अनंगपाल की पुत्री के लड़के थे। मजेदार बात यह है कि पृथ्वीराज विजय में चंद बरदाई नामक किसी कवि का नाम नहीं है। एक जगह चन्द्रराज कवि का उल्लेख अवश्य है, परन्तु उसे कुछ विद्वानों ने कश्मीरी कवि चन्द्रक से अभिन्न माना है। दूसरी भी बहुत-सी अनैतिहासिक बातें रासो में मिलती हैं।

सातवीं-आठवीं शताब्दी से इस देश में ऐतिहासिक व्यक्तियों के नाम पर काव्य लिखने की प्रथा खूब चली। इन्हीं दिनों ईरान के साहित्य में भी इस प्रथा का प्रवेश हुआ। इस काल में उत्तर-पश्चिमी सीमांत से बहुत-सी जातियों का प्रवेश इस देश में होता रहा। वे राज्य-स्थापन करने में भी समर्थ हुईं। पता नहीं कि उन जातियों की स्वदेशी प्रथा की क्या-क्या बातें इस देश में चलीं। साहित्य में नये-नये काव्यरूपों का प्रवेश इस काल में हुआ अवश्य। संभवतः ऐतिहासिक पुरुषों के नाम पर काव्य लिखने या लिखाने की चलन भी उनके संसर्ग का फल हो। परन्तु भारतीय कवियों ने ऐतिहासिक नाम भर लिया, शैली उनकी वही पुरानी रही जिसमें काव्य-निर्माण की ओर अधिक

ध्यान था, विवरण-संग्रह की ओर कम; कल्पनाविलास का अधिक मान था, तथ्यनिरूपण का कम, संभावनाओं की ओर अधिक रुचि थी, घटना की ओर कम, उल्लसित आनन्द की ओर अधिक झुकाव था, विलसित तथ्यावली की ओर कम। इस प्रकार इतिहास को कल्पना के हाथों परास्त होना पड़ा। ऐतिहासिक तथ्य इन काव्यों में कल्पना को उकसा देने के साधन मान लिए गए हैं। राजा का विवाह, शत्रु-विजय; जल-क्रीड़ा, शैल-वन विहार, दोला-विलास, नृत्य-गान-प्रीति ये सब बातें ही प्रमुख हो उठी हैं। बाद में क्रमशः इतिहास का अंश कम होता गया और संभावनाओं का जोर बढ़ता गया। राजा के शत्रु होते हैं, उनसे युद्ध होता है। इतिहास की दृष्टि में एक युद्ध हुआ और भी तो हो सकते थे। कवि संभावना को देखेगा। राजा के एकाधिक विवाह होते थे। यह तथ्य अनेक विवाहों की संभावना उत्पन्न करता है, जल-क्रीड़ा और वन विहार की संभावना की ओर संकेत करता है और कवि को अपनी कल्पना का पङ्ख खोल देने का अवसर देता है। उत्तर काल के ऐतिहासिक काव्यों में इसकी भरमार है। ऐतिहासिक विद्वान् के लिए संगति मिलाना कठिन हो जाता है।

वस्तुतः इस देश में इतिहास को ठीक आधुनिक अर्थ में कभी नहीं लिया गया। बराबर ही ऐतिहासिक व्यक्ति को पौराणिक या काल्पनिक कथा नायक जैसा बना देने की प्रवृत्ति रही है। कुछ में दैवी शक्ति का आरोप करके पौराणिक बना दिया गया है— जैसे राम, बुद्ध, कृष्ण आदि और कुछ में काल्पनिक रोमांस का आरोप करके निजंधरी कथाओं का आश्रय बना दिया गया है—जैसे उदयन, विक्रमादित्य और हाल। जायसी के रतनसेन, रासो के पृथ्वीराज में तथ्य और कल्पना का— फैक्ट्स और फिक्शन का अद्भुत योग हुआ है। कर्मफल की अनिवार्यता में दुर्भाग्य और सौभाग्य की अद्भुत शक्ति में और मनुष्य के अपूर्व शक्तिभांडार होने में दृढ़ विश्वास ने इस देश के ऐतिहासिक तथ्यों को सदा काल्पनिक रंग में रँगा है। यही कारण है कि जब ऐतिहासिक व्यक्तियों का भी चरित्र लिखा जाने लगा, तब भी इतिहास का कार्य नहीं हुआ। अंत तक ये रचनाएँ काव्य ही बन सकीं, इतिहास नहीं। फिर भी निजंधरी कथाओं से वे इस अर्थ में भिन्न थीं कि उनमें बाह्य तथ्यात्मक जगत् से कुछ-न-कुछ योग अवश्य रहता था। कभी-कभी मात्रा में कमी-बेशी तो हुआ करती थी, पर योग रहता अवश्य था। निजंधरी कथाएँ अपने आप में ही परिपूर्ण होती थीं।

जिस प्रकार भारतीय कवि काल्पनिक कथाओं में ऐसी घटनाओं को नहीं

आने देता जो दुःख-परक विरोधों को उकसावे, उसी प्रकार वह ऐतिहासिक कथानकों में भी करता है। सिद्धान्ततः काव्य में उस वस्तु का आना भारतीय कवि उचित नहीं समझता जो तथ्य और औचित्य की भावनाओं में विरोध उत्पन्न करे, दुःखोद्रेचक विषम परिस्थितियों—ट्रेजिक कंट्रेडिक्शंस—की सृष्टि करे परन्तु वास्तविक जीवन में ऐमी बातें होती ही रहती हैं। इसलिए इतिहासाश्रित काव्य में भी ऐसी बातें आयेंगी ही। बहुत कम कवियों ने ऐसी घटनाओं की उपेक्षा कर जाने की बुद्धि से अपने को मुक्त रखा है। यही कारण है कि इन ऐतिहासिक काव्यों के नायकों को धीरोदात्त बनाने की प्रवृत्ति ही प्रबल हो गई है; परन्तु वास्तविक जीवन के कर्तव्य-द्वन्द्व, आत्म-विरोध और आत्म-प्रतिरोध जैसी बातें उसमें नहीं आ पातीं। ऐसी बातों के न आने से इतिहास का रस भी नहीं आ पाता और कथानायक कल्पित पात्र की कोटि में आ जाता है। फिर, जीवन में कभी हास्योद्रेचक अनमिल स्वर भी मिल जाते हैं। संस्कृत काव्य का कर्ता कुछ अधिक गम्भीर रहने में विश्वास करता है और ऐसे प्रसंगों को छोड़ जाता है। ऐसे प्रसंगों को तो वह भरसक नहीं आने देना चाहता, जहाँ कथानायक के नैतिक पतन की सूचना मिलने की आशंका हो। यदि ऐसे प्रसंगों की वह अवतारणा भी करता है तो घटनाओं और परिस्थितियों का ऐसा जाल तानता है जिसमें नायक का कर्तव्य उचित रूप में प्रतिभासित हो। सब मिलाकर ऐतिहासिक काव्य काल्पनिक निजंधरी कथानकों पर आश्रित काव्य से बहुत भिन्न नहीं होते। उनसे आप इतिहास के शोध की सामग्री संग्रह कर सकते हैं, पर इतिहास को नहीं पा सकते—इतिहास, जो जीवंत मनुष्य के विकास की जीवन कथा होता है; जो कालप्रवाह से नित्य उद्घाटित होते रहने वाली नव-नव घटनाओं और परिस्थितियों के भीतर से मनुष्य की विजय-यात्रा का चित्र उपस्थित करता है और जो काल के परदे पर प्रतिफलित होने वाले नये-नये दृश्यों को हमारे सामने सहज भाव से उद्घाटित करता रहता है। भारतीय कवि इतिहास-प्रसिद्ध पात्र को भी निजंधरी कथानकों की ऊँचाई तक ले जाना चाहता है। इस कार्य के लिए वह कुछ कथानक-रूढ़ियों का प्रयोग करता है जो कथानक को अभिलषित दिशा में मोड़ देने के लिए दीर्घकाल से प्रचलित हैं। इनसे कथानक में सरसता आती है और घटनाप्रवाह में एक प्रकार की लोच आ जाती है। अस्तु।

जहाँ तक रासो की ऐतिहासिकता का सम्बन्ध है डा० बूलर, भारिसन, म० म० गौ० ही० ओझा, मुन्शी देवीप्रसाद जी आदि प्रामाणिक इतिहास-लेखकों ने उसे अविश्वसनीय सिद्ध कर दिया है। अब इसकी लिखित घटनाओं

को ऐतिहासिक सिद्ध करने का प्रयत्न बन्द कर देना ही उचित है । किन्तु फिर भी रासो का महत्त्व है । बहुत दिनों तक विद्वानों में यह विश्वास था कि यद्यपि रासो में प्रक्षिप्त अंश बहुत हैं, तथापि इसमें चन्द के कुछ-न-कुछ वचन अवश्य हैं जो काफी पुराने हैं । अब तक यही विश्वास किया जाता रहा है कि प्रक्षेपों के समुद्र में से मूल कविताओं के मोती चुन लेना असम्भव ही है । इधर हाल में मुनि जिनविजय जी ने 'पुरातन प्रबन्ध संग्रह' में जयचन्द प्रबंध नामक एक प्रबंध प्रकाशित किया जिसमें चन्द के नाम से ४ छप्पय दिये हैं । इसकी भाषा परिनिष्ठित साहित्यिक अपभ्रंश के निकट की भाषा है यद्यपि उनमें कुछ चिह्न ऐसे भी मिलते हैं जिनसे हम अनुमान कर सकते हैं कि 'सन्देश रासक' की भाषा के सदृश यह भाषा भी कुछ आगे बढ़ी हुई भाषा है। जिस प्रति से यह छप्पय उद्धृत किये गए हैं वह संभवतः पन्द्रहवीं शताब्दी की लिखी हुई है । इससे यह सिद्ध होता है कि पन्द्रहवीं शताब्दी में लोगों को चंद के छप्पय का ज्ञान था और ये छप्पय परिनिष्ठित अपभ्रंश से थोड़ी आगे बढ़ी भाषा में लिखे गए थे । इन पद्यों के प्रकाशन के बाद से अब इस विषय में किसी को सन्देह नहीं रह गया है कि चन्द नामक कोई कवि पृथ्वीराज के दरबार में अवश्य थे और उन्होंने ग्रंथ भी लिखा है । सौभाग्य-वश वर्तमान रासो में भी वे छंद कुछ विकृत रूप में प्राप्त हो गए हैं । इससे यह अनुमान किया जा सकता है कि वर्तमान रासो में चन्द के मूल छंद अवश्य मिले हुए हैं ।

पृथ्वीराज रासो का अध्ययन करने के बाद और नवीं-दसवीं शताब्दी में प्रचलित कथाओं के लक्षण और काव्य-रूपों को ध्यान में रखकर देखने से ऐसा लगता है कि यद्यपि चन्द के मूल वचनों की खोज लेना अब भी कठिन है, किन्तु उसमें क्या-क्या वस्तुएँ थीं और कौन-कौन सी कथाएँ थीं, इस बात का पता लगा लेना उतना कठिन नहीं है । उन दिनों की कथाएँ दो व्यक्तियों के संवाद-रूप में लिखी जाती थीं । चन्द ने भी रासो को शुक और शुकी के संवाद में लिखा था, जैसे विद्यापति ने कीर्तिलता को भृङ्ग और भृङ्गी के संवाद के रूप में लिखा था और कौतूहल कवि ने लीलावती कथा को कवि और कविपत्नी के संवाद के रूप में लिखा था । फिर चन्द बरदाई का यह काव्य रासक भी है, जो गद्य-काव्य हुआ करता था, जिसमें मृदु और उद्धत प्रयोग हुआ करते थे । सन्देश रासक में जिस प्रकार कवि ने अपनी नम्रता प्रकट करते हुए कहा है कि बड़े-बड़े कवियों की रचनाएँ उपलब्ध हैं, तो क्या छोटे कवि अपनी रचनाओं से आनन्दित न हों ? उसी प्रकार और उसी शैली में पृथ्वीराज रासो में भी यह बात कही गई है । इतना ही नहीं, एक

दो प्राकृत गाथाएँ तो रासो में भी प्रायः वही हैं जो संदेश रासक में हैं।[1]

फिर, सन्देश रासक में बीच-बीच में कवि सूचना देता है कि अमुक पात्र ने अमुक छन्द में अपनी बात कही है। उसी प्रकार पृथ्वीराज रासो में भी बीच-बीच में कह दिया गया है कि अमुक पात्र ने अमुक छंद में अपनी बात कही। इन सब बातों पर विचार करने से ऐसा जान पड़ता है कि चन्द ने भी अपभ्रंश के रासकों की शैली पर ही अपना रासो लिखा। सन्देश रासक में लगभग एक तिहाई पद्य रासक छन्दों में हैं। पृथ्वीराज रासो में रासक छंद बहुत कम व्यवहृत हुआ है। पर सन्देश रासक से यह तो सिद्ध हो ही जाता है कि रासक ग्रंथों में दूसरे छन्दों का—विशेषकर दोहा और गाथा का प्रचुर प्रयोग होता था। वीररस की प्रधानता होने के कारण चन्द ने छप्पय छन्दों का अधिक प्रयोग किया था। इस दृष्टि से विचार करने पर रासो के निम्नलिखित प्रसंग प्रामाणिक जान पड़ते हैं—

१ आरंभिक अंश, २. इंछिनी विवाह, ३. शशिव्रता का गन्धर्व विवाह, ४. तोमर पाहार का शहाबुद्दीन को पकड़ना, ५. संयोगिता का जन्म, विवाह तथा इंछिनी और संयोगिता की प्रतिद्वंद्विता और समझौता।[2]

इन अंशों की भाषा में उस प्रकार की बेडौल और बेमेल ठूँस-ठाँस नहीं है और कवित्त का सहज प्रभाव है। इसमें चन्द बरदाई ऐसे सहज प्रफुल्ल कवि के रूप में दृष्टिगत होते हैं जो विषम परिस्थितियों से भी जीवन रस खींचते रहते हैं। वे केवल कल्पनाविलासी कवि ही नहीं, निपुण मन्त्रदाता के रूप में भी सामने आते हैं। चाहे रूप और शोभा का वर्णन हो, चाहे ऋतु-वर्णन की उत्फुल्लता का प्रसंग हो या युद्ध की भेरी का प्रसंग हो, चन्द बरदाई सर्वत्र एक समान अविचलित और प्रसन्न दिखाई पड़ते हैं। रूप और सौंदर्य के प्रसंग में उनकी कविता रुकना ही नहीं जानती। निस्सन्देह उन्होंने काव्यगत रूढ़ियों का बहुत व्यवहार किया है और परंपरा प्रचलित उपमानों से सौंदर्य की अभिव्यंजना उनके साहित्य का प्रधान कौशल है तथापि वह कवि के आनन्द-निर्झर चित्त को पूर्णरूप से प्रकट करती है। कथानक-रूढ़ियों की दृष्टि से तो चन्द का काव्य बहुत ही महत्त्वपूर्ण है और परवर्तीकाल में जिन लोगों ने उसमें प्रक्षेप किया है, वे चंद की इस प्रवृत्ति को बहुत अच्छी तरह पहचानते

१.२. विशेष विस्तार के लिए देखिए—हिन्दी साहित्य का आदिकाल, पटना १९५२।

थे इसीलिए प्रक्षेप करने वालों ने चुन-चुन करके कथानक-रूढ़ियों और काव्य रूढ़ियों का सन्निवेश किया है ।

साधारणतः भारतीय कथाओं में कथानक को अभीष्ट दिशा में मोड़ने के लिए निम्नलिखित कथानक रूढ़ियों का व्यवहार हुआ है : —

१. स्वप्न में प्रियमूर्ति दर्शन, २. कहानी कहने वाला सुआ, ३. शिकार खेलते समय घोड़े का जंगल में मार्ग भूलना, ४. मुनि का शाप, ५. रूप-परिवर्तन, ६. लिंग-परिवर्तन, ७. परकाय-प्रवेश, ८. आकाशवाणी, ९. अभिज्ञान या साहिदानी, १०. परिचारिका का राजा से प्रेम और उसका राजकन्या-रूप में अभिज्ञान, ११. नायिका का चित्र, १२. नायक का औदार्य, १३. विरह-वेदना, १४. चौर्य-प्रेम और फिर विवाह, १५. नट-नटी द्वारा रूप-श्रवण और प्रेम, १६. सन्देशवाहक हंस या कपोत, १७. विजनवन में सुन्दरियों से साक्षात्कार, १८. उजाड़ शहर का मिल जाना और वहाँ नायक का राजा हो जाना, १९. शत्रु-संतापित सरदार की प्रिया को शरण देना और युद्ध मोल लेना, २०. अतिप्राकृत दृश्य से लक्ष्मी-प्राप्ति का शकुन इत्यादि-इत्यादि ।

लगभग इन सभी कथानक-रूढ़ियों का प्रयोग पृथ्वीराज रासो में किया गया है । महत्त्वपूर्ण प्रत्येक विवाह के समय नट का, नर्तकी का, स्वप्न-दर्शन का, चित्र-दर्शन का, हंस-दौत्य या शुक-दौत्य का उपयोग किया गया है । शशिव्रता या संयोगिता इन दोनों मुख्य रानियों को अप्सरा का अवतार बताया गया है । प्रत्येक विवाह में आगे या पीछे कुछ-न-कुछ युद्ध का प्रसंग अवश्य आता है और प्राचीन निजंधरी कथाओं के समान कन्याहरण प्रधान रूप से वर्णित हुआ है । शोभा चाहे प्रकृति की हो या मनुष्य की हो, परम्परा प्रचलित रूढ़ उपमानों के सहारे ही निखरी है और अधीनस्थ सामन्तों की स्वामिभक्ति और पराक्रम अत्यन्त उज्ज्वल रूप में प्रकट हुआ है । छन्दों का परिवर्तन बहुत अधिक हुआ है, पर कहीं भी अस्वाभाविकता नहीं आयी है । १२वीं-१३वीं शती के अपभ्रंश साहित्य में छन्दों का यह परिवर्तन बहुत अधिक प्रचलित हो गया था । जो छन्द-परिवर्तन के लिए केशव को दोषी समझते हैं, वे बहुत ऊपर से काव्य-रूपों की आलोचना करते हैं । वस्तुतः केशव को रामचन्द्रिका तक आते-आते यह छन्दोबहुला प्रथा निर्जीव और विकृत हो गई थी । अत्यधिक प्रक्षेप होते रहने के बाद भी पृथ्वीराज रासो में यह प्रथा सजीव रूप में वर्तमान है । अनुकरण करने वालों ने भी चन्द की शैली को ठीक रूप में पकड़ा है और वर्तमान रूप में भी रासो के छन्द जब बदलते हैं तो श्रोता के चित्त में प्रसंगानुकूल नवीन कम्पन उत्पन्न करते हैं ।

वर्तमान रासो में युद्धों का प्रसंग बहुत अधिक है और शहाबुद्दीन तो इसमें हर मौके-बेमौके अनायास आ पड़ता है। अधिकतर भट्भणन्त और गलत तिथियों का हिसाब ऐसे प्रसङ्ग में ही आता है। ऐसा कहने में कुछ भी संकोच मालूम नहीं पड़ता कि ये युद्धों के अनावश्यक विस्तारित वर्णन, चौहान और कमधुज्ज के सरदारों के नामों की सूची आदि बातें, परवर्ती ठूंसठाँस हैं। मूल रासो शुक औरशुकी के संवाद रूप में ही लिखा गया था और संभवतः कीर्ति-लता के समान प्रत्येक समय के आरंभ में शुक और शुकी प्रसंग उसमें भी था। इधर रासो के अनेक संक्षिप्त संस्करणों का पता लगा है और पंडितों में यह जल्पना-कल्पना आरंभ हुई है कि इन्हीं छोटे संस्करणों में से कोई रासो का मूल रूप है या नहीं। अभी तक इन संस्करणों का जो कुछ विवरण देखने में आया है, उससे तो ऐसा लगता है कि ये सब संस्करण रासो के संक्षेप रूप ही हैं।

इन्हीं विचारों के अनुसार वर्तमान संक्षिप्त रूप का संकलन किया गया है। मेरा यह दावा नहीं है कि यह रासो का मूल रूप है। यह निर्णय करना अब बड़ा कठिन है कि चन्द की वास्तविक रचनाएँ कौन सी हैं, पर मेरा विश्वास अवश्य है कि चन्द की मूल रचना कुछ इसी के आस-पास होगी। विद्यार्थी को इस संक्षिप्त रूप से रासो की सभी विशेषताओं को समझने का अवसर मिलेगा और वह उस ग्रन्थ की साहित्यिक महिमा के प्रति अधिक जिज्ञासु और आग्रहवान् होगा, इसी विश्वास से यह श्रम किया गया है।

काशी विश्वविद्यालय, बनारस
अक्षय तृतीया, सं० २००९

हजारीप्रसाद द्विवेदी

आदि पर्व

साटक ॥ ॐ ॥

आदि देव प्रनम्य नम्य गुरयं, वानीय वंदे पयं ॥
सिष्टं धारन धारयं वसुमती, लच्छीस चरनाश्रयं ॥
तं गुं तिष्टति ईस दुष्ट दहनं, सुरनाथ सिद्धिश्रयं ॥
थिर चर जंगम जीव चंद नमयं, सर्वेस वर्दामियं ॥१॥

॥ भुजंगप्रयात ॥

प्रथंमं भुजंगी सुधारी ग्रहंनं । जिनै नाम एकं अनेकं कहंनं ॥
दुती लभ्भयं देवतं जीवतेसं । जिनैं विश्वराख्यौं बली मंत्रसेसं ॥
चवं वेद बभं हरी किति भाखी । जिनैं ध्रम्य साधाम्म संसार साखो॥
तृती भारती व्यास भारत्थ भाख्यौ । जिनैंउत पारथ्य सारथ्य साख्यौ ॥
चवं सुक्खदेवं परीखत्त पायं । जिनैं उद्धर्‌यों श्रब्ब कुर्वंस रायं ॥
नरं रूप एचम्म श्रीहर्ष सारं । नलैराय कंठं दिने पद्ध हारं ॥
छटं कालिदासं सुभाषा सुबद्धं । जिनैं बागबानी सुबानी सुबद्दं ॥
कियो कालिका मुख्ख वासं सुसुद्धं । जिनैं सेत बंध्योति भोजं प्रबंधं ॥
सतं डंडमाली उलाली कवित्तं । जिनैं बुद्धि तारंग यंगा सरित्तं ॥
जयद्देव अठ्ठं कवी कब्बिरायं । जिनैं केवलं कित्त गोविंद गायं ॥
गुरं सब्ब कब्बी लहू चंद कब्बी । जिनैं दर्सियंदेवि साअंग हब्बी ॥
कवी कित्तिकित्ती उकती सुदिख्खी । तिनैं की उचिष्टीकवीचंद भख्खी ॥२॥

॥ दूहा ॥

उच्चिष्ट चंद छंदह बयन । सुनत सु जंपिय नारि ॥
तनु पवित्र पावन कविय । उकति अनूठ उधारि ॥३॥

॥ कवित्त ॥

कहै कंति सम कंत । तंत पावन बड़ कब्बिय ॥
तंत मंत उच्चार । देवि दरसिय मझि हब्बिय ॥
तंत बीर उग्रंत । रंग राजन सुख दाइय ॥
बाल केल प्रत्यंग । सुरनि उद्धरि कविताइय ॥

अवलंब उकति उच्चार करि। जिहित मोहि कोविद रहै ॥
सम ब्रह्मरूप या सब्द कहुँ। क्यों उचिष्ट कवियन कहै ॥४॥

॥ कवित्त ॥

सम वनिता बर बंदि। चंद जंपिय कोमल कल ॥
सबद ब्रह्म इह सत्ति। अपर पावन कहि निर्मल ॥
जिहित सबद नहिं रूप। रेख अकार ब्रम्र नहिं ॥
अकल अगाध अपार। पार पावन त्रयपुर महिं ॥
तिहिं सबद ब्रह्म रचना करौं। गुरु प्रसाद सरसें प्रसन ॥
जद्यपि सु उकति चूकौं जुगति। तौ कमलबदनि कवितह हँसन ॥५॥

॥ कवित्त ॥

तुम बानी बरबंद। नाग देखंत विमल मति ॥
छंद भंग गन रहित। कंठ कौमार काव्य कृत ॥
वुधि तरंग सम गंग। उकति उच्चार अमिय कल ॥
सुरन सुरत विहसंत। मंत जनु वस्य करन बल ॥
अवतार भूप प्रिथिराज पहु। राज सुख तिन सम लहहि ॥
बीराधि बीर सामंत सब। तिनि सु गल्ह अच्छी कहहि ॥६॥

॥ कवित्त ॥

गज गबनी प्रति चंद। छंद कोमल उच्चारिय ॥
मनहरनी रस बेलि। सुरन सागर रस धारिय ॥
बंक नयन बय बाल। प्रान बल्लभ सुखदाइय ॥
अगुन निगुन गुरु ग्रहनि। गवरि पूजा फल पाइय ॥
भए आदि अंत कविता जिते। तिन अनंत गति अति कहिय ॥
अनेक ग्रंथ तिन बरनवत। यों उचिष्ट मति मैं लहिय ॥७॥

॥ दूहा ॥

फूलि कित्ति चहुआंन की। जुग्गनि जुग्ग निवास ॥
अप्प मत्ति सरसें सबल। मति करी कबि हास ॥८॥

॥ गाहा ॥

पय सक्करी सुभत्तौ। एकत्तौ कनय राय भोयंसी ॥
कर कंसी गुज्जरीय। रब्बरियं नैव जीवंति ॥९॥

सत्त खनै आवासं । महिलानं मद्द सद्द नूपरया ॥
सतफल बज्जुन पयसा । पब्बरियं नैव चालंति ॥१०॥
रब्बरियं रस मंद । क्यू पुज्जति साध अमियेन ॥
उकति जुकत्तिय ग्रंथं । नथि कत्थ कवि कत्थिय तेन ॥११॥
याते वसंत मासे । कोकिल झंकार अंब बन करयं ॥
वर बब्बूर विरष्षं । कपोतयं नैव कलयंति ॥१२॥
सहसं किरन सुभाउ । उगि आदित्य गमय अंधरं ॥
अय्यं उमा न सारो । भोडलयं नैव झलकंति ॥१३॥
कज्जल महि कस्तूरी । रानी रेहंत नयन श्रंगारं ॥
कां मसि धसि कुंमारी । कि नयने नैब अंजंति ॥१४॥
ईस सीस असमानं । सुरसुरी सलिल तिष्ट नित्यानं ॥
पुनि गलती पूजारा । गडुंवा नैव ढालंति ॥१५॥

॥ दूहा ॥

कहां लगि लघुता बरनवों । कविन दास कवि छंद ॥
उन कहि ते जो उब्बर । सो सब कहों करि चंद ॥१६॥
सरस काव्य रचना रचौं । खल जन सुनि न हसंत ॥
जैसे सिंधुर देखि मग । स्वान सुभाव भुसंत ॥१७॥
तौ पनि सुजन निमित्त गुन । रचिये तन मन फूल ॥
जूका भय जिय जानिकैं । क्यों डारिये दुकूल ॥१८॥

॥ साटक ॥

मुक्ताहार बिहार सार सुबुधा, अब्धा बुधा गोपिनी ॥
सेतं चीर सरीर नीर गहिरा, गोरी गिरा जोगिनी ॥
बीनापानी सुबानि जानि दधिजा, हंसा रसा आसिनी ॥
लंबोजा चिहुरार भार जघना, विघ्ना घना नासिनी ॥१९॥
छत्रंजा मद गंध राग रुचयं, अलिभूव आच्छादिता ॥
गुंजाहारा अथार सार गुनजा, झंझा पया भासिता ॥
अग्रेजा श्रुति कुंडलं करि, करस्तुद्दीर उद्दारयं ॥
सोयं पातु गनेस सेस सफलं, पृथ्राज काव्यं कृतं ॥२०॥

॥ गाहा ॥

आसा महीव कब्बी । नव नव कित्तीय संग्रहं ग्रथं ॥
सागर सरिस तरंगी । वोहथ्थयं उक्तियं चलयं ॥२१॥

॥ दूहा ॥

काव्य समुद्र कवि चंद कृत । मुगति समप्पन ग्यान ॥
राजनीति बोहिथ सुफल । पार उतारन यान ॥२२॥
छंद प्रबंध कवित्त जति । साटक गाह दुहत्थ ॥
लहु गुर मंडित खंडियहि । पिंगल अमर भरत्थ ॥२३॥

॥ कवित्त ॥

अति ढंक्यौ न उघार । सलिल जिमि सिष्षि सिवालह ॥
वरन वरन सोभंत । हार चतुरंग विसालह ॥
विमल अमल वानी विसाल । बानी बर ब्रंनन ॥
उक्तिन वयन विनोद । मोद श्रोतन मह हरनन ॥
युत अयुत जुक्ति विचार विधि । वयन छंद छुट्यौ न कह ॥
घटि बढ्ढि मति कोई पढइ । तौ चंद दोस दिज्जो न वह ॥२४॥

॥ श्लोक ॥

उक्ति धर्म विशालस्य । राजनीति नवं रसं ॥
षट् भाषा पुराणं च । कुरानं कथितं मया ॥२५॥

॥ कवित्त ॥

चरन नीम अच्छिर सुरंग । लहु गुरु विधि मंडिय ॥
सुर विकास जारी सु मृष्ष । उक्ति रस गौरव नि छंडिय ॥
जुगति छोह विस्तरिय । सीढियन घाट सु बद्दिय ॥
महि मंडन मेधान । याहि मंडल जस सद्दिय ॥
घन तर्क उतर्क वितर्क जति । चित्र रंग करि अनुसरिय ॥
विश्वकर्म कवि निर्मइय । रसियं सरस उच्चरिय ॥२६॥

॥ अरिल्ल ॥

तर्क वितर्क उतर्क सु जत्तिय । राज सभा सुभ भासन भत्तिय ॥
कवि आदर सादर बुध चाहौ । पढि करि गुन रासौ निर्वाहौ ॥२७॥
धर्म्म अधर्म्म न बुद्धि विचारौ । नयन नारि निय नेह निहारौ ॥
कोक कला कल केलि प्रकासौ । अरथ करो गुन रासौ भासौ ॥२८॥
पारासर जो पुत्त विहासह । सतवंती ग्रम्भं गुर भासह ॥
प्रब्ब अठार सवा लष लष्षै । तौ भारथ गुर तत्त बिसष्षै ॥२९॥

॥ कवित्त ॥

रासौ बर बुद्धि सिद्धि । सुद्धि सो सब्ब प्रमानिय ॥
राजनीति पाइयै । ग्यान पाइयै सु जानिय ॥
उकति जुगति पाइयै । अरथ घटि बढ़ि उनमानिय ॥
या समान गुन आप । देव नर नाग बखानिय ॥
भविछत भूत ब्रतह गुनित । गुन त्रिकाल सरसइय ॥
जो षढय ततरासौ सुगुर । कुमति मति नहिं दरसइय ॥३०॥

॥ दूहा ॥

कुमति मति दरसत तिहिं । विधि बिना न श्रब्बान ॥
तिहिं रासौ जु पवित्र गुन । सरसौ ब्रन्न रसान ॥३१॥

॥ दूहा ॥

सत सहस नष सिष सरस । सकल आदि मुनि दिष्य ॥
घट बढ़ मत कोऊ पढ़ौ । मोहि दूसन न वसिष्य ॥३२॥

॥ गाहा ॥

अरथं ढंकिन सहसा । उघारै वनथ्थि एकलया ॥
मझ्झं मझ्झं प्रमानं । चतुर स्त्री हारयं जेमं ॥३३॥

॥ दूहा ॥

अनगपाल पुत्री उभय । इक दीनी बिजपाल ॥
इन दीनी सोमेस कौं । बीज बवन कलि काल ॥३४॥
एक नाम सुर सुंदरी । अनि वर कमला नाम ॥
दरसन सुर नर दुल्लही । मनों सु कलिका काम ॥३५॥

॥ कवित्त ॥

ज दिन व्याहि सोमेस । त दिन अमरत मन उद्दित ॥
त दिन बीर बेताल । काल कलहागम कुद्दित ॥
त दिन अवनि उमहीय । पुत्र इहि भार उतारै ॥
छत्र तेज छित छज्जि । देव दानव पुंतारै ॥
त दिन सु सार सज्या समह । स्रम अंतर कायर कपे ॥
मानिक्क राह अनगेस घर । पानि ग्रहन ज द्दिन थपे ॥३६॥

॥ कवित्त ॥

कितिक दिवस अंतरह । रहिय आधान रानि उर ॥
दिन दिन कला बढ़ंत । मेघ ज्यों बढ़ंत भद्द धुर ॥
चंद्र कला सित पष्प । जेम बाढ़ंत दिनं दिन ॥
मुगधा जीवन चढ़त । मिलत भरतार षिनंषिन ॥
उद्दित अधान सुभ गातनह । जेम जलधि पुन्निम बढ़हि ॥
हुलसंत हीय जे प्रीय त्रिय । जिम सु जोति जनिता चढ़हि ॥३७॥

॥ दूहा ॥

सोमेसर तोंअर घरनि । अनगपाल पुत्तीय ॥
तिन सु प्रिथ्य गर्भ धरिय । दानव कुल छत्तीय ॥३८॥

॥ कवित्त ॥

प्रथम पुत्र सोमेस । गंधपुर ढूंढ़ा गढ्ढिय ॥
भई सुद्धि गध्रवन । पुहप मंगल दुज पढ्ढिय ॥
अद्ध रैनि अनु जानि । लियौ बालुक सिर सिद्धिय ॥
गयन बयन घन सद्द । युद्ध जीवन जय दिद्धिव ॥
सित सुभट सूर छह सथ्थ चलि । चंद भट्ट कीरति करन ॥
संजोगि जोति तप राषि सत । वरष तीस दसह बरन ॥३९॥

॥ कवित्त ॥

बल तापस तप तपिय । श्राप बीसल सिर धारिय ॥
बरस असी तीन सै । गुंहा ढिल्ली ढिग तारिय ॥
सित अंजर रजनीय । पुरनि गंध्रव पग धारिय ॥
अवतार लियौ प्रिथिराज पहु । ता दिन दान अनंत दिय ॥
कनबज्ज देस गज्जन पटन । किलकिलंत कालंकनिय ॥४०॥

॥ कवित्त ॥

ज दिन जनम प्रिथिराज । षरिग बत्तह कनबज्जह ॥
ज दिन जनम प्रिथिराज । त दिन गज्जन पुर भज्जह ॥
ज दिन जनम प्रिथिराज । त दिन पट्टन वै सद्धिय ॥
ज दिन जनम प्रिथिराज । त दिन मन कालन षद्धिय ॥
ज दिन जनम प्रिथिराज भौ । त दिन भार धर उत्तरिय ॥
बतरीय अस अंसन ब्रह्म । रही जुगे जुग बत्तरिय ॥४१॥

॥ कवित्त ॥

पुहवै अनग नरेस । व्यास जग जोत बुलाइय ॥
लगन लिद्धि अनुजा सुत । नाम चिहु चक्कर चलाइय ॥
पुप्फ पानि धरि धूप । पिथ्य पाइन दो अंसह ॥
कलि अवतार कुलाह । अंसपति पारन कंसह ॥
बहु जुद्ध रुद्ध कलि जुग्ग बर । भ्रित्त सित्त दैतन भिरन ॥
कवि चंद दिली थह कारने । इह अपुव्व अवतार लिन ॥४२॥
पुत्री पुत्र उछाह । दान मानह धन दिद्धिय ॥
धाम धाम गावत धमारि । मनहु अहि मनि लिद्धिय ॥
बनवज जैचंद मात । भयौ सभरि बहनी सुत ॥
तिन पवंत दुज पठिय । थार जर चीर थपित थुत ॥
पहिराइ परीधह दान दुज । किय समाए सब्बन बिवरि ॥
दस दिवस रष्षि अप्पन अवर । अति उछाह आनंद करि ॥४३॥

॥ दूहा ॥

सुनि सोमेस बधाइ दिय । है गै चीर गुराव ॥
अति उछाह अनंद भरि । त्रप मुष चढ्डिय आव ॥४४॥

॥ दूहा ॥

तब बुलाय सोमेस बर । लौहानो अरु चंद ॥
लै आवहुँ अजमेर धर । पहौते घरह सू इंद ॥४५॥

॥ दूहा ॥

करि आनौ उछ्छाह किय । चलिय राज अजमेर ॥
सहज बाजि है सुभर बर । सत्त सषी मनि मेर ॥४६॥

॥ कवित्त ॥

बरष बधै बिय बाल । पिथ्य बद्धै इक मासह ॥
घरी दीह पल पष्प । मास लष्षिय ब्रष तासह ॥
मनिगन कंठला कंठ । मद्धि केहरि नष सोहत ॥
घूघरवारे बिहुर । रुचिर बानी मन मोहत ॥४७॥
केसर सु मंडि सुभ भाल छवि । दसन जोति हीरा हरत ॥
नह तलप इक्क थह षिन रहत । हुलसि हुलसि उठि उठि गिरत ॥४८॥

॥ दूहा ॥

रज रंजित अंजित नयन । घूंठन डोलत भूमि ॥
लेत बलैया मात लषि । भरि कपोल मुष चूमि ॥४९॥

॥ पद्धरी ॥

अगुरिन लग्गि रगि चलत लाल । सर मद्धि उठत गज हंस बाल ॥
मिलि बाल जाल कबि रही केलि । बढि रही द्रंद जनु बीज बेलि ॥५०॥
जनु रमत कमल ऋतु कमल अग्ग । तप तेज बढ्ढि मुष षित्र नग्न ॥
सब देव तेज देषंत अंग । उछार अंग अद्भुत प्रसंग ॥५१॥
सँग बाल बेठि भोजन करंत । परिवार वस्तु लै हठ धरंत ॥
आदर अदब्ब सथ्थीन देत । बगसीस करत पिय परम हेत ॥५२॥
है हथ्थि चढ़त बढ़्ढत अनंद । मन मौज चौज कवि पढ़त छंद ॥
जिन हृदय कमल विद्याह हेत । छल छेद भेद तिन बुद्धि लेत ॥५३॥
पाइक्क संग कायक्क केलि । धरि धूप हथ्थ बाहंत झेलि ॥
गहि बग्ग हथ्थ फेरत तुरंत । नट न्रत्य निपुन धावत कुरंग ॥५४॥
जल केलि करत मिलि सजन संग । अल्लोल कलभ जनु सर तिरंग ॥
पकवांन पांन सूगंध पुर । मादक सुमोद सुष सुषन नूर ॥५५॥
बेलत अषेट संग श्वानडोर । बग्गु बधंत पर गोस कोर ॥
सुष घरिय पहर दिन पष्ष मास । सोमेस सूर चित बढ़त आस ॥५६॥
जिम राम कृष्ण सुख नंद गृह । संभरिय राय तिम दसा देह ॥५७॥

॥ कवित्त ॥

कै दसरथ ग्रह राम । धाम वसुदेव कृष्ण वर ॥
कै कलि कस्यप कूष । जानि उपजज्यौ किरनाकर ॥
कृष्ण ग्रेह कै काम । काम अंगज जनु अनिरुध्ध ॥
नल कस्यप अवतार । किधौं कौमार इश्व रुध्ध ॥
लषिन बतिस बहुतरि कला । बाल बेस पूरन सगुन ॥
क्रीडत गिलोल जब लाल कर । मार जानि चांपक सुमन ॥५८॥

॥ दूहा ॥

छुटत गिलोला हथ्थ तैं । पारत चोट पयल्ल ॥
कमल नयन जनु कांमिनी । करत कटाछ छयल्ल ॥५९॥

॥ दूहा ॥

कोइक दिन गुर राम पैं। पढ़ी सु विद्या अप्प ॥
चवदस् विद्या चतुर वर। लई सीष पट लिप्प ॥६०॥

॥ पद्धरी ॥

लिपि सिष्ष कुँअर प्रिथिराज राज। गुरु द्रोन पास सुत ध्रम्म ताज ॥
ॐ नमो सिद्धि प्रथमं पढाय। सब भाव भेद अष्षर बताय ॥६१॥
दस पंच दिन्न अध्येंन कीन। दस च्यारि सार सब सषी लीन ॥
सीषी सुकला दस अठ्ठ च्यारि। तिन नाम कहत कवि अग्ग सारि ॥६२॥
गुरु गीत बाद बाजित्र नृत्य। सोचक सु वाच्य सविचार घृत्य ॥
मनि मंत्र जंत्र वास्तुक विनोद। नैपथ विलास सुनि तत्त मोद ॥६३॥
साकुन्न कला क्रीडन विसार। चित्रन सु जोग कवि चवत चारु ॥
कुसुमेष कला जुत इन्द्र जाल। सुचि क्रम विहार आहार लाल ॥६४॥
सौभग प्रयोग सूगंध वस्त। पुनरोक्त छंद वेदोक्त हस्त ॥
बानिज्ज विनय भाषित्त देस। आवद्ध जुद्ध निर्जुद्ध सेस ॥६५॥
बरनंत समय हस्ती तुरंग। नारी पुरुष्य पंषी विचंग ॥
भ्रू भू कटाछ सुल्लेष सल्य। वृष छद्म प्रष्ण उत्तर विजल्य ॥६६॥
सुभ सास्त्र कहे गनिकह पढन्न। लिषतव्य चित्र कविता वचन्न ॥
व्याक्रन्न कथा नाटक्क छंद। अविधांन दरस अलंकार बंध ॥६७॥
घातक सु कर्म सुभ अर्थ जानि। सुर सरी कला बहुतरि बषानि ॥६८॥

॥ दूहा ॥

पाघ विराजत सीस पर। जरकस जोति निहाय ॥
मनों मेर के सिषर पर। रह्यो अहप्पति आय ॥६९॥
ता पर तुररा सुभत अति। कहत सोम कवि नाथ ॥
मनु सूरज के सीस पर। धिषन धर्‌यौ धनु हाथ ॥७०॥
श्रवन विराजत स्वाति सुत। करत न बनै बषान ॥
मनु कमल पत्र अग्रज रहै। ओस उडग्गन आन ॥७१॥
कंठ माल मोतीन की। सोभत सोम विसाल ॥
मेरु सिषर पारस फिरत। जानि नछित्रन माल ॥७२॥
मिस भीने स मयंक मुष। निपट बिराजत नूर ॥
मनौ बीर उर काल के। उगे आनि अंकूर ॥७३॥

॥ गाथा ॥

समयं इक निसि चंदं । बाम बत्त वद्दि रस पाई ॥
दिल्ली ईस गुनेयं । कित्ती कहो आदि अंताई ॥७४॥

॥ दूहा ॥

कह्यौ भांमि सौं कंत इम । जो पूछै तत मोहि ॥
कान धरौ रसना सरस । ब्रन्नि दिषाऊं तोहि ॥७५॥

॥ दूहा ॥

सुकी करे सुक संभरौ । कही कथा प्रति प्रान ॥
पृथु भीरा भीमंग पहु । किम हुअ बैर विनान ॥७६॥

॥ कवित्त ॥

कुँअरप्पन प्रथिराज । तपै तेजह सु महावर ॥
सुकल बीज दिन हुतें । कला दिन चढ़त कलाकर ॥
मकर आदि संक्रमन । किरन बाढ़ैं किरनाकर ॥
यो सोमेस कुँआर । जोति छिन छिन अति आगर ॥
हय हथ्थि देत सकै न मन । षल षंडन गढ गिरन बर ॥
चिहु ओर जोर दसहुँ दिसा । कीरति विस्तरि महिय पर ॥७७॥

॥ कवित्त ॥

भोरा भीम भुअंग । तपै गुज्जर धर आगर ॥
है गै दल पायक्क । षग्गबल तेजह सागर ॥
काका सारंगदेव । देव जिम ताम बड़ाइय ॥
तासु पुत्र परताप । सिंध सम सत्त सु भाइय ॥
परतापसीह अरसीह बर । गोकुलदास गोविंद रज ॥
हरसिंघ स्याम भगवान भर । कुल अरेह मुष नीर सज ॥७८॥

॥ दूहा ॥

जोरावर जुरि जङ्गमति । भरे बथ्थ नभ गाज ॥
हुकम स्वामि छुट्टत सु इम । मनौं तितर पर बाज ॥७९॥
तिन पर तुट्टै बीज जौं । जिन पर राज अरुठ्ठ ॥
राजकाज संमुह भरन । दई न कबहु पुठ्ठ ॥८०॥

॥ दूहा ॥

सारंग दे सुरलोक गत। भो प्रतापसी पाट ॥
सात भ्रात सेवा करैं। तपै तेज थिर थाट ॥८१॥

॥ दूहा ॥

भोरा भीम भुआल के। कोई एक मैवास ॥
तिन उज्जारत देस कौं। परि पुकार नृप पास ॥८२॥

॥ गाथा ॥

प्रात समै पूकारं। आई नरिंदं भीम दरबारं ॥
करि नीसान सुघावं। चढि राजं साजि आतुरय ॥८३॥

॥ दूहा ॥

चालुक्कह गुज्जर धरा। ईस नेति किय भीम ॥
मो उम्मैं तिहु पुर सुबर। को चंपै अरि सीम ॥८४॥

॥ छंद पद्धरी ॥

चढ़ि चलन राज आवाज कीन। नीसान नद्द बज्जे बजीन ॥
चिहु ओर भरनि छुट्टै तुरंग। सजि सिलह भांति नाना अभंग ॥८५॥
धम धमकि धरनि धाने सुभंग। गज्जिय अकास कै गहर गंग ॥
भय हूह हाक आतंक जोर। सह सुरन फेरि भेरीन घोर ॥८६॥
उडि रेन सेन मुंदिग अकास। परि रोर सोर जहँ तहँ मवास ॥
धरि रोस मुच्छ मुररंत भीम। रस बीर वक्र संक्रोध हीम ॥८७॥
चंपी सु सीम अरियन सजाम। डेरा सुदीन नृप सरित ताम ॥
जुररा सिकार तीतर बटेर। षेलंत सरित तट भइ अबेर ॥८८॥
इहि समय ताम परतापसीह। लहु वंधु साथ आरसी अबीह ॥
ए हुते सकल बाहुर ते बेर। नय मझ्झ आइ षेलत अबेर ॥८९॥
गजराज नाम साहन सिंगार। सरितान मझ्झ वह पियै वार ॥
सुनि सोर दान छुट्टे छँछार। जनु भूत भांति भय भीत भार ॥९०॥
जमुना कि जग्गि काली करार। सिर धूंनि महावत दियो डार ॥
गज एक वारि पीवंत दूरि। तिन पर सु तुट्टि जमुँ सिंघ चूरि ॥९१॥
धरि पंष पब्ब जनु धप्पि धाय। भुज पर्यो नम्भ बद्दर सुभाय ॥
दिषि दुरद उनहि आवंत आन। धुनि करि सुडारि उन पीलवान ॥९२॥

॥ गाथा ॥

समयं इक निसि चंदं । बाम बत्त वद्दि रस पाई ॥
दिल्ली ईस गुनेयं । कित्ती कहो आदि अंताई ॥७४॥

॥ दूहा ॥

कह्यौ भांमि सौं कंत इम । जो पूछै तत मोहि ॥
कान धरौ रसना सरस । ब्रन्नि दिषाऊं तोहि ॥७५॥

॥ दूहा ॥

सुकी करे सुक संभरौ । कही कथा प्रति प्रान ॥
पृथु भीरा भीमंग पहु । किम हुअ बैर विनान ॥७६॥

॥ कवित्त ॥

कुँअरप्पन प्रथिराज । तपै तेजह सु महावर ॥
सुकल बीज दिन हुतें । कला दिन चढ़त कलाकर ॥
मकर आदि संक्रमन । किरन बाढ़ैं किरनाकर ॥
यो सोमेस कुँआर । जोति छिन छिन अति आगर ॥
हय हथ्थि देत सकै न मन । षल षंडन गढ गिरन बर ॥
चिहु ओर जोर दसहुँ दिसा । कीरति विस्तरि महिय पर ॥७७॥

॥ कवित्त ॥

भोरा भीम भुअंग । तपै गुज्जर ध्रर आगर ॥
है गै दल पायक्क । षग्गबल तेजह सागर ॥
काका सारंगदेव । देव जिम ताम बड़ाइय ॥
तासु पुत्र परताप । सिंध सम सत्त सु भाइय ॥
परतापसीह अरसीह बर । गोकुलदास गोविंद रज ॥
हरसिंघ स्याम भगवान भर । कुल अरेह मुष नीर सज ॥७८॥

॥ दूहा ॥

जोरावर जुरि जङ्गमति । भरे बथ्थ नभ गाज ॥
हुकम स्वामि छुट्टत सु इम । मनौं तितर पर बाज ॥७९॥
तिन पर तुट्टै बीज जौं । जिन पर राज अरुठ्ठ ॥
राजकाज संमुह भरन । दई न कबहू पुठ्ठ ॥८०॥

॥ दूहा ॥

सारंग दे सुरलोक गत । भो प्रतापसी पाट ॥
सात भ्रात सेवा करैं । तपै तेज थिर थाट ॥८१॥

॥ दूहा ॥

भोरा भीम भुआल के । कोई एक मैवास ॥
तिन उज्जारत देस कौं । परि पुकार नृप पास ॥८२॥

॥ गाथा ॥

प्रात समै पूकारं । आई नरिंदं भीम दरबारं ॥
करि नीसान सुघावं । चढि राजं साजि आतुरय ॥८३॥

॥ दूहा ॥

चालुक्कह गुज्जर धरा । ईस नेति किय भीम ॥
मो उम्मैं तिहु पुर सुबर । को चंपै अरि सीम ॥८४॥

॥ छंद पद्धरी ॥

चढ़ि चलन राज आवाज कीन । नीसान नद्द बज्जे बजीन ॥
चिहु ओर भरनि छुट्टै तुरंग । सजि सिलह भांति नाना अभंग ॥८५॥
धम धमकि धरनि धाने सुभंग । गज्जिय अकास कै गहर गंग ॥
भय हूह हाक आतंक जोर । सह सुरन फेरि भेरीन घोर ॥८६॥
उडि रेन सेन मुंदिग अकास । परि रोर सोर जहँ तहँ मवास ॥
धरि रोस मुच्छ मुररंत भीम । रस बीर वक्र संक्रोध ह्रीम ॥८७॥
चंपी सु सीम अरियन सजाम । डेरा सुदीन नृप सरित ताम ॥
जुरडा सिकार तीतर बटेर । षेलंत सरित तट भइ अबेर ॥८८॥
इहि समय ताम परतापसीह । लहु वंधु साथ आरसी अबीह ॥
ए हुते सकल बाहुर ते बेर । नय मझ्झ आइ षेलत अबेर ॥८९॥
गजराज नाम साहन सिंगार । सरितान मझ्झ वह पियै वार ॥
सुनि सोर दान छुट्टे छँछार । जनु भूत भांति भय भीत भार ॥९०॥
जमुना कि जग्गि काली करार । सिर धूंनि महावत दियो डार ॥
गज एक वारि पीवंत दूरि । तिनपर सु तुट्टि जमुँ सिव चूरि ॥९१॥
धरि पंष पब्ब जनु धप्पि धाय । भुज पर्‍यो नम्भ बद्दर सुभाय ॥
दिषि दुरद उनहि आवंत आन । धुनि करि सुडारि उन पीलवान ॥९२॥

धायौ ति समुह साहन सिंगारु । जनु वंध जंम उप्पर अपार ॥
कलपंत पाइ जनु पवन आइ । हल हले पब्ब जित तित बिठाइ ॥९३॥
जम रूप दूअ जनु जंम द्वार । द्वय भ्रात बीच घेरे असार ॥
इक ओर वारि द्रह गहर गूल । इक जोर जोर बर उंच कूल ॥९४॥
परताप संनंमुष पर्यौ जाइ । डारंत अश्व असि कियौ घाई ॥
बहि सीस परन दो हथ करार । षरबूज जांनि बिफर्यौ विफार ॥९५॥
जगनाथ हंडि जनु वंटि दोइ । इह भंति कुंभ कुंभी न होइ ॥
गज पर्यौ धरनि साहन सिंगार । किन्नो अकाम परताप पार ॥९६॥
अरसीह पुठ्ठ जग धस्यौ देष । सन मुष्य क्रम्यौ सम सीह भेष ॥
गज गही दौरि मिर पग्ध सुंड । दिय गुरज चीर द्वय हथ्थि मुंड ॥९७॥
फट्यौति सीस भइ पंच फारि । गज ढर्यौ जानि गिरवर विसार ॥
सुनि बत्त राज भोरा सु भीम । पायौ अनंत दुष आप हीम ॥९८॥
कह वाव कियौ नृप अप्प साम । तुम सोन हमहि चाकरह काम ॥९९॥

॥ दूहा ॥

भा उभय अहंकार करि । हन्यौ सुबर गजराज ॥
दोस हमहि लग्यौ नही । आप हि कीन अकाज ॥१००॥

॥ दूहा ॥

सात भ्रात निज बात सुनि । भए अप्प चलचित्त ॥
पृथीराज सुनि कुँअर ने । आप बुलाये हित्त ॥१०१॥
दिये हथ्थ लिषि गाम पट । रहे वास थिर आनि ॥
चालुक चातुर वीर वर । जिन उंपत मुष पानि ॥१०२॥

॥ सारठी दूहा ॥

सम इक सोम कुमार । सम सामंतन सूर सम ॥
सोभ सीस भुअ भार । सो बैठे सुभ सभा रचि ॥१०३॥

॥ छद मोतीदाम ॥

रची सुभ सोम सभा पृथिराज । विराजित मेरु जिसे भर साज ॥
भुजा सम कन्ह रजे चहुआंन । तिनैं मुछ राजत है मुह पान ॥१०४॥
जिनैं चष चाहि कंपै भर मांन । कंपे जनु मोरन अप्प विवांन ॥
रहै चष वारि सुरातन एम । जवा अन प्रात कियो सक जेम ॥१०५॥

तहां वर चांवंड राइ रजंत । जुधं मधि चांवंड रूप सजंत ॥
नृसिंघ विराजत सिंह जिसौह । विभीषन भाकय मास जिसौह ॥१०६॥
सबे भर ओर उतथ्य सुभंत । तिनं मधि पीथ कुंआर रजंत ॥
मनौं सुकलंपष बीज कौ चंद । तिया रस राजत तारन वृंद ॥१०७॥
प्रतापसि सातउ भ्रात सरीस । प्रथी पति आइ नमाइय सीस ॥
ति सोहत मानुस तं सत मेर । किधौं सत सिंधु सुहंत उजेर ॥१०८॥
सनंमुष कन्ह प्रतापसि आइ । ठई तीन बैठक साल सुभाइ ॥
कहै भर भारथ बत्त स वांन । धर्‌यौ परतापसि मुच्छन पांन ॥१०९॥
लषी चहुआंन सु कंन्ह अपंन । कढी असि तव्व असंष भषंन ॥
दई असि दौरि जनेउ उतारि । इही धर अद्ध उपंम विचारि ॥११०॥
मनों सब नागर साबु कठंत । इही जनु गंठि बिचैं बिच तंत ॥
पर्‌यौ परताप प्रथी पर आप । भई भर मध्य सुजोर अमाप ॥१११॥

॥ दूहा ॥

भई हूह मझ्झह महल । पर्‌यौ भुंमि परताप ॥
हाक वीर बज्जे विषम । अरसी कुप्पौ आप ॥११२॥

॥ कवित्त ॥

भई हूह परताप । पर्‌यौ दिष्यौ अरसी वर ॥
उठ्यौ कढ्ढि तरवारि । दई भुज कन्ह वाम कर ॥
इक्क सीह बर ओर । गैर पष्षर गहि डारी ॥
एक अगनिता मद्धि । आनि कंपी घृत धारी ॥
चहुआन कन्ह अग्गै सुबर । ता पच्छै लोहन दग्यो ॥
जाजुलित सत्त वर वीर मति । बीर बीर रस सौं छग्यो ॥११३॥

॥ दूहा ॥

उठ्ठि कुंवर पृथिराज लषि । गयौ महल निज मद्धि ॥
दै किवाट मिलि थाट जुध । मच्यौ कलह सभ मद्धि ॥११४॥

॥ गाहा ॥

कढ्ढी असि अरसिघं । नरसिंघस्य झारयं सीस ॥
दई गुरज गुर अड्ढं । बड़ गुज्जरं रंभ कंदइं ॥११५॥

॥ चालि ॥

दिषि चावंडं । षिजि चावंडं ॥
लोह चावंडं । मन चावंडं ॥ चावंड ॥११६॥

॥ कवित्त ॥

बढिय जग उत्तंग । जंग जनु दाह जु लग्गय ॥
परिय रौर राव रन । जुरिय जुध कन्ह अभिग्गिय ॥
मारि ढारि अरिसीह । हक्यौ गोयंद मेह गति ॥
कढ्ढि हथ्थ जम दढ्ढ । दई चहुआन कूष घति ॥
करि रोस कन्ह कर चंपि सिर । दो हथ्थन भेजी उडिय ॥
निकसीय प्रान गोविंद उर । जोति भेदि जोतिह मिलिय ॥११७॥

॥ दूहा ॥

कोलाहल दरबार भौ । सुनि चालुक भ्रत सथ्थ ॥
धसित पौरि गज मत्त सम । पुच्छत-पुच्छत कथ्थ ॥११८॥
छिछ रुधिर उठ्ठत गिरिय । परिय सत्र परिधारि ॥
दिषि चालुक भ्रत तेह टग । कुलह बाजि जनु डारि ॥११९॥

॥ कवित्त ॥

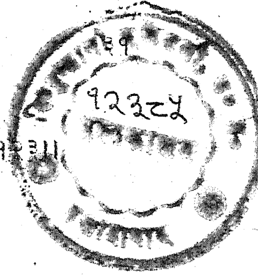
संकर सिंघ कि छुट्टि । झुट्टि इन्द्रह कि गरुअ गज ॥
महिष छुट्टि मय मत्त । भरिय दीयौ किदुष्ट कजि ॥
भौ हास रस रोस । मद्धि रावत्त विरञ्चिय ॥
कोलाहल बल कूक । मज्झ रावर हल मच्चिय ॥
चालुक्क षवास ताकथ्थ कथि । कोलाहल इन जानि घर ॥
छंडिय सयल बोहिथ नृपति । हनिग कन्ह सारंगहर ॥१२०॥

॥ दूहा ॥

भर प्रताप दरबार के । द्वार परे मत मत्त ॥
सुनइ बत्त इह कहि परे । मनु निस तुट्टि नछत्त ॥१२१॥

॥ करषा ॥

सार सिर मार विकरार रक्तन झरत ॥
परत धरनीय ढरैं जरिक जूपी ॥
चक्क चहुवांन चालुक्क भृत उपर चर ॥
कोपियं कंन्ह मनौं काल रूपी ॥१२२॥
रुंड भक रुंयिड कतुंड मुंडन रुरत ॥
बाहि सिर सार मनौं मेह बुद्धैं ॥



कूह करि जूह संमूह को कोक हर ॥
रोस रिम राह जुम जीव छुट्टे ॥१२३॥
पांनि करि पांनि अरि पांनि करनीय हक ॥
सीस अरि पारि सब षेत सीच्यौ ॥
भ्रात सोमेस नृपघात भञ्जन भरम ॥
षेत षयकार षय काल षीज्यौ ॥१२४॥

॥ श्लोक ॥

हनिनं निनायकं सेना । कथितं न च पूर्वयम् ॥
अयुद्धं चक्रतं एषां । बिना स्वामि रणे युधम् ॥१२५॥

॥ दूहा ॥

नीठ विसासत अप्प भर । गह्यो कन्ह चहुआंन ॥
गए ग्रेह लै सकल मिलि । पृथीराज अकुलान ॥१२६॥
पारि भ्रित्त चालुक्क भर । मध अजमेर प्रमान ॥
सात भ्रात भीमह हते । रन जीत्यौ भर कांन ॥१२७॥
वत्त सुनी तब कन्ह नें । षिज्यौ कुँअर प्रथिराज ॥
बेठि रहे तब निज सुधर । ऐ दरबार समाज ॥१२८॥
तीन् दिवस अजमेर में । परी हट्ट हटनार ॥
हूह कोह बज्यौ विषम । लग्यौ सु भूत भुआर ॥१२९॥
मधि बजार चलि रुधिर नदि । रुरत तुंड घन मुंड ॥
बरकि कन्ह चहुआंन करि । तिल तिल समतन तुंड ॥१३०॥

॥ कवित्त ॥

सात दिवस जब गए । कन्ह दरबार न आए ॥
तब पृथिराज कुंआर । अप्प मनए ग्रह जाए ॥
तुम ऐसी क्यों करौ । अप्प सिर चढिय सुकाई ॥
कहिहैं सब चहुआंन । हने चालुक्क सुराई ॥
आए ति विषें अप्पन सुधर । सो रावर ऐसी करिय ॥
इह दोस अप्प लग्यौ खरो । वत्त वित्तरिय जग बुरिय ॥१३१॥

॥ दूहा ॥

कही कन्ह चहुआंन तब । मो बैठे कोइ आनि ॥
सभा मद्धि संभरि अवर । मुच्छ धरै क्यों पानि ॥१३२॥

करी अरज पृथिराज बर। जौ मानौ इक कन्ह ॥
सभा बुराई जौ मिटे। चष बांधि पट्ठ रतंन ॥१३३॥
तब प्रथिराज विचार करि। चष अर्‌यौ हो पट्ट ॥
बहुरि कोइ खर भोरही। धरत परै इह बट्ट ॥१३४॥
मनी बत्त सुसत्य मन। लै जराव को पट्ट ॥
राजन कन्ह चष बंधही। मनौं सिरी गज घट्ट ॥१३५॥

॥ कवित्त ॥

पाव लष्ष परिमान। मोल किंमती ठहराय ॥
तौल टंक इकईस। नयन आकार सवारिय ॥
जरिय जवाहर मद्धि। अरक उद्योत प्रकासिय ॥
दिष्टि मंडि देषंत। दुअन उर अंदर त्रासिय ॥
कंचन किलाव लगाय कल। पट्टी वंधिय चंद भट ॥
तिह्नि वेर चहुआंन चष। रूप प्रगटि अति षित्रि वट ॥१३६॥

॥ दूहा ॥

पाटी वंधिय कन्ह चष। इह ओपम करि अष्षि ॥
तन सरवर जल बीर रस। ओटा बंधि सुरष्षि ॥१३७॥

॥ दूहा ॥

सो पट्टी निस दिन रहै। छोरि देइ द्वै ठाम ॥
कै सिज्या बामा रमत। कै छुट्टत संग्राम ॥१३८॥

॥ दूहा ॥

अति दुख मन्यौं भीम हिय। लिखि कग्गद चहुआंन ॥
सत्त भ्रात मेरे हते। इहै बैर अप्पांन ॥१३९॥
सुनिय राज चहुआंन वर। दिय कग्गद फिरि तेह्न ॥
जब तुम मंगौ बैर वर। तब हम बैर सुदेह ॥१४०॥

॥ कवित्त ॥

बाँचि कग्डद चालुक्क। रोस लग्यौ अयान कह ॥
करौ सेन सब एक। चलो अजमेर देस रह ॥
कह्यौ वीर परधान। मास पावस्स रहें घर ॥
करि कातिप घन कटक। हनैं चहुआंन सोर वर ॥
सुनि राज अप्प मान्यौ सुहिय। छत्तर सब जन अवर नर ॥
उपसम्म रोस चालुक्क नृह। षिन षिन वित्तय जेम थिर ॥१४१॥

॥ दूहा ॥

रहै राज अजमेर महि । संभरेस चहुआंन ॥
निसि दिन यौं क्रीला करै । ज्यौं अवतार सुकान्ह ॥ १४२॥

॥ दूहा ॥

संभरि वै चहुआंन कै, अरु गज्जन वै साह ॥
कहौं आदि किम बैर हुअ, अति उतकंठ कथाह ॥ १४३॥

॥ कवित्त ॥

वंधव साहि सहाव । मीर हुस्सेन बान धर ॥
निज्ज वान सु प्रमान । वान नीसान बधै सुर ॥
गान तान सुज्जान । वाह अज्जान वान वर ॥
भेव राज परवान । उच्च जस थान जुझ्झभर ॥
उद्दार चित्त दातार अति । तेग एक बंदै विसब ॥
संकेत साहि साहाब तिन । तेज अजै जयमंत ग्रब ॥ १४४॥

॥ कवित्त ॥

इष्षि बंधु आचार । मीर उमराव जंपि जस ॥
एक पात्र साहाब । चित्ररेषा सु नाम तस ॥
बीन जान बाजान । गान परमान विचष्षन ॥
बीन जान बाजान । आनि बत्तीसह लच्छन ॥
दस पंच बरष वाचा सुवच । सुप्रसाद साहाब अति ॥
आसिक्क तास हुस्सेन हुअ । प्रीत परसपर प्रान गति ॥ १४५॥

॥ कवित्त ॥

एक सुदिन सुविहांन । साह हुस्सेन सुबुल्गि ॥
वे काफर आस्स उतंग । दह दिसि नह डुल्लिग ॥
पैसंगी पासंग । लष्ष लष्षां नलवाही ॥
सांई सौं संग्राम । हक्कि हैवर गुरदाही ॥
गर्दन गुराव महि महि महि मषां । षां षवास अष्षिय घरह ॥
अन हल्ल नाल लभ्भय रवन । करौं तुच्छ तुझ्झी बरह ॥ १४६॥

॥ दूहा ॥

सुनि अबैन साहाब तब । प्रीत न छंडी बाम ॥
कोपि कह्यो सुरतान तब । हनौ कि छंडौ ग्रांम ॥ १४७॥

॥ कवित्त ॥

सुनिय बत्त हुस्सेन । सेन अप्पन साधारिय ॥
छंडि नयर निस्संक । संक मन साह नसारिय ॥
निसा जाम इक आदि । लई सो पात्र परम गुन ॥
तरुनि पुत्र परिवार । सज्जि सब साज सु अप्पन ॥
परिगह सु अप्प अग्गें करिय । षांन षांन बंधी सिलह ॥
संचर्‌यौ कैर नागौर इह । तजिय देस निज गंठ ग्रह ॥ १४८॥

॥ दूहा ॥

लै परिगह हुस्सेन गय । दिसि प्रिथिराज नरिंद ॥
संभरि वै संभारि कैं । मन आयौ ग्रह दंद ॥ १४९॥

॥ दूहा ॥

भोजन भष्षे विविध वर, बहु आदर विधि कीन ॥
मान महातम रष्षि रज, राज उभय हय दीन ॥ १५०॥

॥ कवित्त ॥

आषेटक चहुआंन । पास हुस्सेन संपतौ ॥
बार आई चहुआंन । भाइ घन ताहि दिषत्तौ ॥
वर कैंथल हांसि हिंसार । राजपट्टौ दै थप्पिय ॥
इह चरित देषि सब दूत तब । छाइ संपते साहि दर ॥
चरवर चरित्त जुग्गिनि पुरह । कहिय वत्त सें मुष्षधर ॥ १५१॥

॥ छंद पद्धरी ॥

संभरिय बत्त साहाबदीन । उच्चरिय बैन अति कोप कीन ॥
मुक्कलौं इत्त चहुआन पास । कट्ठौ हुसैन जो जीव आस ॥ १५२॥
बोल्यौ षांन तातार तब्ब । संजीव षांत उमराव सब्ब ॥
बुच्छी सु बत्त किय इत्त सार । थप्पी सु बत्त पुरसान बार ॥ १५३॥

आरब्ब सेष लीनौ बुलाई। बैब्रद्ध ब्रद्ध बुद्धी सुताइ ॥
बंछै सुपेम सक लेहिं साहि। लज्जी अनंत आदब्ब थाहि ॥१५४॥
उच्चर्‌यौ बैन साहाब भास। आरब्ब जाहु चहुआंन पास ॥
अप्पै जु पात्र हुस्सेन जाम। लै आउ सम्म हुसेन ताम ॥१५५॥
मुक्कों सुगुनह कीनौ पसाव। मैं दीन पच्छ करि षिमा दाव ॥
छंडै न पात्र हुस्सेन ग्रब्ब। चहुआंन मिलै सामंत सब्ब ॥१५६॥
जंपियौ बयन चहुआंन साइ। कढ्‌ढौ हुसेन नागौर थाइ ॥
अज्जीज पांव तुम सच्च उच्च। लिष्यौ सुपत्र हम परम रुच्च ॥१५७॥
कढ्‌ढौ हुसेन तुम देस अंत। बंछौ जो पेम मानौं सुमंत ॥
रष्या हुसेन जो असु परेस। चतुरंग सेन सज्जौं विसेस ॥१५८॥
भंजौं सुनैर नागौर देस। जीवंत बंदि बंधौं नरैस ॥
सामंत सूर सब करौं अंत। बंधौ सुबंध सा तरुनि कंत ॥१५९॥
उच्चरि गुमान तत बत्त थूल। संषेप कहैं मानौं स मूल ॥
तुम जाउ सिघ्र नागौर ठाम। मति करौ एक छिन घरविश्राम॥१६०॥
सैं तीन दीन असवार सथ्थ। आरुहन दीन नर यार रथ्थ ॥
संचर्‌यौ सेख आरब्ब राह। दो पष्ष पत्त नागौर थाह ॥१६१॥

॥ दूहा ॥

गय आरब नागौर दर। मिल्यौ साह हुसेन ॥
भोजन भष्ष सुभाव किय्र। विवध प्रसन्निय बैंन ॥१६२॥

॥ दूहा ॥

कही बत्त हूसेन सम। जो कहि साह साहाब ॥
नह मंनिय सो मंत हिय। दिय आरब्ब जवाब ॥१६३॥

॥ दूहा ॥

गयो सेष आरब्ब दर। लही षबर प्रथिराज ॥
बोलि मझ्झ मंडिय महल। सामंतन सब साज ॥१६४॥

॥ दूहा ॥

उठि गोरी दिन्ने बहुरि। गयौ सु अंदर साह ॥
बहुरि षांन मीरं बरा। अति चंचल तुर ताह ॥१६५॥
तपै साहि गोरी सबर। चित सालै चहुआंन ॥
बैरोचन की साष ज्यौं। कीटी भ्रंग प्रमान ॥१६६॥

॥ अरिल्ल ॥

जग्गत निसि झंषत सुरतानह । घरी सत्त रहि सेष प्रमानह ॥
जगि आयस दिय दीन निसानह । चिता साहि चढ़ी चहुआनह ॥१६७॥

॥ छंद मोतीदाम ॥

भए सुर तीन धुनक निसान । चढ्यौसुजि अश्व सिल्हैसुरतान ॥
चढ़े सब षांन सु उष्मर मीर । सजे सहनाइ बजे रस बीर ॥१६८॥
बजे सब बाज भयानक भाइ । चितै हिय बुद्धि जिनें जन नाइ ॥
चढ्यौ सब सज्जिय सेन गरिष्ट । परी दस दिग्ग सु धूधरि दिष्ट ॥१६९॥
सबद्द सियांन सुसेन कपोत । सनंमुष साहि दिष्यौ दल दोत ॥
भयौ दिसि बामिय कग्ग करार । रुक्यौ दिबिधो मयधूमयगभार ॥१७०॥
सनंमुष देषिय जंबुक सेन । बिरो मिलि चंपहि मग्गहि तेन ॥
क्रमें सस उप्पर गिद्ध असंष । चवै सुर रुद्र पसारिय पंष ॥१७१॥
गही सुरतान सु आरब बग्ग । रहौ दिन आज सगुंन न जग्ग ॥
रहैं कुहु अज्ज ततार सुढिन्न । गही चढ़ि चल्लहु मन्ति सगुन्न ॥१७२॥
कहै सुरतान अहो तुम क्रूर । भयै भय म्रित्यु सु झंषहु नूर ॥
कहा बल जुद्ध कहौ प्रथिराज । कितौबल सामत जुद्धिह साह ॥१७३॥
हनौ रन सूर जिके चहुआंन । गहौं जुध राज सु षंडिय प्रान ॥
कहा डर काफर दाषहु मुझ्झ । कहा भर आवध आगरि जुझ्झ ॥१७४॥
नमंनि चमंकि चढ्यौ सुरतान । टमंकिय गज्जिय नद्द निसान ॥
जलथ्थल होय थलं जल भार । अमग्गह मग्ग चलै गहि लार ॥१७५॥
मिल्यौ इक साहन लष्ष समुंद । समुझ्झिन कंन भयो सुर मुंद ॥
चल्यौ सुरतान मिलान मिलान । बढ़ी अति चिंत दनी चहुआंन ॥१७६॥

॥ दूहा ॥

गयौ साहि चहुआंन घर । दिए मिलान मिलान ॥
गए सुचर नागौर पुर । कही षबरि सुरतान ॥१७७॥

॥ दूहा ॥

देखि चरित नृप साह चर । गए पास सुरतान ॥
कहैं सेन संमुष रजै । चढि आयौ चहुआंन ॥१७८॥

॥ दूहा ॥

सुनि चरित्त साहाब चर । दिय निरघोष निशान ॥
चड्यौ सेन सज्जे सिलह । करिब फौज सुरतान ॥१७९॥

॥ छंद मोतीदांम ॥

चढ्यौसुरतान सुसज्जिय फौज । बजे बर बज्जंन बीर असोज ॥
भयौ गज घुमर घंट निघोर । मनौं झुकि क्रंन्नभयो सुररोर ॥ १८०॥
गजैं गज मद्द मनौं घन भद्द । चिकार फिकार भए सुर रुद्द ॥
तुरंग महींस कडक्क लगांम । खरक्किय पष्षर तोन सुनांत ॥ १८१॥
चमंकत तेज सनाह सनाह । करैं धर पद्धर राह बिराह ॥
झलक्कत टोप सुटोप उतंग । मनौं रज जोति उद्योत बिहंग ॥ १८२॥
दमंकत तेज कमान कमान । चितं चित मीर रही मइमान ॥
भले भर सांइय ध्रंम सगत्ति । लषैं धर जीयन जत्तिन गत्ति ॥ १८३॥
नमें निज सांइय पंछ बषत्त । सिपारह तीस पढ़ै दिन रत्त ॥
नमैं निज सेष धरंम सरंम । क्रमैं रह रीति कुरान करंम ॥ १८४॥
दिढ़ंबर बाचरु काछह मीर । तरुंनिय एक रतें बर बीर ॥
सबद्दय बेध करैं तम तांह । भमंतिय पंषि हनैं छित छांह ॥ १८५॥
धरै इकं एक अनेक सुबान । झलक्कत मुंड तवल्लह मान ॥
धरैं धर नाहिय स्याहिय सीस । सिरक्कहि बंबर धुंमर दीस ॥ १८६॥
अनेक सुबान अनेकह रंग । चढ़े सब मीरह सेन अभंग ॥
अनेक सुवान अनेकय व्रंन । समुझिझन ही समुझिझन क्रंन ॥ १८७॥
पयं भर अग्ग अनेक सुभार । अनेक सुजाति अनेक सुतार ॥
सिरं किय मुंड़िय मुंड सुअद्ध । जुबट्टिय उट्टिय जाति अनद्ध ॥ १८८॥
करं तिय झंड्डिय रंग अनेक । फुरक्कहि झंषहि झंषह तेग ॥
चलेधर बान सुसद्धिय दिठ्ठ । अगें हथ नारि अभूल गरिठ्ठ ॥ १८९॥
अगें किय मद्द सरक्क सुभार । मनौं पय चल्लत पव्बत लार ॥
ढलैं सिर ढाल अनेक सुरंग । फरैं फरहारि उभारिय अंग ॥ १९०॥
बरंनह झंडय मंडय जूब । मनो षट रित्ति अनंगह रूब ॥
भई षूर डंबर अंबर रैंन । जलं थल पद्धरि संक्रमि सेन ॥ १९१॥

॥ अरियल ॥

जगि मंत्री कैमास महा भर । गठिय चित्त चरित्त कहिय बर ॥
जग्गिय सथ्थ सज्ज निस सेनं । गयो राज यह सज्जि द्रग्रेनं ॥ १९२॥

॥ दूहा ॥

चरित लष्ष साहाब चर । गए पास सुरतान ॥
सजी सेन सामंत पति । आयो जोजन थान ॥१९३॥

॥ छंद विअष्षरी ॥

सुनि चरित्त साहाब तासचर । बोलि मीर उमराव महा भर ॥
दिय निरघात घाव नीसानं । चल्यो सेन सज्जै सव्वनं ॥ १९४॥
बाजित्र बीर अंनेक सुबज्जे । धर पहिडाय सुगोमह गज्जे ॥
डग्यौ सर चढ्यौ सुरतानं । बज्जि निहाव नाल गिरि बानं ॥ १९५॥
फौज सुपंज सजो साहाबं । उलट्यो सेन समुद्रह आबं ॥
दच्छिन दिसा सज्जि तत्तारं । दिमि बाई षुरसान सुधारं ॥१९६॥
हाजिय राजिय गाजिय षानं । सनमुष सेन सजी सुरतानं ॥
मीर जमांम षांन कंमानं । महबति मीर पुठ्ठि सजि तामं ॥ १९७॥
षान मरुस्तम रुस्तम षांनं । मद्धि फौज रज्जे सुरतानं ॥
सहते वीस वीस सजि भौजं । तुंबा पंच रचे अहहौजं ॥ १९८॥
चिहुपष्षां गज घुमहि डंमर । हथ्थ नारि गिरि बांन असंबर ॥
रिन रंन तूर घोर नीसानं । भेरी श्रृंग गरुड धन थानं ॥ १९९॥
नफ्फेरी त्रिय बिध सुर डंड । जोंमष पट्ट बजे घन दंडं ॥
आवत झुझ्झ डहक्क डहक्किय । है बर हींस दरक्क गहक्किय ॥ २००॥
गज चिक्कार फिकार सवद्द । तंदुल तबल मृदंग रबद्द ॥
जंगी वीर गंडीर अनेक । बाजित्र अनेक गने को बेगं ॥ २०१॥
फौज पंच साजी साहाबं । मीर अनेक गने को नावं ॥
देस देस मिलि भाष अनंतं । कवियन नाम अनेक गनंतं ॥ २०२॥
फौज पंच सजि चल्यौ जु साहं । गज्जैं धरनि गैंन पुर गाहं ॥
सारुंडै सज्ज्यो दिसि वामं । पद्धर सद्धर उत्तिम ठामं ॥ २०३॥

॥ दूहा ॥

उत्तिम पंथरु पुठ्ठि जल । तष्षी जीय सुथान ॥
सारुंडो दिसि वांम दै । सजि ठाढौ सुरतान ॥ २०४॥
उड्डि रेन डंबर अमर । दिष्यौ सेन चहुआंन ॥
सुनिग क्रंन वाजित्र हक । सजे सीस असमान ॥ २०५॥

इंछिनी-विवाह प्रसंग

॥ दूहा ॥

जंपि सुकी सुक पेम करि। आदि अंत जो वत्त॥
इंच्छिनि पिथ्थह व्याह विधि। सुष्ष सुनंते गत्त॥ १॥

॥ कवित्त ॥

तपै तेज चहुआंन। भागन दिल्ली इच्छा बर॥
बीर रूप उप्पज्यौ। पन्न रष्षै जुग्गन भर॥
आबू वै अनभंग। जंग षंगौ षल दारुन॥
जोग भोग षग मग्ग। नीर षित्री अवधारन॥
कित्ती अनंत सलषेज भुअ। धुअ प्रमान पन रष्षई॥
चब बरन सरन भुजदंड भर। दल दुज्जन भिर भष्षई॥ २॥

॥ दूहा ॥

जैत पुत्र सलषेज लघु। इंच्छिनि नाम कुमारि॥
बर मंदोदरी सुंदरी। बियन रूप उनिहार॥३॥

॥ गाथा ॥

सो अप्पी बर भट्टं। रुद्रं बर माल थानयं भेबं॥
सिद्धं सिद्ध सुपुत्रं। नामं जास भीमयं रायं॥ ४॥

॥ कवित्त ॥

अनहलंपुर आभ्रंन। राज भोरा भीमंदे॥
देसां गुज्जर षंड। डंड दरिया से वंदे॥
सेन सबल चतुरंग। बीर बीरा रस तुंगं॥
अति उतंग अनभंग। बियन पुज्जै बल जंगं॥
कलि काल कित्ति मित्ति इतिय। पलटि प्रीति क्रत जुग करन॥
भोरा नरिंद भीमंग बल। उभै दीन तक्कै सरन॥ ५॥

॥ कवित्त ॥

जद्दोंरा पारक्क । सर्व सोढा पज्जाई ॥
बीरा बंभन वास । ठाम ठठ्ठा छड्डाई ॥
माही माल्हन हंस । पालि आबू धर लग्गा ॥
आगेंही सलषान । दइ मंदोदरि सग्गा ॥
आचंभ रूप इंच्छिनि सुनी । जन जन बृत्त बषानियाँ ॥
भोरा अभंग लग्यौ रहसि । काम करक्कै प्रानियाँ ॥६॥

॥ कवित्त ॥

तिन प्रधान पट्ठाइय । लिष्षि आबू दिसि रायं ॥
तुय बड्डे घर बड़े । बानि बड्डे चित्त चायं ॥
सँध सगप्पन सध्यौ । चूरि चालुक परिहारां ॥
पज्जाई दो बार । बाल बांरू रूकारां ॥
नग हेम मुत्ति मानिक्क घन । कहि न जाइ लष्षा लिषां ॥
इंच्छिनि सुचित्त चहुआंन बर । तौ आबू गिरि सर भषां ॥७॥

॥ दूहा ॥

कै इंच्छिनि परनाय मुहि । रष्षि सगप्पन संधि ॥
जौ चित्तै चहुआंन कों । गढ़ ते नष्षौं बंधि ॥८॥

॥ कवित्त ॥

जै अब्बू वै भार । लाज अब्बू गज रष्यौ ॥
मान प्रमान समदान । अंग कवितन कवि सष्यौ ॥
डोलौ लंमन होइ । घाइ बज्जै रस भीरं ॥
सलष सुतन पामार । समद लज्जा मुष नीरं ॥
मिलिमंत तंत इक्कसुकरन । करक क्रस स सगुनं सुबर ॥
संवरन मंत मंतह रवन । भान दान दिष्ये सुबर ॥९॥

॥ दूहा ॥

इम कहि जैत सुतात सम । गढ वपु रष्षौ सच्छ ॥
हम तुम जाइ सुराज पै । लै आवैं बर पच्छ ॥१०॥

॥ कवित्त ॥

गय सलषानी राव । बीर अग्गर गढ रष्षै ॥
बर आ की लाज । षेम क्रंनह सिर भष्षै ॥

बंधो रान धरंनि । बीर पामर सर सष्षी ॥
प्रजा पुलंत नरेस । ग्राम षट्टू दिसि रष्षी ॥
वर मूक्कि वीर धारह धनीय । हथ्थराज परवान लिषि ॥
सोमेस पुत्र प्रथिराज कों । दै इंछिनि सगपन सुबिषि ॥११॥

॥ कवित्त ॥

वर उद्धरन नरिंद । षेम क्रंनह गढ माहिय ॥
जोग मग्ग लभ्भियन । षग्ग मग्गह मुति पाइय ॥
बहुत सिद्धि साधन सुमांडि । आरंभ विचरिय ॥
मुक्कि त्रिगुन गुन गहै । छिमा सद्धै क्रमनारिय ॥
हल परत भूमि पंचह सुधर । पहिलै मोधर चंपिहै ॥
गोइंद परै बड़ गुज्जरैं । आबू आनि सुजंपिहै ॥१२॥

॥ दूहा ॥

चालुक्का चहुँआन सौं । बंधे तोरन माल ॥
ते कविचन्द प्रकासिया । जे हूँदे दल हाल ॥१३॥

॥ दूहा ॥

सुनि कग्गर नृपराज प्रथु । भौ आनन्द सुभाइ ॥
मानौं बल्ली सूकते । बीरा रस जल पाइ ॥१४॥

॥ कवित्त ॥

पंच हस्ति सत बाजि । द्रव्य दीनो सत पंचं ॥
धरमत्ती मेवात । दिवो हिंसार सुषंचं ॥
तेग एक षुरसानि । इक्क माला गुन दानं ॥
आदर संजुत बोल । मुक्कि मंत्री अगिवानं ॥
संभाग राज सोमेस सुअ । सलष राज कीनौ गवन ॥
सुनि बात राय भोरंग हिय । मानौं घाव दीनौ लवन ॥१५॥

॥ दूहा ॥

करि जुहार भीमंग सौं । चल्यो जैत कुँआर ॥
षेमकरन षंगार कौं । दे सिर उप्पर भार ॥१६॥

॥ दूहा ॥

गढ साह्यौ सुनि भीम ने । कन्यावर प्रथिराज ॥
बोल मंत्री सज्जन कह्यौ । दहूँ बाजएँ बाज ॥१७॥

॥ छंद पद्धरी ॥

जं बात सुनिय सलेषज बीर । परि तत्त तेल जनु बूँद नीर ॥
प्रजरंत रोस चालुक्क भान । धर धरगि धरा षल संक मात ॥१८॥
बंधू समेत पाताल मेत । जमराज षून को करे हेत ॥
डंकिनी पास पीठी मिडाइ । को तिरै समुद बिन हथ्थ पाइ ॥१९॥
को हथ्थ सिंघ पुच्छी जगाइ । को लेइ नाग मनि सीस लाइ ॥
को काल ग्रेह गहै षंचि हथ्थ । घालै जु कौन तत अग्नि बथ्थ ॥२०॥
रष्षै सु कौन चालुक्क षूंन । संभर्यौ कौन त्रैलोक हून ॥
मैं सुन्यौ क्रंन जुग्गिन पुरेस । परमार रष्षि अपमध्य देस ॥२१॥
ज्यौ पियौ कृष्ण दावानसेल । त्यौं पिंड गढ्ढ आबूअ देश ॥
गढ़ चढ़ै मान मन धरिग भार । सम करौं जारि संसार सार ॥२२॥
मुक्कले दूत ढिल्लीय थान । रष्षै न सरन ज्यौं चाहुआंन ॥२३॥

॥ कवित्त ॥

जपि भोरा भीमंग । अंग कंप्पै रस बीरह ॥
विषम झार उद्धार । बारि बोरें अरि नीरह ॥
दिसि दिसान कग्गर । प्रमान पट्टे पट्टनवै ॥
बारिधि बंदर सिंधु । बाज सोरठ ठट्टनवै ॥
कच्छे न जथ्थ जद्दव जहर । सेन इक्क भए आनि भर ॥
चालुक्क राइ चालंत दल । अम्मर घुम्मर घुमर बर ॥२४॥

॥ कवित्त ॥

वर गिरनार नरेस । कियो साहस चालुक्की ॥
लोहानौ कट्ठीर । सेन बंधे भुअलुक्की ॥
आबू उप्पर कूच । बीर भीमंदे दिज्जै ॥
वर निसान सुर गज्ज । गच्छि जै जै अरि पिज्जै ॥
सहनाइ नफेरिय बीर बजि । सिंधुअ राग सु आदरी ॥
पंमार भीम पूज सहर । बजी कूह गुन गद्दरी ॥२५॥

॥ छंद भुजंगप्रयात ॥

धरा धूरि पूरं । सिरं सेन नेतं । षहं षंड षंडं । उडी रेन रेतं ॥
मदं गंध भौरं । लगे झौर भारं । मनौ कज्जलं कूट । कलषंठ थारं ॥२६॥

ढलं ढाल ढालैं चलै त्रंन श्रंनं। मनौं केलि पंचं रगंचा सुब्रंनं ॥
चलें चौंर चावद्दिसं बात पत्तं । मनौं भौरयं भौर वासंत मत्तं ॥२७॥
नवं नद्द नीसान बज्जं अवातं। गजै गैन कै सिघ कै गिग्गिरातं ॥
नव नद्द नफ्फेरि भेरी सभालं। तरक्कंत तेगं मनौ बिज्जु नालं ॥२८॥
करक्के नरं षाल षग्गं षनक्कै । मनौं काल हृथ्थं सुविज्जू झलक्कै ॥
जलं बेथलं बेथलें तथ्य नीरं। मनौं नंषियं बान रघुनाथ बीरं ॥२९॥
जलं वेत षुट्टी बनं वेत तुट्टी । थलं वेत छट्टी फनं वेत उट्टी ॥
धरं रेन उड्डी सुलग्गै अभानं। दलं वेत वढ्ढी पयानं पयानं ॥३०॥
करी आनि सेना सुआबू गिरद्दं । मनौं पारसं चंद आभा सरद्दं ॥
कवी बीय ओपंम चित्तं बिचारी । उरंहूव माला सिवं ज्यौ अधारी ॥३१॥
चिहूं कोर डेरा कहूँ पीत सेतं। मनौ ग्रीषमं अंत उट्ठि मेघ मेतं ॥३२॥

॥ गाथा ॥

आभा सरदं प्रमानं। सेनं सज चालुकं बीरं ॥
छिति छत्तीयं छत्तं। जनु बद्दलं छटि संकरं मेघं ॥३३॥

॥ छंद भुजंगी ॥

मिले सेन पंमार चालुक्क एतं। कुहू रैन जुट्टै मनौं प्रेत हेतं ॥
झरं सीस तुट्टैं बिछट्टैं बिहारं। करैं गल्ल ग्रजैं पिसाचं चिहारं ॥३४॥
तरक्कंत घायं परैं पाइं कच्छी। मनौं नीर मुक्कैं तरफ्फंत सच्छी ॥
कियौ जुहरं जालि बाला नितत्थैं । चढ़्यौ राउ भोरा सिरैं अब्बु मत्थै ॥३५॥
चषं चच्चरंची सुरच्ची झनक्कै । बज्यौं जानि घरियार संझ्या ठनक्कै ॥
रुधिरधार षारं भई भूमि रत्ती । रमैं जानि बासत निस्संक छत्ती ॥३६॥

॥ कवित्त ॥

परे झुझ्झि रन वीर। मरन ज्यौं जानि जम्म बर ॥
पुत्र मित्र सज्जन सुलच्छि। टरे काल काल कर ॥
धरी लच्छि धर धर्‌यो। धारि उद्धार पमारं ॥
सह परिगह छह पुत्त। तुट्टि धाराधर धारं ॥
ध्रुअधाइ भीम लीनौ सुगढ। सुकल पच्छ पुंनिम सुदिन ॥
जयदंद वत्त चालुक्क सुनि। नभ लग्यौ सलषान तन ॥३७॥

॥ दूहा ॥

एक मास दिन पंच रहि। गढ़ मुक्यौ तिन बार ॥
पट्टनबै पट्टन गयौं। अब्बु सबै अर भार ॥३८॥

॥ भुजंगी ॥

थपी थान थानं सुअब्बू प्रमानं । गवौ राज पट्टंसु पट्टं निधानं ॥
दियं कग्गदं साहि सुरतानगोरी । करौं भेद बत्तं बधौंपिथ्थ जोरी ॥३९॥
धप्यौसाहिगौरी सुसारुण्ड आवै । हमं सब्बसेनं पसौकित्ति धावै ॥
दऊं गढ्ढह अब्बू रुजंबू निधानं । हनौसाहिचौहामकरि षग्गपानं॥४०॥
तहां मुक्कल्यो बीरमकवानराजं । लिषेकग्गदं चालुकं राजकाजं ॥४१॥

॥ दूहा ॥

पूत परिग्गह बंधु सह । मैं मुक्कलि स्रग लोग ॥
एकै इंच्छिनि कारनह । मति सलषानि अजोग ॥४२॥

॥गाथा॥

मम मनरंजन भंजौ । सजौं सेनाइं संभरी देसं ॥
जो मिलई सुरतानं । भंजौं राज दिल्लियं पानं ॥४३॥

॥ कुंडिलया ॥

कग्गर गुरिय सहाबदिस । भरि लिषि भोरा राइ ॥
तुम धरि संभरि उत गाहौ । हम नागौर निहाइ ॥
हम नागौर निहाइ । बंधि संभर गिरि अब्बू ॥
जो मिलंत मुहि आइ । देउं घन अंबर दब्बू ॥
पहु पारक पटनेर । सीम भष्षर ही अग्गर ॥
गुज्जरवै गरु अत्त । लिषे गोरी दिस कग्गर ॥४४॥

॥ कवित्त ॥

चाहुआंन सामंत । मंत कैमास उपाइय ॥
बंदि लग्न हुँकार । बंध बंधान उचाइय ॥
दस गुनां बल देषि । साजि साधन सु सुगंधह ॥
दुहु मुष्षांही लग्गि । बीच चंप्पौ सुभ्रदंगह ॥
गोरीय एक गुज्जर धनी । मुष विचित्र धनी संभरी ॥
हज्जार दून द्वादस भरह । दो मिलग्गि दुहु दिसि बुरी ॥४५॥

॥ कवित्त ॥

सारुंडै साहाब । दीन सुरतान विलग्गा ॥
सोझत्ती भर भीम । रात लष्षह असदग्गा ॥

नागौरें सामंत ईस । चहुआंन पिथाई ।।
अस पति गुज्जर पती । जानि मिरदंग बजाई ।।
दो बीछ हजारी अट्ठ चव । ग्रेहा मंत परठ्ठयौ ।।
चामंड राइ कैमास सम । षीची षग्ग बरठ्ठयौ ।।४६।।

।। छंद भुजंगी ।।

बँटी फौज दूनौ चढ़ै चाहुआंनं । भरं स्वामि दूनों भरे चित्त बानं ।।
तिनंकी उपंगा कबी चंद पढ़ढै । मनौकर्कअरुमक्रनिसिदोहबढ्ढै ।।४७।।
दुई इक्क मन्नै उमन्नै नसाई । करी संभरी भ्रत्य दूनो दुहाई ।।
भ्रितं मुष्ष उंच दिपै चाहुआंन । मनौं डंमरी बाल उग्गो बिभानं ।।४८।।
फिरै उंच तेजं तुरं गंति ताजी । जिनै देषतै नैन गत्यैं न लाजी ।।
षचै बाग उट्ठे चुटक्के हरेवं । मनौ मंडियं मौज केकी परेवं ।।४९।।
पहू पाइ मंडं तनं चित्त इंषी । मनौं कज्जलं कूट धाँवै धरत्ती ।।५०।।
षिनं उप्परं ढाल नेजे सुरंगं । तिनं ओपमां चंद चिती सुचंगं ।।
जरे पाटनारी बिचें हेम गुंथे । मनौं षज्जुरी केलि जुग मेर मंथे ।।५१।।
ठनक्कंत घंटाचलै अंग मोरैं । मरौं कूलटाछैलचितचालिचोरैं ।।
झमैं दंत दंतो सुनेनं बिराजै । मनौंविज्ज लत्तानभं मध्य छाजै ।।५२।।
मुषं सूर सूरं सुमुच्छी ब्रिराजै । तिनं चंद बीजं गतं देषि लाजै ।।
पटे वीय पासं उपमा सुकब्बी । मनौं राह वीयं रनं चंपि रब्बी ।।५३।।
सजे आवधं सूर छत्तीस डब्बे । मनौं राह रूपं ससी कोटि दब्बै ।।
करीसेन गोनं मिलानं दवानं । बढ़ी वेय बाजू सरित्ता किजानं ।।५४।।
गह्यौ मुष्षगौरी प्रथीराज राजं । मनौंराहअरुभांनमिलिजुद्धसाजं।।
मुषंरोकि सुर्तान का चाहुआंनं । उते रोकि कैमास भोरा मुहानं ।।५५।।

।। दूहा ।।

षीची षग्ग पट्ठरि बर । वर भीमँग चालुक्क ।।
तिहूँ दिसीतिहूँ बर धाइया । ज्यौं पच्छिमी आरक्क ।।५६।।

।। कवित्त ।।

मिले मल्ल आलंग । जंग भोरा भुअंग जगि ।।
कै कुलाह कंतार । धारा डंडूर पूर लगि ।।
है हुलाह छुट्या कि । सिंध मेंगल मैं मत्ता ।।
कै अप्पां अप सेन । राव रावत्त विरत्ता ।।

आवृत्ति अन उत्तर दिसा । ईसानै लग्गिय लहरि ।।
धावंत धाम सामंत सों । सूर समर लग्गे समरि ।।५७।।
चंडिय देवि पसाइ । हस्ति तोरै मैमत्ते ।।
चड्यौ राव भीसंग । चौर मौरह सिलहंते ।।
कै अप्पानी रारि । काह वाम कि डंडूरिय ।।
कै छुट्टा संग्राम । सिंध संकर निज्जूरिय ।।
कै वीर धांम धुज्जिय धरा । कै कलाल कलपंत हुअ ।।
जा जंपि जंपि जंपन कहै । जपै राज भीमंग भुअ ।।५८।।
नां अप्पानी रारि । नाहि वाइ सुडंडूरिय ।।
नां छुट्टा संग्रांम । सिंह संकर निज्जूरिय ।।
है हक्कां धर कंप । चंप उत्तर भी लग्गिय ।।
चौकी गस्त गुराइ । कोट कोटन इत भग्गिय ।।
सा द्रुग्ग देव सत्तरि पती । पति पहार ठेल्यो करिय ।।
आहंन हंन हंतेव हठ । निमि निसान सद्दह भरिय ।।५९।।

।। दूहा ।।

सद्दां सद्द उसद्द भय । बज्जा बज्जिय लग्ग ।।
जूना जंजर हैर बल । भई सुरासुर जग्ग ।।६०।।
संभरि सों लग्गे समर । अंमर कौतिग एव ।।
घरी सत्त सत्तमि दिवस । उग्यौ उडग्गन देव ।।६१।।

।। भुजंगप्रयात ।।

घरी सत्त सतं उग्गौ चं मानं । बरं वीर चालुक्क षग्गं षगांनं ।।
बजी जूह कूहं कलं कोकनद्दं । मनों गज्जियं मेघ नद्दं प्रसद्दं ।।
कुलं वीर जग्गे मुषं नीर भारी । परे लोह आवृत्त सा व्रत सारी ।।
बहै षग्ग धारं गजं सीस भारी । मनों धूम मझ्झे उठे अग्गि झारी।।
तमी तेज भग्गे जगे तेज षग्गं । बजै जंग नीसांन ईसांन मग्गं ।।
करै अप्प अप्पं नृपं त्रे दुहाई । नचे रंग भैरूँ ततथ्थेन घाई ।।
बहै बांन आव्रत सावर्त्त तेजं । तहां चंद कब्बी उपंमां कहेजं।।
लगें अंग अरिगंजिसुग्रीव भारी । फिरंतं ज जंगंम दीसै उतारी ।।
परें संध बंधं निनारै । मरोरंत चौरं मनों मूर बारे ।।
फिरं मद्धिढालं रिनं मंझ रीती । तिनं मुक्किय कुत्तवारी निब्रत्ती ।।६२।।

॥ कवित्त ॥

है गै पग अरथ। बढ़ि बढ़ि नर लग्गा ॥
कै धायां धन नंत। भयें भंभरि भर भग्गा ॥
चालुक्कां चंप्यो सयंत्र। सें दल सामंता ॥
गोरीरद कैमास। भूप भोरा धावंता ॥
रथ सत्थ सिलह् सज्जनकह्यौ। गह्कि गज्जि भोरा सुभर ॥
को करै काल सो चाल क्रत। महन रंभ मानों अमर ॥६३॥

हक्कार्‌य रा भीम। मत्त में गल गल गज्जानां ॥
सहस पंच साहन समंद। ढालै ढल्लानां ॥
जंत्र मंत्र गोला गहक्क। छौनी सब संकिय ॥
साहन वहन वर विरद्द। आव्रत उत्तंकिय ॥
लल्लरिय लोह अप्पां अपन। झर उझार लग्यौ गयन ॥
हल हले सेन सामंत दल। मनो अंत जम जुथ्थ पन ॥६४॥

ना छुट्टा रासिंघ। डांम डडूरन उठ्यौ ॥
ना हंकाया आप। सेन भारथ्थ न जुट्यौ ॥
सा मंतांरी हाक। धाक उत्तर दिसि लग्गी ॥
अप्पांनी सेना सुमंत। भारत फिर भग्गी ॥
सन्नाह राय सज्जी सुकसि। विघ्न-विधान लग्गिय अमर ॥
चालुक्क राइ चित धूमरी। सार सार लग्गी समर ॥६५॥

महन रंभ आरंभ। जग्गि भोरा सनाह सजि ॥
तब लगि दल रुक्कयौ। राज कंठीर कन्ह रजि ॥
भर अभंग चालुक्क। रोस आकास प्रमानं ॥
हाला हल तंमस्यौ। तमसि तामस तम भानं ॥
चैनेत जगि प्रलैकाल जनु। बंधि बंधि गज्जे उभय ॥
बंभांन जग्य जे उप्पने। करों सोइ निर्वीर मय ॥६६॥

षग उभारि दल रारि। तारि कढ्ढन दुज्जनवै ॥
औडन हंथह नंषि। धंषि भ्रत चाल्लुक नरवै ॥
कढि कबंध धर लुट्टि। लुथ्थि पर लुथ्थि अहुट्टिय ॥
श्रोन धार षलहलिय। मोह माया भ्रम छुट्टिय ॥

तुटि अंत दंत पाइक ढुरहि। बहर रूप धावै अछग ॥
पग पगति सिभ पग पग मुगति। भुगति लम्भ कित्ती सुजग ॥६७॥

॥ दूहा ॥

कित्ती सजन लग्यौ नृपति। सुर विध्वंसन काल ॥
बीस सहज पारस परिय। मनौं बीर बर माल ॥ ६८॥

॥ छन्द मोतीदाम ॥

समग्ग अमग्ग विमग्ग बिसाल। रहे जुरि चालुक देवन साल ॥
जुरै बर बीर दसों दिसि पंति। मनों धन भद्दव वर्त्तन भंति ॥
दोऊ दिसि घाव बढ़े करि साज। मनों चव चंग गुलंगन बाज ॥
परे बहु दंतिय भंतिय काल। वरै वर ढूंढि बिवांनन बाल ॥
मनों मुगधा मांन प्रमांन। रही इम अच्छरि रंछ विमान॥
सुदेव जयं जय नंषि पुहप्प। करैं दोउ चंद सुकीरति जप्प ॥
इकै श्रइ कीरति अमृत एक। कछूक कवित्त सुधार विसेक ॥
सुर च्छिनंत नहि वीर बलांन। बढ़े बर बांन कमां मय थांन ॥
भ्रमंतिय गिद्धिव रुद्धिय भांन। रही इछ अच्छिर अच्छ विमांन॥६९॥

॥ कवित्त ॥

सहस पंच दस सेन। अलप अहुआंन संघातिय ॥
बाल पोस प्रत्यंग। सस्त्र सत्रंग निघातिय ॥
चमर तबल टंकार। हंक हंकार हकारिय ॥
लोह छक्क धर धक्क। कंक अनसंक वकारिक ॥
सहत तीस सह सेन मिलि। गिलन मेछ जज्जे गहर ॥
तिन संग बीर बैताल चढि। पढ़त मंत बढ्ढे कहर ॥७०॥

॥ कवित्त ॥

सजि धायौ चहुआंन। साइ सारुंड सु संभरि ॥
उत जित्यौ चालुक्क। रत्ति रति वाह सुझमरि ॥
धनि सुभाग प्रथिराज। बीरा भोरा विड्डारयौ ॥
धनि अनंत कलहंत। सेन सामंतन झारयौ ॥
लग्गयौ षग्ग उड़ि हथ्थ तें। त्रिया नयन मत्ता मयन ॥
गाहंत गहन दुज्जन दलन। सुबर सूर सज्जिय सयन ॥७१॥

॥ छंद भुजंगी ॥

पर्‌यौधाइसुरतांन सुविहांन गोरी। चंपेचाइ चहुआंनगौपंच डोरी ॥
षिमयो वंक सूरं सलष्षं पवारं। त्रपं सार टट्टी किसारं किवारं ॥७२॥
षिझ्यौ कन्न ककं झंडा मड्डिगाढौ। मनोंराष्षसीसेन में कप्पिठाढौ ॥
गहै दंत दंतीय भुज्जं उषारै। धराकढ्ढि मूला मनोमार्‌डारै ॥७३॥
दुवं वीर हक्कैं महावीर सद्दं। भये रंग रत्तं मनों लल्ल हद्दं ॥
लगै सस्त्र अन संष हथ्थीन टारै। मनोंकोपियं भीमपाहार फारै ॥७४॥
तुटै टोप टूकं सुउड्डंत दीसैं। मनों चंद तारा नषै हथ्थ रीसैं ॥
लगी नाग मुष्षी गजं सीस भारी। मनोंद्वार रुघे षिरक्की उघारी ॥७५॥
हुले सेल सालें बरं वीर दीसं। मनों सिद्धतारी लगी सीस ईस ॥
परं तेन दीसं बरं वीर कोई। लगें घारधारा रजी रज्ज होई ॥७६॥
पर्‌यौ राउ रघुवंस बरसिंघ जोरं। जिनैं मुत्ति लम्भीबरं बीर भोरं ॥
बजें धार धारं गर्जं सीस तेगं। नचें जांनि बीजं घनं मध्य वेगं ॥७७॥
लगै कुहुक वांनं गजं जोर सीसं। उठे छिछ इच्छं गिरं ऊक दीसं ॥
भरं सुंड रत्तं सहं अंग डोरं। श्रवें वद्दली मेघ गेरून धारं ॥७८॥
घुमें मुक्क सीसं भटं लोह छक्कै। उभै जांनि भूतं महा मंत्र हक्कै ॥
फिरें रूंड विन मुंडरस रोस राचे। मनों भग्गरंनट्ट विद्या कि नाचै ॥७९॥
परै अश्व हुंतं सिरं जोर सूरं। तुठें पुष्परी हट्ट ह्वै झूर झूरं ॥
लगै गुर्ज सीसं भजी भांति छुड्डें। मनों भंषन दद्धि मथांन उड्डें ॥८०॥
हुऐ छीन छीनं छरी मार छक्कै। झरं रत्त डोरी महा मल्ल हक्कै ॥
भिरैसस्त्र बिन बथ्य भर भीर भीमं। परैं लोथि जूथं बिन जीव हीमं ॥८१॥
लरंतं जदीसै परं तेन कोई। लगे षग्गं षग्गं श्रमे मल्ल होई ॥
तुटें दंत दंती की रच्चा निनारें। मनों कज्जल कूट तें चंद झारें ॥८२॥
दोउ क्रन्न हस्ती चुवै रुद्धि भारी। मनों कूट तें ऊतरै भूमि रारी ॥
बहै वांन कंमान मिटि थांन थांनं। तहां पंति पषीय पावै न जानं ॥८३॥
उते षांन गोरी इते सिंव राई। मनों वीय सिंधं पलं काज धाई ॥
चंपे गिद्ध मंसं उडै रुद्धि छुट्टै। मनों रत्त धारा नभं मेघ बुट्टै ॥८४॥
मुर्‌योसाहि गोरी महावीर धीरं। तसव्वी तिनष्षी लिए षिझ्झ तीरं ॥
धरी ध्यारज्यों चच्चरं षग्ग संध्यौ। षछै साहि गोरी सु चौहांन रुध्यौं ॥८५॥

॥ अरिल्ल ॥

जित्यौ वे जित्या चौहानं । भग्गा सेन सन्या सुरतानं ॥
तेरह षांन परे परमानं । सारुंडै तोर्‌यौ तुरकांनं ॥छं०॥८६॥

॥ कवित्त ॥

साह डंड डंड्यौ । मेह मंड्यौ नागोरिय ॥
भट्टिय रा भटनेर । राव सिंघातन तोरिय ॥
जा रानी जग हृथ्थ । मंडि मंडोवर पासह ॥
जै जै जै जै प्रथिराज । देव सद्देति अकासह ॥
आरज्ज लज्ज सुरतांन कहि । फिरि मिलांन दीनौं पुरां ॥
जो सत्य कत्थ कैमास किय । चालुक्कां सोझति धरां ॥८७॥

॥ दूहा ॥

सुकी सरस सुक उच्चरिय । प्रेम सहित आनन्द ॥
चालुक्कां सोझति सध्यौ । सारुंडै में चंद ॥८८॥

इंछिनी ब्याह कथा

॥ दूहा ॥

कहै सुकी सुक संभलौ। नींद न आवै मोहि ॥
रयनि रबांनिय चंद करि। कथ एक पूछौं तोहि ॥१॥
सुकी सरिस सुक उच्चर्‌यौ। धर्‌यौ नारि सिर चित्त ॥
सयन संजोगिय संभरै। मन में मंडय हित्त ॥२॥
धन लद्धौ चालुक संध्यौ। बंध्यो षेत षुरसांन ॥
इंछनि व्याही इच्छ करि। कहों सुनहि दै कांन ॥३॥
मुक्कि साह पहिराइ करि। दंड दियौ सलषांनि ॥
लगन पठाइय विप्र करि। वर व्याहन पिथ्थांन ॥४॥
पठयो प्रोहित भांन कर। कनक पत्र लिखि लग्न ॥
श्रीफल बहुल रत्तन जरि। पिष्षि होत जिहि मग्न ॥५॥

॥ कवित्त ॥

अब्बूवै अब्बू समप्पि। सीम बंधी दह गुन्निय ॥
पावारी इंछनिय। ब्याह सोधन वर मन्निय ॥
लच्छि ग्रेह कूबेर। अंत ग्रीषम दिन धारी ॥
परनि राज प्रथिराज। तथ्थ श्रीफल अधिकारी ॥
नर नाग देव गंधर्व गुन। गांन जांन मोहें सकल ॥
अछै उतंग लच्छन सहज। थांन नंधि बंधी बिकल ॥६॥

॥ दूहा ॥

प्रथु पूछत बंभननि सुनि। कहौ बाल किन बेस ॥
कितक रूप गुन अग्गरी। सुनन मोहि अंदेस ॥७॥

॥ साटक ॥

बाले तन्वय मुग्ध मध्यत इमं स्वपनाय बै संधयं ॥
मुग्धे मध्यम स्यांम बांमति इमं मध्याह्न छाया पगं ॥
बालप्पन तन मध्य जीवन इमं सरसी अवग्गी जलं ॥
अंगं मद्धि सुनीर जे मल ससी सुभ्भै सुसैसव इमं ॥८॥

॥ कवित्त ॥

अति सुरङ्ग वय स्यांम। संधि वय संधि जुरिय बर ॥
ज्यों दंपति हथ लेव। पंथ जोगिंद मिलत गुर ॥
नयन मयन आरुहिन। धर्‍यौ आरुहन थांन दिन ॥
कछु कज्जल अकुरिये। करिन आवें पें लज्ज मन ॥
ज्यों करकादि निसा मकरादि दिन। करक आदि सैसव सुगुर ॥
मकरादि बाल जोवन जदिन। काम धुरा लीनी सुधुर ॥९॥

॥ दूहा ॥

स्यांम सु बांम अनंगभय। घटी न घट्टि किसोर ॥
बालप्पन बैवेस तन। मनों भरें घन चोर ॥१०॥

॥ कवित्त ॥

षट हथ्थी बहु हेम। रतन गुर पाट पटंबर ॥
पीत रत्त गुन सेत। स्यांम नग सुन गति अंबरं ॥
सों मंगी चालुक्क। सोई दीनी प्रथिराजं ॥
मनु इंद वध्रू सच्चीव। कांम बंधी चढि पाजं ॥
बर बरनि राज सैंभर धनी। सुफल बंधि फल संग्रहिय ॥
इछनि अवाज आवाज क्रम। अदिन भंजि के दिन सजिय ॥११॥

॥ साटक ॥

नां पतनी नल राज राजम वधू दमयंति नो इद्रयं ॥
नां सच्चीव सुनाथ नायक धर लच्छीन धरया धरं ॥
नां रत्ती बनमथ्थ रत्ति कलवा मंदोदरी रवानं ॥
सोयं सा प्रथिराज इंछिनि बरं समयौ न लभ्भै कवीं ॥ १२ ॥

॥ दूहा ॥

तिहि सुंदरि ब्याहन नृपति। रिति ग्रीषम दिन संधि ॥
चढ्यौ सूर संभरि धनिय। सुष संचन षल बंधि ॥ १३ ॥
धर अंबर तर जलधि बल। कहुँ न सूर तप सीत ॥
अगम पंय नर धरनि सुष। बिलसत दंपति मीत ॥ १४ ॥

॥ साटक ॥

पंथं दुस्तर वाय मुकलित सरं ज्वाला इला दुस्सहा ॥
क्रीलायां धन क्रयन यांइ सुथनं निर्जीव शब्दं धसा ॥

आवर्त्त वरतत्त मित्त करनी धूमाय विदिसा दिसा ।।
सरनं मरनय षंथ ग्रीषम पथं सुष्षं सुष्षं ग्रहं प्राणिनां ।।१५।।

।। दूहा ।।

प्रानी पंथ न सुष्ष जल । मरन सुनिश्चय मांन ।
दीह उदय दिसि मुदय भय । सुरति स्वयंवर ठांनि ।।१६।।

।। कवित्त ।।

सथ्थ कन्ह चहुआंन । सथ्थि निड्डुर रषि राजं ।।
सथ्थ सोम सामंत । अल्ह पल्हन प्रति साजं ।।
बलिय गरुअ गहिलौत । बलिय भोंहा बर सिंघ नर ।।
दाहिम्मो कैमास सथ्थ । सौ चावंडा गुर ।।
मति भद्र मंत साधन सकल । लौहांनौ स्वांमित घुर ।।
चतुरंग सूर वय रूप गुन । लिए राज राजन गुर ।।१७।।

।। छंद पद्धरी ।।

चढि चल्यो राज प्रथिराज राज । रति भवन गवन मनमथ्थ साज ।।
सिर पहुप पटल बहुसा षवास । अवलंब रहिय अलि सुर सुरास ।।
मुष सोभ जलज कंद्रप किसोर । दीजै सु आज त्रप कोंन जोर ।।
चिति काम बार रजि अंग और । संकर्‍यो जान मनमथ्थ जोर ।।
जिमि जिमति लाज अरु चढ़त दीह । लज्जा सुजांनि संकलिय सीह ।।
जिमि जिमति सुनंत त्रप श्रवन बत्त । तिम तिम हुअंत रस काम रत्त ।।
मधुर मधुर वेन मधुरी कुंआरि । रति रच्चिय जानि सै सब सवारि ।।१८।।

।। श्लोक ।।

साय दीपसमो दिष्टे । जैति जैति बिजै जित्तं ।।
देवासुर मनुष्यानां । काले केक न गच्छति ।।१९।।

।। कवित्त ।।

कोंन काल बसि पर्‍यो । काल ग्रह कोन न बंध्यो ।।
कोंन काल जित्तयो । काल किहि षाइ न रुंध्यो ।।
मठ बिहार वापीन । बिरष सुर थावर जंगम ।।
सुबर राज राजिंद । कौन दिष्षौ न अभंगम ।।
ज्यां बंध्यौ साहि गोरी सुबर । मरन तिनं कति नंतयौ ।।
इंछनिय इच्छ इच्छा सुफल । सुबर बीर बीरह जयौ ।।२०।।

॥ साटक ॥

बीरं जा बर बीर भीमति बरं कामं तनं उष्षया ॥
पंथे वानति वानि मानति वरं कुरनंद केवं कुरू ॥
धाता मानय वीर वामन बलि पूरोरवा भर्थयं ॥
तू पत्नी प्रथिराज कालति रहं कालं बर्तते ॥२१॥

॥ कवित्त ।

सुनि आवत चहुआंन । करिय अग्यौन सलष वर ॥
हय गय लच्छि सुअच्छि । आदि उम्महिय राज दर ॥
पट अंबर रुजराव । जेव नंगन जगमग्गिय ॥
फुल्लिय मानहु संझि । चित्त चकचोंधिय लग्गिय ॥
चहुआंन रत्त तोरन समय । लगन गोधूरक संधयौ ॥
जानै कि अर्क राका दिवस । इक्क थांन उगि रुंधयौ ॥२२॥
जिम सावन भादव सिंधु । घुमरि घन घटा मिलन हुअ ॥
जनु समुद्र अरु गंग । उमडि मिलि दुहुँन थोभ हुअ ॥
जनु सुर अरु सुक्र । सिगि रिषि गननि गगन मिलि ॥
जनु दधि मथि सुर असुर । करन मधुपांन षिभिर ठिलि ॥
तिम संभरेस अव्बू धनी । अनी बनी रस बिरस भरि ॥
नग जोति जरकज दीप दुति । नहीं श्रवन बाजंव करि ॥२३॥
पंच हस्ति मद वहि गिरंद । गरजंत मेघ जनु ॥
तुरी बीस ऐराक । तेज तन अगिन, पवन मनु ॥
जर कंमर जंनेउ । हथ्थ संकर नग मंडित ॥
सत्त सुषम पर काल । हेम तं- तन तन छंडित ॥
वारोठि विवहवस्तहू समझि । सह चक्रत पिष्षत रहिय ॥
विवहार विबुध जोतिग गिनत । सलष कित्ति जात न कहिय ॥२४॥

॥ दूहा ॥

तोरन कर वर वंद तह । मुत्तिय अच्छितडारि ॥
मनों चंद त्रियभेष धरि । अच्छित अच्छ उछार ॥२५॥

॥ साटक ॥

वंदे विंद कलस्स तोरन थरं तुंगे रसं मन्मथं ॥
सुष्षं साजति सक्र चक्रति कला निग्राहु नु ग्राहनी ॥

जां निज्जे त्रैलोक उम्भति पुरे बंदे कवी उप्पमे ॥
दुअ पासं दुअ नारि दिष्षत बरं मनो नैर वर दिष्षयं ॥२६॥

॥ कवित्त ॥

नृपति काज अलि दिषहि । अलिन दिष्षत नर नारिय ॥
जनु मिलत राज प्रथिराज । नयर बिय बांह पसारिय ॥
जनु वन्ही गुर देव । सत्ति स्वाहा हाहा हुअ ॥
जै जै जै उच्चार । राज रवनी रंजत रुअ ॥
पमार सलष वंदत बलिय । दिष्षि कला मनमथ्थ पिय ॥
दिष्ष सुत्रिया दुरि दुरि नयन । मनहु तरंग कि काम तिय ॥२७॥

॥ छंद पद्धरी ॥

चित काम वीर रज्जियं ओर । संकुर्यौ जांनि मथ्थ जोर ॥
दुरि दिषें बाल झीनेति वस्त्र । उपमान चंद जंपंत तत्र ॥
जाने कि जार परि मध्य मीन । पुज्जै कि दीप भोडल प्रवीन ॥
इक करन पलटि इक करन लंत । घुंघट्ट बदल लज्जा सुभंत ॥२८॥
धुंमलिय रेंन जनु बदल जोट । उझकंत चन्द जनु आंनि कोट ॥
कर उंच बाल अच्छित उछारि । जनु कमल वाइ बसि ओस झारि ॥
गावंत गान बहु विधि सवारि । कलयंठ कंठ जनु रति धमारि ॥
मुसकंत हास दिखियै विसाल । विकसंत कमल जनु चंद ताल ॥
तनु ऐंठि मेंठि भोंहै कि बाल । मूरछ्यौ मैन जग वही ब्याल ॥२६॥

॥ दूहा ॥

कलस बंदि सुभगा सिरह । महुरि मद्धि सय मेलि ॥
बहुरि सुहाग सुहागिनी । वई कांम रस बेलि ॥३०॥
कनक थार आरति उदित । सुभग सुवासिनि लाइ ॥
जनु कि जोति तम हर पहर । नव ग्रह करति बधाइ ॥३१॥
महुर पंच सै थार धरि । दुति दूलह जिय जांनि ॥
काम कसाए लोइननि । हन्यौ मदन सर तांनि ॥३२॥
सषिन ओट सलषह घरह । दूलह दुति दृग देषि ॥
कोटि काम छवि पिष्ष पिथ । जनम सफल करि लेषि ॥३३॥
महल झुंड महलनि बहुरि । जनवासह जुरि जांनि ॥
सोभि साह सामंत सह । जनु विटन शनि भांनि ॥३४॥

॥ छंद पद्धरी ॥

बहुरी बरात जनवास थांन । छबि सोभ सुवन भुवभंति भांन ॥
संग सुभट थाट सामंत सूर । बलवंत मंत दिखियै करूर ॥
अंग अंग अंग उल्लास हास । जनु लच्छि लाह सोभा प्रकाश ॥
सत षन अबास साखा सुरंग । सुभथांन जैत आबू दुरंग ॥३५॥
जालीन गोष सोभा न पार । रवि सोम क्रंति क्रनन प्रसार ॥
पंच रंग ब्रंन चित्रत सुवेश । बहु गरथ रूप मंडित जुदेश ॥
रेसंम गिलम दुल्लीच मंडि । तिन जोति होति दुति चित्र षंडि ॥३६॥
द्वादसह सेज बिछाय षंचि । निन ढिग्ग मूढ़ गादीय संचि ॥
प्रति सेज सेज फूलन अमार । तिन सोभ गंध रंग रंग पार ॥
इकं लाष पांन बीरा बनाइ । घनसार मद्धि बीरन लगाइ ॥
कुम कुमन कुंभ जहं तहं छुटंत । वातोन अगर धूपन लुटंत ॥३७॥
कर्द्दमन जष्ष मचि कीच भूमि । नाना सुरंग रहि गंध धूमि ॥
मस्साल दीप प्रज्जरि फुलेल । केतकी करन वेली गुलेल ॥
ऊड़त कपूर पवनं पषांनि । तिन सरस गंधि सक्किन बषांन ॥
सूरंत क्रंति सोभा बिसाल । सोभंत जुरे तहं श्रव भुआल ॥३८॥
प्रथिराज कुंअर कुअरन नरिंद । धरि भूप रूप अवतार इंद ॥
मन कांम रूप रति भ्रमन चित्त । अश्विनिकुमार ससि सोभ मित्त ॥
नग कनक मंडि वासन विचित्र । ससि सूर सोभ सुभ सज्जि छत्र ॥
वर विप्प अप्प गज गाह धारि । जनु सोम उभय आरति उतारि ॥३९॥
आसंन अस्स प्रथिराज आइ । तहां पंच सबद बाजे बजाइ ॥
सङ्ग एक कुंअर जल पान धारि । ड्यौढ़ी न रूकि सामंत भार ॥
गुर राम चंद कवि डिग्ग आइ । परधान कन्ह काइथ अताइ ॥
पुनि कंन्ह काक गोइंद राइ । परिपुर्न क्रोध जे लगत लाइ ॥४०॥
पूंडीर धीर पावस्स संग । दाहिम दूव जम जोर जंग ॥
जैतसी सलष लष्षनह सिंघ । छिति छत्र ध्रंम जे इष्षि रंघ ॥
बलिभद्र सिंघ कूरंभ राइ । अनि नाम सूर कित्तक गिनाइ ॥
प्रथिराज इंद दिकपाल सूर । अंग-अंग बद्दि सब जोति नूर ॥४१॥

॥ दूहा ॥

गवष जाल महलनि महव । फिरे चारु मन सर्व ॥
सोंज सो अंतक लही । दिज्षत भग्गत गर्व ॥४२॥

महलिन सालनि महल मंडि । दासी सालनि गांन ।।
मंडप मंडित वेद धुनि । सुभटन सोभ संमान ।।४३।।
जहां तहां आनन्द उमग । अनँग उछाह अनंत ।।
बंस छत्तीस छत्तीन छह । भाट विरद्द भनंत ।।४४।।

।। छन्द मोतीदांम ।।

गहने नग जोतिन हीरन लाल । पटं भर पूर झरप्पिय झाल ।।
मनि मांनिक मौतिन हीरनि हार। भगीरथ भंत हिमग्गिरि धार ।।
रितं रित भूषन भांति अनेक । धरे धन पंतिय आनि धनेक ।।
रँग रंग वारनि वारनि बार । धरे नवला नष भूषन भार ।।
तिते सब संचि सवारिस ओप । झलंमल झालन ढालन नोप ।।
सकुंकम कूएन वंदिन पोति । सुहाग सुमंगल अष्ट न होत ।।४५।।

।। दूहा ।।

अष्ट मंगलिक अष्ट सिध । नवनिध रत्न अपार ।।
पाटंबर अंमर बसन । दिवस न सुझ्झहि तार ।।४६।।
फिरिय चार करि फिरिय सब। भोजन कारन बोलि ।।
भाव भगति आद्दर अमित । देव पूजि सम तोलि ।।४७।।
जनवासें पधराइ वर । बरी सिंगार अरंभ ।।
जुरि जुब्वन सुर सुन्दरी । जे रस जांनत डिंभ ।।४८।।

।। छन्द त्रोटक ।।

बिन बिस्तर अंग सुरंग रसी । सुहलै जनुस मदंन कसी ।।
लव लोनइ लोइ उबट्टनकौं । कि बस्यौं मनु कांम सुपट्टन कौं ।।
द्रिग फुल्लिय कांम विरांमन कें । उघरै मकरंद उदै दिन कें ।।
बिन कंचुकि अंग सुरंग षरी । सुकली जनु चंपक हेम भरी ।।४९।।
सुभई लट चंचल नीर भरी । तिनकी उपमा कवि दिब्य धरी ।।
तिन सों लगि कें जल बूँद ढरै । सुछटै मनु तारक राह करे ।।
जु कछू उपमा उपजी दुसरी । मनोंमाटय स्यांम सुमुत्ति धरी ।।
अति चंचल ह्वै बिछुटैं मुषतें । मनो राह सभी सिसुता बषतें ।।५०।।
सुमनो सति स्वात असुत्त इयं । तिनकी उपमा बरनी न हियं ।।
कबहूँ गहि सुक्त सिषंड बरें । मनों नंषत केसन सिंदु सरें ।।
जु सितं सित नील लिलाट धसैं । सुमनों भिदि सोमहि गंग लसैं ।।

जल में भिजि भूंह कला दुसरी । सु लरैं मनु बाल अलीन षरी ॥
बुधि चित्त उपंम कितीक कहौ । जिन पाट अमै ब्रत वेद लहौ ॥५१॥

॥ दूहा ॥

मयति मत्ता अस्नान करि । सुभ दंपति दिन सोधि ॥
चाहुआंन इंछनि बरन । मयन रीति श्रवरोधि ॥५२॥
करि मंजन अंगोछि तन । धूप बासि बहु अंग ॥
मनों देह जनु नेह फुलि । हेम मोज जन गंग ॥५३॥
तन चंपक कुंदन मनों । कैं केसर रंग जुक्ति ॥
पीय बास छबि छीन लिय । और छीन सब जुक्ति ॥५४॥
अंग अंग आनंद उमगि । उफनत बेंनन मांझ ॥
सषी सोभ सब बसि भई । मनों कि फूली सांझ ॥५५॥
निरषत नागिन बसि भई । किवर जष्ष कितेक ॥
सब सोभा ससि सांनि कै । सांची इंछिन एक ॥५६॥
प्राग माघ अस्नान किय । गज गंजे घन घाइ ॥
विश्वनाथ सेए सदा । पृथीराज तो पाइ ॥५७॥

॥ कवित्त ॥

कमल भाल जनु बाल । मकर कर मंडि इंछिनिय ॥
निरषि नैंन प्रतिबिंब । करहि निवछार निंछिनिय ॥
प्रमुदित अगनि अनंग । कोक कूकन उच्चारत ॥
एक रमन रस रंग । बात बातन मुच्चारत ॥
गंधअर वस्त्र गहनैं करनि । हास भास मंडीर रिय ॥
तिन मध्य पवारी पिष्षियै । जनु विधिना अप्पन घरिय ॥५८॥
श्रवननि लगत कटाच्छ । जनु पवन दीपक अंदोलति ॥
मुसकनि विकसित फूल । मधुर बरसति मुष बोलति ॥
इठलति अलसति लसति । सुरति सागर उद्धारति ॥
रति रंभा गिरिजादि । पिष्षि ता तन मन हारति ॥
तिह अंग अंग छवि उक्ति बहु । छंद बंध चंदहु कहिय ॥
जीरंग जुग्ग महि अजर इह । कलू एक कीरति रहिय ॥५९॥
कमल विमल लज्जा सुगंध । बिस माल लाल उर ॥
भूषन सोभ सुभंत । मनों सिंगार सुचिर धर ॥

भूषन सोभ सुभंत। मनों सिंगार सुचिर धर ॥
अलप जलप रति मंद। चंद बारुनि कुल तारुनि ॥
सो इंछिनि पामार। राज लद्धिय अतिसारनि ॥
सत च्यारि बरष बरनि सुंदरिय। सुर बिसाल गावत गरज ॥
चाहुआंन सुअन सोमेस कहिं। विधि सगपन साईं अरज ॥६०॥

॥ छंद मोतीदाम ॥

सजे षट दून अभूषन बाल। मनों रति माल विसालति लाल ॥
धर्‌यौ तन वस्त्र सुकोर कुआँरि। मंडी जनु मिभ मनंमथरारि ॥६१॥

॥ छंद कंठाभूषना ॥

इक गावही रस सरस रस भरि विमल सुन्दर राजही ॥
मनों ब्रंद उडगन राति राका सोम पंति बिराजही ॥
इस त्रित्त रंगन कांम अंगन अजस लज्ज कि सुन्दरी ॥
मनों दीप दीपक माल बालय राज राजन उच्चरी ॥६२॥
सुभ सरल बांनिय मधुर ठांनिय चित्त भंजय जोगयं ॥
द्रिग निरषि निरषि कटाच्छ लग्गहि जुक्त रंभन भोगयं ॥
अलि रूप नयनं मनहु बयनं चलिहि तिष्षि कटाष्षयं ॥
छुट्टंत निकरहि वार पारह करत तकि तनतच्छयं ॥६३॥

॥ कवित्त ॥

विधि विवाह दुल करिय। करिय तन अंग बाम जन ॥
निरषि नयन मुष कंति। भयौ रोमंच स्रब्ब तन ॥
फुलिग नयन मुष वयन। भयौ आरूढ़ कांम मन ॥
चित्त बसीकरन समह भयौ। भयौ आनंद स्रब्ब तन ॥
अभिलाष मिलन हित हिलत मन। का कविंद कवितह करै ॥
प्रथमह समागम मिलन को। बहुत अडंबर बिस्तरै ॥६४॥

॥ दूहा ॥

सोधा सुगंध घन डंमरी। सुमन सुदिष्ट पसार ॥
धूप अडंमर धुंधरिय। झल मल जल समढार ॥६५॥

॥ छंद पद्धरी ॥

बरबग्ग मग्ग चिहुँदिसा दिष्षि। जहाँ तहाँति सुमन अति बठि पिष्षि ॥
कच मग्ग भूमि चिहुकोद गस्सि। नारिंग सुमन दारिम बिगस्सि ॥

प्रतिबिंब तास दिष्षिय सरूप । उप्पंम एम जम्पै अनूप ।।
नव बधू अंग नवजल प्रवेस । मुसकंत दंत दिष्षिय सुदेस ।।६६।।
प्रतिबिंब चंप देषे फुलीन । दीपक्क माल मनमथ्थ दीन ।।
उप्पंम और उर एक लग्गि । संजीव मूरि जनु जोति जग्गि ।।
हूल हूलै लता कछु मंद वाय । नव वधू केलि भय कंप पाय ।।
उपमां उर कव्वि कहीय तांम । जुब्बन तरंग अंगि अंगि काम ।।६७।।
पाटीन दिष्षि चकचौंधि होइ । ससि परह उठ्ठि गन घटा दोइ ।।
सुभ भाग सरल सूधी सुबानि । ससि क्रन्न चील घन छेकिजांनि ।।
फुल्ले सुगंध के वरनि फूल । देषंत बग्ग पावस्स फूल ।।
घन वर अनंद अग्गें निसब्ब । जनु रंक इच्छ पासै सुदब्ब ।।६८।।
नल नलनि नीरु चहब चनि उद्धि । धर धार गंग जनु उठि बिरुद्धि ।।
बिट बिटनि बेलि झुलि बेल फूलि । जनु काम बागतर छत्र झूलि ।।
कदलीन पत्र हूलि पवन जोर । जनु करत पाषा नृपपिथ्थ ओर ।।
कलरव करंत दुजनेक थांन । संगीत काम चटसार गांन ।।
निरतंत केक केकीन संग । पावसह जानि गिर रमत रंग ।।६९।।

।। दूहा ।।

नंदन वन बैकुंठ जनु । इंद्र लोक सुर बाग ।।
वृंदावन भूगोल जनु । सोभा सुभग सुभाग ।।७०।।

।। गाहा ।।

तिहि थानं रजि राजं । उतरियं बीर सा साजं ।।
सब संबल वित्थानं । जांनं बुद्धाइं बीजयौ चंदं ।।७१।।

।। कवित्त ।।

को इंद्री गुर राज । भांन सत्तम अधिकारी ।।
भांन नवम पृथीराज । राह अष्टम अधिकारी ।।
बर वज्जी नीसांन । बंदि लीनं नृप राजं ।।
प्रीय त्रिया हित बंधि । सोई इंछिनि बर पाजं ।।
त्रियांह तात अरु बाल सह । उच्चरें मुष इंछिनि सुनहि ।।
धनिधन्नि गवरिपूज लह्यौ । सुघर सुवर सुन्दर समहि ।।७२।।
ब्रह्म वेद सद्धइय । अग्नि होतय बर राजय ।।
स्वाहा अगनि विवाह । रत्ति कामह गुन गाजय ।।
दुहित नाम दुह्न रिष्षि । दुहुति परहं दंहं गोती ।।

राजं गुरु उच्चरै । सलष चहुआंन सकोती ।।
अंनेक भाव दिष्षहि सुदिव । दिव दिवांन दुंदुभि बजइ ।।
प्रथिराज राज राजन सुबर । तिहित लषे रतिपति लजइ ।।७३।।
कुंदन ओपति अंग । मंग जनु चंद किरनि सिर ।।
बैंनी सुभग भुजंग । फूल मनि सीस मीस थिर ।।
पट्टिय घुंटित मेंन । तिमिर कज्जल छबि छीनिय ।।
भुअजुग गोस धनुष्ष । बदन राका रुचि भीनिय ।।
सुक नास नेंत फूले कमल । कंबु कंठ कोकिल कलक ।।
दुल्लह सुचित्त फंदन मनहु । फंद मंडि रष्षिय अलक ।।७४।।

।। दूहा ।।

फुनि पंडित मंडप मंड़िय । वेद पाठ आधार ।।
षट करमी सरमी अनिध । गुर संग्रह गुर भार ।।७५।।
तिन दूलह मंडप बुलिय । हुम सत घमस निसांन ।।
जनु बद्दल ब्रज क्रिस्न पर । सुरपति बहुरि रिसांन ।।७६।।
देषि सोभ प्रथिराज त्रिय । बारत राई नोंन ।।
हर्ष हास मुष चष उदित । जनु कमल बिकस रवि भोंन ।।७७।।

।। दूहा ।।

देसन देस नरेस । भेस अमरेस अमर भति ।।
सील सत्त गुनवंत । दांन षग कहन कोन मति ।।
जरकस पसम जराउ । गंध रस सरस अमीवर ।।
तेजवंत उद्दार । बडम विवाहर ग्रंथ भर ।।
मंडप्प जांन दुअ दिसि मिलत । हास तर्क जात न गन्यौ ।।
दीपति नगनि निसि दीह भय । वर दाई दिव वर मन्यौ ।।७८।।

।। कवित्त ।।

साल अटा जालिन गवष । रिष्षत नव रनिवास ।।
छत्र छाह छवि करत जित । भ्रमर मत्त रस वास ।।७९।।
नग मोती गहने अगन । गिरत न सुद्धि सम्हार ।।
काम लहरि छवि छोल उठि । दुति दरियाव वेपार ।।८०।।
मंगल गावत झंमकनि । कोकिल कंठी नारि ।।
सुघर पुरुष जोवन छके । सुनहि सुहाई गारि ।।८१।।

पटां बैठि गंठि गुह। पूजै प्रथम गनेस ॥
दुव कुल वारि विचार कर। व्याही बांम नरेस ॥८२॥
ग्रहन पूजि ग्रहदेव पुजि। पूजि अगनि दुज देव ॥
साषोचार उच्चार धुनि। प्रसन भए नृप बेव ॥८३॥
चंद सूर तहां साषि दिय। बन्ह बारुन बुध वाइ ॥
प्रोहित गुर उपदेस करि। बांम अंग तब आइ ॥८४॥
पढि संकलप विकलप तजि। भजि भगवति भगवंत ॥
तम सु पाइ परसाद करि। चिर जिऔ इंछिन कंत ॥८५॥
अब्बूपति पट गांठि त्रिय। विनय जोर कर कीन ॥
इह कन्या नृप सोम सुत। दासपंन पन दीन ॥८६॥
कही कन्ह तव जैत सम। मंडन संभरि ग्रेह ॥
ज्यों गवरी सिव लच्छि प्रभु। त्यौ तन बाढौ नेह ॥८७॥
लगन साधि आराधि नृप। पुनि ज्यौनारि जिवाइ ॥
छःरस अन अंतन लहौ। क्यों कवि कहै बनाइ ॥८८॥
अगनि पक्व घृत पवन कर। दूध पक्व बेपार ॥
तेल पक्व लषियै नहीं। जहं तहं लूटअ मार ॥८९॥

॥ छंद भुजंगी ॥

रहस्यं रहस्य अनेकंत भंती। धनं जोति मिष्टांन पानं प्रभंती ॥
उडंदं पुडंदं दंति मासं। किते ब्रंन प्रंनं किते बीर भासं ॥
किते स्वाद स्वादं प्रथी देव बछै। तहां केवलं ब्रंनि आवर्त्त गंछै ॥
मरे एक वारं त्रितं षंड मद्धी। दिषे स्वाद राजं चलै देव बंधी ॥९०॥
धनं अंमरं डंमरं दिसि प्रमानं। उठै जत्र तीनों सुगंधं निधानं ॥
अंग अंग अंगं सलप्पत नारी। महा लालचै कंम बसु भौ निनारी ॥
हथ लेव राज सुदंपत्ति बंधे। मनों मिस्स अंगें गुरं जित्त संधे ॥
बधें अंचलं संचलं इन प्रकारं। मनों बंधियै मौन मनमथ्थ धारं ॥९१॥
लियौ हथ्थ राजं त्रिया हथ्थ सोहै। मनों पैसि सत पत्र कंमोद सोहै ॥
जनं अंग अबं बरं मालधारी। मनों काम अग्गं जुविद्या पसारी ॥
छितं छित्त राजै नरं नाह नारी। मनों जीवनं कांम लज्जी उघारी ॥९२॥
परं पुब्ब कथ्थं कथै कब्बि चंदं। रही लजि मनों रत्ति फिरि दहन हद्दं ॥
दियै तिलक दद्धि अछि अछत्त सारे। मनों उग्गि अंकूर सुष सेन भारे ॥
दिषै कंकनं हथ्थ चहुआंन राजै। मनों रत्ति बंध्यौं दई छाप छाजै ॥
रहै एक ग्रेहं घरी अद्ध भारं। तहां वेद मंत्रं दुजं जा उचारे ॥९३॥

॥ कवित्त ॥

सुभत बीर तन तांम। बाल राजै दिसि बानं ॥
मनहु मुत्ति पहिचांन। रत्ति बंधी कर कांमं ॥
अति सोभा सौभई। चंद ओपम तहं बर वर ॥
मनों मकर मकरेस। आय चंपई अप्प घर ॥
सज्जे सुरत्ति मनमथ्थ बार। कै इंद्रानी इंद्र परि ॥
संप्रति लच्छ लच्छिय सुबर। संपति तन सज्जेउ बर ॥६४॥

॥ दूहा ॥

बर सोभे बर राजपति। लिय दच्छिन हत बांम ॥
मनों ब्याह पूरन करै। सुबित वीरतम हांम ॥६५॥
परनि बीर प्रथिराज बर। बहुत बहै रस जोइ ॥
कवि वर वरनत नां बनै। बर भूषन तिन गोइ ॥६६॥

॥ छंद पद्धरी ॥

लज्याति मांन गुन ग्रब कटाछ। अलपहति जलपह सुलपह सुलाछ ॥
भोंर भर अभय भय सील नील। सरसात पिम रस पिंम चील ॥
गुंजंत ग्रांम सोभिल कुआंरि। तिहि हरत हरनि मनमथ्थ रारि ॥
तन सात नितंबनि तहं प्रमान। बर हरैं बरनि पिय लटि प्रमान ॥
सित असित सुवृत्त कटाछ बाल। श्रृंगार मध्य भूषन रसाल ॥
रस हास मध्य श्रृंगार होइ। संकर सुभाग उप्पनै लोइ ॥६७॥

साटक

कामं जा गढोइ लज्ज गढ़ने भय भ्रत्तभय कोटकं ॥
घूघट्टं पद डोढि वानति बले ऊधी सुकागछ रसे ॥
जातिं जात न जाति जोगित बरं भंजे मनं बिभ्रमं ॥
नां दीसंत गता गतेस सैनं द्रंग चलं निष्चलं ॥६८॥

॥ छंद त्रोटक ॥

बरनं गुरु अच्छिर अंति पयौ। इति तोटक छंदय नाग गयौ ॥
श्रिय नाग सुबद्दिय बाहनयं। पग पत्ति बिपत्ति सुगाहनयं ॥
बरनं बरनं वरतीन कथं। सु चढ्या जनु मेष प्रथमं रथं ॥
प्रग अंचल चंचल बाल ढंके। तिहि काम बिरामन बांन थके ॥६९॥

नव बास सुनूपुर सद्द गरं । नृप आगम जाह बधाइ धरं ॥
गत ज्यौं मनमत्त जंजीर जरी । क्रम निट्ठत निठ्ठय पाइ भरी ॥
दस पंच सषी नृप पास गई । ति मनों सुष श्रीफल हाथ दई ॥
करुनातिमुची रसभौर सता । श्रम भौ अभिलाषरु ग्रब्ब जिता ॥१००॥
नृप पुठ्ठ मुषं अवलोक करै । सुमनौं धन रंक बिलोकि गुरै ॥
ति कंही न बनै कबिचंद कथा । सु लजै रसना अरु बीर जथा ॥
सुकछूक कहों दिठि क्रंम क्रमं । सुमनो मनता बरनी न भ्रमं ॥१०१॥

॥ दूहा ॥

ऐन सैंन रति मैंन सय । प्रथम समागम बाल ॥
नेह देह हुअ एक हुअ । परे प्रेम रस जाल ॥१०२॥

॥ गाहा ॥

इत्तं सुष्प गनिज्जै । लज्जीजै जोहयौ कब्बी ॥
ज्यों वारिज बिपनं मझं । सुझ्झे ना यहि गरुआयं ॥१०३॥
मूलं वर मकरंदं । विजी पुर षाई सुन्दरी वीयं ॥
मालचि दंपति वासं । चाहुआनं वीरयो पत्ती ॥१०४॥
जं भ्रम भ्रमौति चित्तं । आवै नठ्ठेय ग्यांनयं चितयं ॥
जं भ्रमि भ्रमि सह रूपं । अवलोकं इंछनी करियं ॥१०५॥
इक्क जगी विस वाले । काम मयंक षयौ द्रिगयं ॥
जानिज्जै गम सैसं । नैंनायं जोग व सनायं ॥१०६॥
उअर उरोजति सद्धो । बुद्धी बालाय दिठ्ठयौ नैनं ॥
कुच तुछ अंकुर उठ्ठे । मनों प्रीतम विश्राव हीयो चढ़यं ॥१०७॥

॥ गाहा ॥

नैंननि प्रथम प्रमांनिय पुब्ब । सेवालय रोमावलि रुब्ब ॥
अग्यानय जोवनति कुंआर । अब जांन्यौ सैंसव चलि भार ॥१०८॥
इहिविधिमत्त गत्त भय रजनी । बाल लता बल्हम गहि सजनी ॥
यों डगमग सुंदरि बिरुझाई । ज्यौं बेलिय अपलंब लहाई ॥१०९॥

॥ दूहा ॥

पांवारी प्रथिराज बर । पुनि जानवांसे जाइ ॥
एक सहस हय हथ्थि वर । दीने तुरत लुटाइ ॥११०॥

होत प्रात जग्गिय सलष । भंति अनेक निभोग ।।
ज कछ देव देवंस मति । सो लब्भै नहिं लोग ।।१११।।

।। छंद भुजंगी ।।

सुइंदं सुइंदं सुइंदंति राजं । सुतौ देषियै कोटि कोटेक साजं ।।
लषं लष्ष भाइं नटं नट्ट रागं । मनो देषियै यद ग्रहग्रहन आगं ।।
जिते तार झंकार नच्चे निनारे । मनों देषियै भांन ससि लष्षि तारे।।
सुभंगं सुतालं मृदंगं बजावै । हहा हूह स्रग्गं सुगंधर्व गावै ।।११२।।
घनं पवक षांन समानंत नेहं । करै प्रथ्थिराजं अपं अप्प देहं ।।
करै राज राजं सबै ब्याह काजं । मनो दिष्षये राजसूजय साजं ।।
षरे अग्गरागं छिती छत्र जोरी । मनों उन्नयौ मेघ आषाढ़ कोरी ।।
फिरै दास भारी बुलै राग बैनं । मनौ मभ्यसी मास कै. बीज गैनं ।।११३।।
बजै ग्राम नारी छतीसों सुरागं । मनो बोलयं मोर अषाढ़ गाजं ।।
बजै घुंघरू नारियं रंग भारी । मनों दादुरं जोति मनमथ्थ सारी ।।
रंगे कासमीरं सबै वस्त्रधारी । किधों वद्दलं रंग कै ग्रहनगारी ।।
किधों इंद्रबद्धू चढ़ी नीर धारा । किधों राज वासंत भूपाल वारा ।।११४।।

।। दूहा ।।

गति त्रिजांम भय प्रातवर । इह मनुहार प्रमांन ।।
बर दिष्षौ चहुआंन नृप । रत्ति काम उनमान ।।११५।।

।। गाहा ।।

रत्ति काम दुअ दाहं । कै दुःषंकरी कत्तरी बाले ।।
सौ इंछनि पांवारी । लब्भी नृप मुक्तिका रूपं ।।११६।।

।। छंद हनुफाल ।।

इति मुकति सकति सकोर । जिन लभि न पारस चोर ।।
जिनं कांम बांन झकोर । गुन मुदित मुदित्त सथोर ।।
चित मित्त मित्तह जोर । मनों उदय निषत्रन चोर ।।
सुष जुगति भुगति उपाय । का करिहि मुक्ति अभाइ ।।११७।।
सुष करन दिन प्रति जीह । दिन सुफल धरियति ग्रीह ।।
प्रति राज राजन जोर । पावार सलषति ओर ।।
मनुहार मंडित थोर । नृप चलन ग्रेह सजोर ।।
है गैंति रथ बर बाजि । नृप दए दांन विराजि ।।११८।।

५

नव बास सुनूपुर सद्द गरं । नृप आगम जाह्‌ बधाइ धरं ॥
गत ज्यौं मनमत्त जंजीर जरी । क्रम निट्‌ठत निठ्‌ठय पाइ भरी ॥
दस पंच सषी नृप पास गई । ति मनों सुष श्रीफल हाथ दई ॥
करुनातिमुची रसभौर सता । श्रम भौ अभिलाषरु ग्रब्ब जिता ॥१००॥
नृप पुठ्‌ठ मुषं अवलोक करै । सुमनौं धन रंक बिलोकि गुरै ॥
ति कंह्वी न बनै कबिचंद कथा । सु लजै रसना अरु बीर जथा ॥
सुकछूक कहों दिठि क्रंम क्रमं । सुमनो मनता बरनी न भ्रमं ॥१०१॥

॥ दूहा ॥

ऐन सैंन रति मैंन सय । प्रथम समागम बाल ॥
नेह्‌ देह्‌ हुअ एक हुअ । परे प्रेम रस जाल ॥१०२॥

॥ गाहा ॥

इत्तं सुष्प गनिज्जै । लज्जीजैं जोहयौ कब्बी ॥
ज्यों वारिज बिपनं मझं । सुझ्झे ना यहि गरुआयं ॥१०३॥
मूलं वर मकरंदं । विजी पुर षाई सुन्दरी वीयं ॥
मालचि दंपति वासं । चाहुआनं वीरयो पत्ती ॥१०४॥
जं भ्रम भ्रमौति चित्तं । आवै नठ्‌ठेय ग्यांनयं चितयं ॥
जं भ्रमि भ्रमि सह रूपं । अवलोकं इंछनी करियं ॥१०५॥
इक्क जगी विस वाले । काम मयंक षयौ द्रिगयं ॥
जानिज्जै गम सैंसं । नैंनायं जोग व सनायं ॥१०६॥
उअर उरोजति सद्धो । बुद्धी बालाय दिठ्‌ठयौ नैनं ॥
कुच तुछ अंकुर उठ्‌ठे । मनों प्रीतम विभ्राव हीयो चढ़यं ॥१०७॥

॥ गाहा ॥

नेंननि प्रथम प्रमांनिय पुब्ब । सेवालय रोमावलि रुब्ब ॥
अग्यानय जोवनति कुंआर । अब जांन्यौ सैंसव चलि भार ॥१०८॥
इहिविधिमत्त गत्त भय रजनी । बाल लता बल्हम गहि सजनी ॥
यों डगमग सुंदरि बिरुझाई । ज्यौं बेलिय अपलंब लहाई ॥१०९॥

॥ दूहा ॥

पांवारी प्रथिराज बर । पुनि जानवांसे जाइ ॥
एक सहस हय हथ्थि वर । दीने तुरत लुटाइ ॥११०॥

होत प्रात जग्गिय सलष । भंति अनेक तिभोग ॥
ज कछ देव देवंस मति । सो लभ्भै नहिं लोग ॥१११॥

॥ छंद भुजंगी ॥

सुइंदं सुइंदं सुइंदंति राजं । सुतौ देषियै कोटि कोटेक साजं ॥
लषं लष्ष भाइं नटं नट्ट रागं । मनो देषियै यद ग्रहग्रहन आगं ॥
जिते तार झंकार नच्चे निनारे । मनों देषियै भांन ससि लष्षि तारे ॥
सुभंगं सुतालं मृदंगं बजावै । हहा हूह स्रग्गं सुगंधर्व गावै ॥११२॥
घनं पक्क षांन समानंत नेहं । करै प्रथ्थिराजं अपं अप्प देहं ॥
करै राज राजं सबै ब्याह काजं । मनो दिष्षये राजसूजय साजं ॥
षरे अग्गरागं छिती छत्र जोरी । मनों उन्नयौ मेघ आषाढ़ कोरी ॥
फिरै दास भारी बुलै राग बैंनं । मनौ मभ्यसी मास कै बीज गैंनं ॥११३॥
बजै ग्राम नारी छतीसों सुरागं । मनो बोलयं मोर अषाढ़ गाजं ॥
बजै घुंघरू नारियं रंग भारी । मनों दादुरं जोति मनमथ्थ सारी ॥
रंगे कासमीरं सबै वस्त्रधारी । किधों वद्दलं रंग कै ग्रहनगारी ॥
किधों इंद्रबद्धू चढ़ी नीर धारा । किधों राज वासंत भूपाल वारा ॥११४॥

॥ दूहा ॥

गति त्रिजांम भय प्रातवर । इह मनुहार प्रमांन ॥
बर दिष्षौ चहुआंन नृप । रत्ति काम उनमान ॥११५॥

॥ गाहा ॥

रत्ति काम दुअ दाहं । कै दुःषंकरी कत्तरी बाले ॥
सो इंछनि पांवारी । लभ्भी नृप मुक्तिका रूपं ॥११६॥

॥ छंद हनुफाल ॥

इति मुकति सकति सकोर । जिन लभि न पारस चोर ॥
जिनं कांम बांन झकोर । गुन मुदित मुदित सथोर ॥
चित मित्त मित्तह जोर । मनों उदय निषत्रन चोर ॥
सुष जुगति भुगति उपाय । का करिहि मुक्ति अभाइ ॥११७॥
सुष करन दिन प्रति जीह । दिन सुफल धरियति ग्रीह ॥
प्रति राज राजन जोर । पावार सलषति ओर ॥
मनुहार मंडित थोर । नृप चलन ग्रेह सजोर ॥
है गैति रथ बर बाजि । नृप दए दांन विराजि ॥११८॥

॥ कवित्त ॥

सहस एक रथ साजि। दासि बिय तिपति इक्क मधि ॥
इक्क इक्क करि सथ्थ। किरनि षंचौं प्रति प्रति बधि ॥
सौ हाथी इह भाँति। माल मुत्तिय उतंग बर ॥
लच्छि पटंबर अंग। दए राजिंद राजगुर ॥
इतनौ देत सकुच्यौ नृपति। तौ दिनता चरनन गहिय ॥
प्रथीराज राजन सुबर। सलष फेरि चल्यौ समिय ॥११९॥

॥ दूहा ॥

पंच दिवस च्यारौं बरन। भुजत अंन अपार ॥
छरस अंन छह रितिन सुष। अब्बूवै आचार ॥१२०॥
पलकि चार अचार करि। समद करी सब सथ्थ ॥
है हथ्थी जरकस बसन। को कवि बरनै कथ्थ ॥१२१॥

॥ छंद पद्धरी ॥

पहिराइ राइ पवार सथ्थ। नह बुद्धि बरन बर विविध कथ्थ ॥
इक करी सत्त हय सोम राइ। अैराक जाति जे पवन पाइ ॥
सिर-पाव पंच जरकस पसंम। सूतरू पोत रेसम नरंम ॥
सोइ विदा कीर दूलह बनाइ। जमदार सोंपि संभरि गनाइ ॥१२२॥

कल धूत कलस दस गढ़ित हथ्थ। इक उंच कुंडि जल न्हांन सथ्थ ॥
दस थार कनक प्रतिबिंब सूर। बाटका बीस बिअं अभुत नूर ॥
ता सक्क पंच दुव मनहथार। बाजौठ एक हिम जटित लाल ॥
षालकनि हेम रेसम निवारि। अनि ठांम नंन्ह को लहै सार ॥१२३॥

कठलोंनि बीस सोवन मटाइ। पल्लांन ऊच बावन चढ़ाइ ॥
मन बीस पंच इह सोंज श्रब्ब। जिन कोय करौ छित्तीस ग्रब्ब ॥
दुअ हथ्थि साजि माझे जिंजीर। रूपेन साज सज्जे वजीर ॥
हंडवाइ बीस मन साजु सुद्ध। उज्जल रज रजक्क जनु उफनि दुद्ध ॥१२४॥

दस सहस हेम दासीन संग। तिन देषि रंग रंभ होत भंग ॥
सामंत सत्त इक रस्स अग्ग। पहराह तिनह नृप नमिय पग्ग ॥
इक तुरी जात अैराक थांन। अग्गीय अंग पग पवन मांन ॥
इक इक्क बटु अमालाति इक्क। मुद्रकी इक्क इन पुहचि किक्क ॥१२५॥

सिर-पाव उंच जरकस अनूप । तिन दिष्षि होत हैरांन भूप ।।
बंभन बनंक कायथ्थ संग । पसबान लोग जे रषिक अंग ।।
लघु दिघ्घ और असवार पाल । करि सुमन सब्ब अब्बू भुआल ।।
पंच सै सोम रनिवास नांम । रेसंम सून गनि पंच ठांम ।।१२६।।

सब हर्ष सहित समदे नरेस । सजि चले गुभट सब अप्प देस ।।
इंछनिय मद्धि पिथ बैठ ढाल । गज गाह घुरें दुहुँ अंग भाल ।।१२७।।

।। दूहा ।।

चल्यौ ब्याहि संभरि धनी । मंगन भए निहाल ।।
पुह चावन घन संग भए । नृप गुन चवें रसाल ।।१२८।।

पंच कोस परथिथ्य कहु । बिदा मंगि अबु ईस ।।
ओर देन तुम सोंभ कह । काम तुम्हें हम सीस ।।१२९।।

नवंमि मंडि बहुरे घरह । वे सज्जे अप देस ।।
नृपति ब्याह दुअ रस रह्यौ । हिम गिरि जांनि महेस ।।१३०।।

आरिज आरिज सलष तें । इंछनि इच्छा पूरि ।।
भुअ मंडल मंडित दिनह । सिर दधि अच्छित जूर ।।१३१।।

चलन राज प्रथिराज बर । बरनि पत्त बर राज ।।
मद्धि अमोलक सुंदरी । डोला सड्ठित साज ।।१३२।।

यौं आयौ नृप ग्रेह बर । सुनि अवाज त्रिय कांन ।।
मानौं बीर दुहाइयां । कांमहि नंषन बांन ।।१३३।।

।। कवित्त ।।

सोमेसर संभरिय । राज आवत प्रथिराजह ।।
है गै रंग सुसाज । इंद चल्लयौ लष साजह ।।
कोटि कोटि मनु इंद । इंद दिष्षो इंदासन ।।
एक एक दंपतिय । बरह बंधै विधि साजन ।।
दुज मान वेद मंगल त्रियह । मुत्ति अछित बंदहि सुबर ।।
नप मौर मुष मुत्तिय लगहि । सो ओपम कविराज धर ।।१३४।।

।। अरिल्ल ।।

लगत मुत्ति सु पंति नृपति मुष बरं ।।
मनों भान उनग्रेह सुतारक ऊबरं ।।

मिलि सो फिरि चलहि ससि गन भांषै कों।
मांनहु लषद्धै जांनि आनैं आंनकों ॥१३५॥

॥ दूहा ॥

बंदि लियौ बरनी सुबर। त्रिया हेत लजि गांन ॥
मानों वैसंध सुन्दरी। चलत समप्पत दांन ॥१३६॥
बहुरि सुकी सुक सों कहैं। अंग अंग दुति देह ॥
इंछनि अंछ बषांनि कैं। मोहि सुनावहु एह ॥१३७॥

॥ छंद हनुफाल ॥

धन धवल गावहि बाल। मनमथ्थ तिथ्थ बिषाल ॥
बहु फुल्लि केवर फूलि। बग बैठि पावस भूलि ॥
धन धवल दै मनमथ्थ। आनंद अंगनि सथ्थ ॥
जनु रंक पाये दब्ब। नल नलन नीर चहब्ब ॥१३८॥
धर धार गंग कि उट्ठि। फिर नम्भ परसि अपुट्ठि ॥
बट विटप बेलिय झुल्लि। ग्रिह बाग तरु छत्र झुल्लि ॥
नृप परनि पुत्रि पवार। जनु जुबन सैसुव रारि ॥
इह रूप राजित देव। इन्द्र इन्द्रनी अहमेव ॥१३९॥
सोइ सलष राज कुंआरि। नृप लसी ब्रह्म सवांरि ॥
लछि लच्छि पूर सहज्ज। ब्रत नाथ ब्रत करि कज्ज ॥
कविराज ओप प्रकारु। आवै न कोटि बिचारु ॥
सिष नष्ष ब्रंन सुरत्त। किम करय मंद सुमत्त ॥१४०॥
जगि रंग जोबन जोर। ससि बिलसि वयक्रम थोर ॥
वर उदै गुन वर गौर। वे स्यांम राजत और ॥
वनि केस देस सुवेस। कवि कहत उप्पम तेस ॥
चढ़ि मेर नागिन नंद। ससि गहत संमुष फंद ॥१४१॥
उपम्म कवि कहि बाम। जुब्बन तरंग अगि कांम ॥
पाटीय चकचुंघि होइ। ससि परह उठि घट दोइ ॥
लिल्लाट आउ प्रकार। मनमथ्थ अंगन थार ॥
तिन मद्धि मुत्ति तिलक्क। कवि कहत ओपम थक्क ॥१४२॥
हर कठिन गंगय मांन। ससि भेद ग्रस चलि जांन ॥
कविराज ओपम दीय। दछि पुत्रि ससि मिलि हीय ॥
तिन मध्य म्रगपद ब्यंद। कवि जंपि उप्पम छंद ॥
ससि उड़त मद्धि कलंक। हरु अत्त अंकह अंक ॥१४३॥

लछिन्न हरि तन ताह। ससि थांन बैठो राह॥
अति हलत चपलह भौंह। कवि कहत उप्पम सौंह॥
ससि धरत जूप सु अैंन। तिहि चलित चक्रित नैंन॥
मन धरन उप्पम आंन। अमि संधि अलिसुत जांन॥१४४॥

वर बाल नैंन झकोर। ग्रह जियन बातइ जोर॥
जिम भए भोंरह चोर। भै भरै धाम झकोर॥
इक कही ओपम चाइ। षंजन कि उडि फल षाइ॥
जनु बाग छुट्टिय अैंन। तिम होत चक्रित नैंन॥१४५॥

सित असित नैंन उचार। मनौं राह तारक चार॥
तिन मद्धि सोभै रत्त। विधि धरिय मंगल गत्त॥
रसवास नासिक नीय। तिल पुहप चंपक दीय॥
मनों लज्जि-मंजरि मध्य। कल प्रगटि दीपक सध्य॥१४६॥

नव रुलत मुत्तिय नास। तसु किंच ओपम भास॥
रस ग्रहन अंमृत चाइ। तप करै ऊरध पाइ॥
मुष कीर सौमित जोस। जन चुनत कनब्रत ओस॥
जगिनीय पुर मय रज्जि। कवि कही उप्पम सज्जि॥१४७॥

अध अधर रत्त सुरंग। ससि वीय रंग तरंग॥
उत्तंग रंग सुभाल। जमु फुलि कमुद्दिनि ताल॥
कै पक्क बिंब संभाल। सुकड सिय ग्रसियन आल॥
तिन मध्य दंतन कंत। जनु वज्र राजत पंत॥१४८॥

फुनि कही ओपम साज। सुत स्वाति सीपय राज॥
सति इक्क ओपन अच्छ। बत्तीस लच्छन लच्छ॥
इक अलक सुम्मत मुष्ष। कवि कहत ओपम सुष्ष॥
ससि मुक्कि मधुरय अङ्क। बर भजत विभय कलंक॥१४६॥

जनु जनम धारा रेष। कै मिल नगी चलि सेष॥
कल ग्रीव रेष त्रिबल्लि। कविराज ओपम भल्लि॥
ससि मिलत पुब्बय वैर। गुरुदेव सेव सुसैर॥
गर पोति जोति विचारि। ससि चरन फंदय डारि॥१५०॥

ससि समर दंड प्रमांन। जिति राह बैठो थांन॥
कै संष श्रीवर जांनि। कर अंगुलि इक थांन॥

कालंक दिठवन जौर। कवि इक्क उप्पम दौरि ॥
जनु कमल कोर प्रकार। सिसु भ्रंग बैठे बार ॥१५१॥

रस सरस कुच कहि चंद। उर उकिर आनंद कंद ॥
ससि वदन मदन सु जोर। चित रहै चाहि चकोर ॥
कलिका कि कंज अनूप। कर उदित रवनिय रूप ॥
करि कलभ कुंभ प्रमांन। छवि स्यांम रंग सुदांन ॥१५२॥

गुन गंठिय मुत्तिय माल। कुच परस कंत बिसाल ॥
विय सिंभ सीस कि चंग। चढ़ि चलिय गंग सुरंग ॥
नव रोम राजिय राजि। कही कवी ओपम साजि ॥
मनों नाभि कूप प्रमांन। भरि भूरि अंमृत थांन ॥१५३॥

अंमृत्त आवहि जाहि। पप्पील रंगहि चाहि ॥
उर उदित सभगय बाल। आनंग रस ससि बाल ॥
जनु लच्छि क्रीडें ताल। हिम फाब लग्गि रसाल ॥
सुभ निरषि त्रिवली तेह। कवि चंद ओपम एह ॥१५४॥

वय सिसु मिलनह बाल। सिढि मंडि कांम बिसाल ॥
रिपु उभै सुम्मिय आंनि। छवि लंघि लंक प्रमांन ॥
नित्तंब उत्तंग रज्जि। मनमथ्थ चक्र विसज्जि ॥
पैरंग पिंडिय ढाप। सितसीत उष्न तुसार ॥१५५॥

नव रंभ गति विपरीत। छवि षंभ देवल जीत ॥
गज सुंड सुलप सरूप। मानों कुंद कुंदन भूप ॥
किधौं करम कोर प्रकार। तिन मद्धि उतरत ढार ॥
मनों मींन चिल्लत देह। छवि छरत पिंडुर एह ॥१५६॥

घन घुंमि घुघ्घर हेम। कवि करो ओपम एक ॥
मनो कमल सौरभ काज। प्रति प्रीति भमर विराज ॥
कह कहों अङ्क सुरंग। रति भूलि देषि अनंग ॥
लखि लच्छि पूर सहज्ज। चित वृत्त मांनो रज्ज ॥१५७॥

सो सलख राज कुंआर। नृप लही ब्रह्म सवार ॥
इन लच्छि इंछनिय रूप। कुल बधू लच्छिन भूप ॥
रति रूप रमनीय रज्जि। छवि सरल दुति तन सज्जि ॥
रसि रसित रंगह राज। तिह रमन हुअ प्रथिराज ॥१५८॥

॥ कवित्त ॥

नयन सुकज्जल रेष । तष्षि तिष्षिन छबि कारिय ॥
श्रवनन सहस कटाक्ष । चित्त कर्षन नर नारिय ॥
भुज मृनाल कर कमल । उरज अंबुज कल्लिय कल ॥
जंघ रंभ कटि सिंघ । गमन दुति हंस करी छल ॥
देव अरु जष्षि नागिनि नरिय । गरहि गर्व दिष्षत नयन ॥
इंछिनी इष्षि लज्जा सहज । कितक सक्ति कब्विय बयन ॥१५९॥

दर्पन दल नष जोति । सुरंग महदी रुचि रूरिय ॥
एडी इंगुर रंग । उपम ओपियै सु संचिय ॥
सो तिन सकल सुहाग । भाग जावक तल बंधिय ॥
विकसित अंग अंग अंग । चारु मुसकनि वै संधिय ॥
दिष्षंत नैंन दंपति कजहि । हर्ष सोभ वर्षंत अकल ॥
रति कांम कांम गहि गछनिय । और उप्पम लुट्टिय सकल ॥१६०॥

जेहरि नूपुर नद्द । सद्द घूघर कोतूहल ॥
बिछिय निसद्द निसाल । सद्द भिंगुर कल कूहल ॥
अगुठनि जटित अनोट । षोंट कुंदन नग मंडित ॥
निरषत द्रप्पन नैन । बदल बीरी रद षंडित ॥
हाव अरु भाव संभ्रम विभ्रम । बड पुन्य करि प्रभु पिथ्थलहि ॥
इंछनिय इच्छ अच्छर अबनि । सुनिय सोभ ससि कब्बि कहि ॥१६१॥

जरकस घुघर घमंड । जांनु रवि क्रिन्न कदलि ग्रह ॥
कसुंभ लरे नीसार । रंग छवि छंडि हंड हर ॥
पीत कंचकी संचि । षंडि कस अंग उपट्टिय ॥
कंकन कर बर बरत । गंध हरदीय उपट्टिय ॥
आलोल नैंन गति बचन बहु । सषिन सोभ मंडिय तनह ॥
फुल्ली सु सांझ कवि चंद कहि । मनहु बीजु थरकी घनह ॥१६२॥

॥ दूहा ॥

सुनत कथा अछि बत्तरी । गइ रत्तरी बिहाइ ॥
दुज्ज कही दुजि संभरिय । जिमि सुष श्रवन सुहाइ ॥१६३॥
आरिजु आरि जस लषहीं । सो इंछिनि इच्छा पूर ॥
भुव मंडल मंडित दिनह । सिर दधि अच्छित जूर ॥१६४॥

शशिव्रता विवाह् प्रस्ताव

पुच्छ कथा सुक कहौ। समह गंध्रवी शुप्रेमहि ॥
स्रवन मंमि संजोगि। राज सम घरी सुनेमहि ॥
इम चितिय मन मझ्झि। (चित्र सख गंध्रब ईसह) ॥
(कँ) करो पति जुग्गनि ईस। ईस पुज्जै सु जग्गीसह ॥
सुक चिति बाल अति लघु सुनत। तत विन बिस उपजें तिहि ॥
देव सभा न जद्दुव नृपति। नालकेर दुज अनुसरहि ॥१॥

नालकेर दुज गहिय। द्वार जैचंद गयो अपु ॥
करी षबर हेजमह। अप्प अंदर बुलाइ नृप ॥
नाकेलर दुज आनि। कह्यो राजन अवधारी ॥
देव सु गिरि नृप भ्रात। पुंज ससिवृत्त कुमारी ॥
सो दइय बंध नृप वीर कहु। लगन मास दिन पंच वर ॥
सुनि श्रवन एह गंध्रब्ब कथ। चल्यौ सु दच्छिन देव धर ॥२॥

॥ दूहा ॥

चल्यौ सु दच्छिन देव गिरि। जहाँ शशिवृत्त कुमारि ॥
बिपन मद्धि क्रीड़ा करति। समह बाल चितचारि ॥३॥

॥ कवित्त ॥

हेम हंस तन धरिय। बिपन मद्धे विश्राम लिय ॥
दिष्य तास शशिव्रत्त। अतिति अचरिज्ज मानि जिय ॥
बल कर गहियं सु तत्थ। हत्थ लै करि तिहि पुच्छिय ॥
कवन देव तुम थान। कवन माया तन अच्छिय ॥
उच्चर्‌यौ हंस ससिव्रत्त सम। मति प्रधान गन्धर्व हम ॥
सुरराज काज आए करन। तीन लोक हम बालगन ॥४॥

॥ कवित्त ॥

कहै बाल मनि हंस। कवन हम पुब्ब जम्म कह ॥
कवन पत्ति हम लहहिं। लेष बिच्चार लहो इह ॥
तवै हंस उच्चर्‌यौ। सुनहि शशिवृत्ता नारी ॥
चित्ररेष अपछरि। सगीन अति रूप धरारी ॥

॥ चौपाई ॥

तिहि गरब इन्द्र सम कलह करि । क्रीध देव बंडी सुरम ॥
दच्छिन नरेस नृप तान बंधु । पुंज ग्रहै अवतार तुम ॥५॥

॥ चौपाई ॥

कहै हंस सुनि बाल बिचारी । पंग बधुर बीर सु पुत्तारी ॥
तिहि तु दई मातु पितु बंधं । सो तुम जोग नहीं वर कंधं ॥६॥
तेउ रहै वर वरष इक्क महि । हय गय अनत झुज्झि है समतहि ॥
तिहि चार करि तुमहि आयौ । करि करना यह इन्द्र पठायौ ॥७॥
तब उच्चरिय बाल सम तेहं । तुम माता सम पिता सनेहं ॥
मुझ्झ सहाय अवरि कब करिहौं । पानि ग्रहन तुम चित अनुहरिहौ ॥८॥

॥ चौपाई ॥

तब बोल्यो दुजराज बिचारं । सुनि ससिवृत्त कत्थ इक सारं ॥
दिल्ली वैं चहुआंन महा भर । सो तुम जोग चिन्तयौ हमबर ॥९॥
सत सामंत सूर बलकारी । तिन सम जुद्ध सु देव बिचारी ॥
जिन गहियौ सर वर गज्जनवै । हय गय मंडि छंडि पुनि हिय वै ॥१०॥
गुज्जरवै चालुक्क भीमतर । ते दिन राति डरै जंगल धर ॥
बरन जोग तुम तेह बिचारं । सुनि की सुंदरि हरष अपारं ॥११॥
तहां तुम पिता कृपा करि जाउ । दिल्ली वैं अनुराग उपाउ ॥
मांस षटह हों वृत्तह मंडों । तथ्थु ना आवै तौ तन छंडों ॥१२॥
तब उड़ि चल्यौ देह दिस उत्तरि । ढिग ससिब्रत रष्षि निज सुंदरि ॥
जुग्गिनि पुर आयो दुजराजं । सोवन देह नगं नग साजं ॥१३॥

॥ कवित्त ॥

वय किसोर प्रथिराज । रम्य हा रम्य प्रकारं ॥
सेत पष्य विय चंद । कला उद्दित तन मारं ॥
बिपन मध्य चहुआंन । हंस दिष्यौ अप अष्षिय ॥
चरन भग्ग दुति होत । मेह पछ्छी विय लष्षिय ॥
आचिज्ज देषि प्रथिराज वर । धाइ नृपति बर कर गहिय ॥
आपुब्ब दुज्ज गति कथ । रहसि राज सों सब कहिय ॥१४॥

॥ दूहा ॥

बपन मध्य आचिज्ज इह । दिष्षि राज प्रथिराज ॥
धूत दूत कलधौत तन । हंस सरूप बिराज ॥१५॥

संझ सपत्तौ नृपति पै । दूत सु जद्दव राइ ।।
वर कग्गद नृप हथ्थ दै । कहि श्रोतान बधाइ ।।१६।।

राका अरु सूरज्ज बिच । उदै अस्त दुहु बेर ।।
बर शशिवृत्ता सोभई । मनो श्रृंगार सु र ।।१७।।

इन वै इन रूपह तरुनि । इन गुन आवै मान ।।
सो वर वर कवि चंद कहि । सुनहु तो कहूँ प्रमान ।।१८।।

।। त्रोटक ।।

वय संधिरु बाल प्रमान ब्रनं । कहि त्रोटक छंद प्रमान सुनं ।।
वय स्यांमऽरु शैशव अंकुरयं । अह अंत निसागम संकरयं ।।१९।।

जल सैसव मुद्ध समान भयं । रबि बाल बहिक्रम अत्थमियं ।।
वर सैसव जोबन संधि अती । सु मिलें जनु षित्तह बाल जती ।।२०।।

जु रही लगि सैसव जुब्बनता । सु मनों ससिरं तन राज हिता ।।
जु चलै मुरि मारुत झंकुरिता । सु मनों मुरवैस मुरी मुरिता ।।२१।।

कलकंठ सुकंठय पंष अली । गुन जंपि कवित्त सु चंद बली ।।२२।।

।। कवित्त ।।

ससिर अंत आवन बसंत । बालह सैसव गम ।।
आलिन पंष कोकिल सुकंठ । सजि गुंड मिलत भ्रम ।।
मुर मारुत मुरि चले । मुरे मुरि बैस प्रमानं ।।
तुछ कोंपर सिस फूट्टि । आन किस्सोर रंगानं ।।
लीनी न अंमिनक स्यांम तन । मधुर मधुर धुनि धुनि करिय ।।
जानी न बयन आवन बसत । अग्याता जीवन अरिय ।।२३।।

।। कवित्त ।।

पत्त पुरातन झरिग । पत्त अंकुरिय उट्ठ तुछ ।।
ज्यौं सैसव उत्तरिय । चढ़िय वैसब किसोर कुछ ।।
शीतल मंद सुगंध । आइ रितिराज अचानं ।।
रोमराइ अंग कुच नितंब । तुच्छं सरसानं ।।
बढ़्ढ़ै न सीत कटि छीन ह्वै । लज्ज मांन ढंकति फिरै ।।
ढके न पतं ढंकै कहै । बन बसंत मंत जु करै ।।२४।।

॥ दूहा ॥

श्रवनन भव श्रोतान नृप। मन बंछै चहुआंन ॥
मनु ससिवृत्त कुंआरि कौ। पर्‍यौ उरद्धर बान ॥२५॥

॥ कवित्त ॥

निसि नरिंद चहुआंन। चित्त मनोरत्थ बिचारै ॥
भई दीह सब निशा। निशा सयनंतर धारै ॥
सयनंतर ससिवृत्त। चाटु चटु वैन उचारै ॥
चारु चारु वर बयन। मान मानिनि संभारै ॥
दैवान मनोरथ चित्त बर। भव भव छन्नन कह करै ॥
भौ प्रात दूत पुच्छै नृपति। जह्नौवै चित्तै धरै ॥२६॥

॥ दूहा ॥

बर बंध्यौ ससिवृत कौ। अरु नृप भान कुंआर ॥
वे ही दिन कमधज्ज कै। नाम वीरवर भार ॥२७॥

॥ कवित्त ॥

चित्र रेष बाला विचित्र। चंदी चन्द्रानन ॥
स्वर्ग मग्ग उत्तरी। चित्त पुत्तरि परमानन ॥
काम बान सुंजुरी। बात्र अंजुरी सु लच्छिय ॥
कार कलह उत्तरी। पुब्ब अच्छरी सु लच्छिय ॥
लछिन बत्तीस लच्छी सहज। रतिपति चित्त समंधरे ॥
संग्रहै वृत्त चहुआंन कौ। गवरि पुज्ज दिन प्रति करै ॥२८॥

॥ दूहा ॥

बरनी जोग वरन्न को। बर भुल्लै करतार ॥
तिहि कारन ढुंढत फिरै। सत्त समुद्रह पार ॥२९॥

जा कारन ढुंढत फिरत। सो पायौ दीलीस ॥
अब जद्दब ससिवृत्त चढ़िय। दीनी ईस जगीस ॥३०॥

हंस कहै राजन्न सुनि। बह उतपति अनुराग ॥
श्रवन सुनौ संभरि सु पहु। कहौं वृत्त संलाग ॥३१॥

॥ कवित्त ॥

देवग्गिरि नृपभान । सोम बंसी सतपै नृप ॥
तिन अनंत बल तेज । बहुल है गै पैदल तप ॥
नयर मध्य कोटीस । बसै बानिक्क अनंत लछि ॥
धर्म तप्प नह पार । न कोऊ दास रहै इछु ॥
सा एक लष्ष पयदल पुलत । षग्ग जोर षूंनं बहै ॥
जद्दव नरिंद सब गुन कुसल । धन प्रताप दिन दिन लहै ॥३२॥

तास पुत्र नारेन । पुत्रि ससिवृत्ता प्रमानं ॥
दुअ अनंत सूरित्त । रूप मकरंद सु जानं ॥
भगिनि भ्रात दुअ प्रीत । पिता माता प्रिय मानं ॥
अति उछाह रंग रमै । असन इक ठाम प्रधानं ॥
सुवरिष्ष भई सत्तह्ऽरुदुअ । अति अभूत लच्छिन प्रबल ॥
लालित संरूप पिय चंदसम । राजकुंअरि राजै अतुल ॥३३॥

तिन राजन कै मंत्र । नाम आनंद चंद भर ॥
तिन भगिनी चंद्रिका । व्याह व्याही सुदूरि धरि ॥
नैर कोट हिस्सार । तास षित्रीय प्रमथ बर ॥
अति सु प्रीति नर नारि । सुष्ष अनुभवै दीह पर ॥
कोइक्क दिवस भरतार वहि । तुच्छ दीह परलोक गत ॥
आनई बहनि फिरि अप्प ग्रह । अति सु दुष्ष निसि दिन करत ॥३४॥

॥ दूहा ॥

अति प्रबीन विद्या लहन । गान तान सुभ साज ॥
केइक दिन अंतर वहिग । गइ अंतेवर राज ॥३५॥

तिन संगह ससिवृत्त सुअ । पठन विद्य सुभ काज ॥
देवि कुंवरि अद्भुत अवय । रंजित है अति लाज ॥३६॥

॥ कवित्त ॥

जब षित्रिन चंद्रिका । कहै गुन नित चहवानं ॥
जेस पराक्रम राज । तेइ वरने दिन मानं ॥
राजकुंवरि जन सुनै । सबै उब्भरै रोम तन ॥
फिरि पुच्छै ससिवृत्त । सद्दि एकंत मत्त गुन ॥

जे जे सु पराक्रम राज किय। सोइ कहै षित्रिन समथ ॥
श्रोतान राग लग्यौ उअर। तो वृत्त लिनौ सुनी मुकथ ॥३७॥

॥ दूहा ॥

यों बरष्ष दुअ बित्ति गय। भइय वैस बर उंच ॥
तब कामन सु कलेव सुर। करे सेव सुचि संच ॥३८॥

हर सेव निस प्रति करै। मन बाचा क्रम वंध ॥
वर चहुआंन सुकामना। सेव ईस सुगंध ॥३९॥

बचन सिवा सिव वाच दिय। पति पावै चहुआंन ॥
बर प्रमुदिय प्रमथाधिपति। हुअ सुपनंतर मान ॥४०॥

कै जानै मन अप्पनो। कै षित्रिन कै ईस ॥
और शिवा सुनि ईस प्रति। किय अस्तुति बर दीस ॥४१॥

॥ कवित्त ॥

हुअ प्रसन्न सिव सिवा। बोलि हूँ पठय तुइझ प्रति ॥
इह बरनी तुम जोग। चंद जोसना वान वृत ॥
ज्यों रुकमिनि हरि देव। प्रीति अति बढै प्रेम भर ॥
इह गुन हंस सरूप। नाम दुजराज भनिय चर ॥
बुल्लिय सुपिता कमधज्ज नर। व्याहन पठयौ सु गुर दुज ॥
आवै सु भ्रात जैचंद सुत। कमध पुंज ब्याहन सुकज ॥४२॥

॥ दूहा ॥

ह्वै प्रसन्न बहु पंगुरै। दियौ हुकुम गुअ बंध ॥
प्रेरित सथ्थ जब अप्प पर। अति पर घर सुअ नंध ॥४३॥

सज्जि सेन चतुरङ्ग नर। देवगिरि कज व्याह ॥
अति अगनित सथ द्रव्य लिय। नर उच्छव करनाह ॥४४॥

॥ दूहा ॥

कह संभारि बर हंस गुनि। कह जद्दों संकेत ॥
कोन थान हम मिलन है। कहत बीच संमेत ॥४५॥

॥ गाथा ॥

कह यह दुज संकेतं। हो राज्यंद धीर ढिल्लेसं ॥
तेरसि उज्जल माघे। ब्याहन बरनीय थान हरसिद्धि ॥४६॥

॥ दूहा ॥

तब राजन फिर उच्चरै। ह्रो देवस दुजराज ॥
जो संकेत सु हम कह्यि। सो अष्षी त्रिय काज ॥४७॥

॥ अरिल्ल ॥

सो अष्षिय हम नेम सु दृढ्ढं। तुम अवस्य आवो प्रभु गढ्ढं ॥
सेत माघ त्रयोदसि सावहि। हर सुकलेव थान सुति भावहि ॥४८॥

॥ दूहा ॥

इह कहि हंस सु उड़ि गयौ। लग्यो राज श्रोतान ॥
छिन न हंस धीरज धरत। सुख जीवन दुख प्रान ॥४९॥
दस सहस्र हेंवर चढ़िय। नृप दिल्ली चहुआंन ॥
हुकम सद्दि साहन कियौ। दै सूरन बिलहान ॥५०॥

॥ छंद भुजंगी ॥

दियौ कन्ह चहुआंन मानिक्क बाजी। जिनैं देषतें चित्तकी गत्तिलाजी ॥
मुषं मञ्झ पायं कढै बाज राजं। मनो वग्ग भीषं क्रुतं कढ्ढि पाजं ॥५१॥
दियौ बाजि इंदं जाम देवं। दिपै तेज ऐसें चिरं पंषं एवं ॥
धरै पाइ ऐसे इलं मञ्झि जैसे। सुनै जैन भ्रमं धरै पाइ तैसे ॥५२॥
चढ्यौ राव कैमास चित्तं तुरङ्गी। रहै तेज पासं उछद्दंत अंगी ॥
चमक्कंत नालं विसालं खुरङ्गी। मनोबीज छिब्छी के आभा अनंगी ॥५३॥
उड़े झार झारं पयं नाल झारी। समं बूंद धावै मनों चार तारी ॥
चढ़े राजहंसं सुचामंड जोटं। मनो तेज बंधी मुनी बाइ मोटं ॥५४॥
डुलै कंन नांहीं सिलीका सुग्रीवं। मनो जोति बंधी सुनिर्वात दीवं ॥
चढ्यौ राज षीची प्रसंगं पहूपा। उड़ै वास ज्यों वाय वग्गै अनूपा ॥५५॥
बंध्रै चौंर चित्त चमक्कंत चाहं। हरद्वार छुट्टै कि गंगा प्रवाहं ॥
कढ्यौ राज पट्टं अजानंत बाहं। कही कव्विराजं उपम्माति चाहं ॥५६॥
दिये बीच तारी कोई नाहि पुज्जै। बलं तहि दिष्षै सरित्ता अमुज्झै ॥
दियौ मृग्गराजं चढ्यौ देवराजी। उड़ै पंखि पाजी रही पच्छ लाजी ॥५७॥
चढ्यौ निड्डुरं राइ अंगं अभंगं। छुटैं जानि तारान के व्योम मग्गं ॥
चढ्यौ हाहुली राइ जंबू नरिंदं। बढ्यौ बांन ज्यों तेज कम्मानचंदं ॥५८॥
चढ्यौ लंगरी राव लंगा सुबीरं। किधों वायबढ्वौ बुअं जानि धीरं ॥
चढ्यौ राज गोइंद आहुट्ठ राजं। किधों वाय बुंद सछुट्टीय साजं ॥५९॥

चढ्यौ राव लष्षंसु लष्षं पवारं । भ्रमें अंग ऐसे उपम्मा विचारं ॥
अधौ अग्गि दंडं व्रजं बाल फेरैं । किधों भोरहथ्थं किधों चक्र हेरैं ॥६०॥
किधों राति बोहिथ्थ भ्रमि भोर नारं । कही चंद कव्वी उपंमाति चारं ॥
चढ्यौ चंद पुंडीर राजीव नामं । तिनं ओपमा चंद देषी बिरामं ॥६१॥
जिनें गत्ति जीती सयन्नं पगारं । चली अंषि के पंष चित्तं बधारं ॥
चढ्यौ अत्त ताई उतंगं तुरंगा । मनों बीज की गत्ति आभा अनंगा ॥६२॥
चढ्यौ राव रामं रघूवंस बीरं । गतिं सूर जित्ती मृगं चंद भीरं ॥
चढ्यौ दाहिमं देव नरसिंघ कैसे । मनों चित्त की अर्थ गत्ति जैंसे ॥६३॥
चढ्यौ भोज राजं पहारं त्रिनैंतं । फुटैं सद्द तेजं सावाजं त्रितेतं ॥
चढ्यौ वीर जोद्धं कनक्कं कुमारं । चली कृत्य पूरन्न आचार पारं ॥६४॥
चढ्यौ राव पज्जून कूरंभ बीरं । बढ़े लौह अग्गं धनं जैंतपूरं ॥
चढ्यौ सामलौ सूर सारंग ताजी । गही होड बंधी वयं वामपाजी ॥६५॥
चढ्यौ अल्हनं बीर बंधव्व पानं । चढ्यौ दान ज्यों ग्रहनं जुद्ध वानं ॥
चढ्यौ लष्षलष्षी सलष्षं वघेला । बढ्यौ नेत ज्यों देह देषैं सुहेला ॥६६॥
चढ़े सब्ब सामंत छलबलत बीरं । मनों भान छुट्टकिरन्नी कि तारं ॥
चढ्यौ बाज राजं पृथ्वी राज राजं । तबैं पष्षरयो बाज साकत्तिसाजं ॥६७॥
उडैं सूर ज्यों हंस दुटैं कमंधं । वरंओपमा चंद जंपी कविंदं ॥
द्रमं ज्यों मरोरैं शिरं स्वामी हेतं । मयूरं कलाबाज रचीबंधि नेवं ॥६८॥
जगी जोगमाया सुजग्गीय थानं । प्रलीनं प्रलै ज्यौं प्रलीनं प्रमानं ॥६९॥
जगें बीर बीराधि डोरू बजावैं । नचैं नद्द नंदी त्रिघाइ त्रिघावैं ॥७०॥

॥ दूहा ॥

सागम निगम जांनि कै । चलि नृप सुक्रंवार ॥
माह वद्दि पंचमि दिवस । चढि चलिये तुर तार ॥७१॥

। छंद त्रोटक ॥

कवि चँद सु ब्रंनन राज करं । सोइ त्रोटक छंद प्रमान धरं ॥
जिहि च्यार परें सगना सगनं । सुभ अच्छिर लाइ तजै अगनं ॥७२॥
विवहार धरैं बरनं सु बरं । पढि पिंगल बाहन केन हरं ॥
वर चोजन चारु सुरंग इलं । तहां झौर न मौर सुरंग हुलं ॥७३॥
जग उप्पर ढाल ढलक्कि तरं । सुकहों तहां केलि अच्चिज्ज बरं ॥
तहां पल्लव लल्लित रत्त बचं । तहां जे धन दंतिय पंति रचं ॥७४॥

झमकैं बर नंग मयूष कसी। निकसी तहां केतक सी बिकसी ॥
सु चलैं बर मंद सुगंध प्रकार। बढ़ी दिसि दस्त स उज्जल मार ॥७५॥
बजैं बहु रंग सु गंधन भ्रंग। बजे सहनाइ नफेरि उपंग ॥
हलैं बर लत्त पवन्न झकोर। घरध्धर होहि पिलप्रित जोर ॥७६॥
बुलैं कल कंठ सु कंठह सद्द। तहां चढ कव्वि बसीठ उवद्द ॥
सकेत कुसंम रु अंकुस पानि। हने हर काम असो गज जानि ॥७७॥
अतसीबर पुप्फसु बाढ़हि भृंग। बजैं गज पांनि सु इंदुव रंग ॥
लता ललिताह हलावन ढाल। उतह जम लग्गय रूपति ताल ॥७८॥
विकसित केसर कुंकुम कांम। सरोज सुरंभ अनुपम नांम ॥
उहां मिटि ताम तरंगिनि कांम। उहां चलि ते निय ना तिहि ठांम ॥७९॥
उहां बरहा जनु उप्परि केल। किने तब ढीठ हिया छबि मेल ॥
हले जनु नेजे षजूर बसंत। ढली बनराइ सुढालह मंत ॥८०॥
तजी बर बाल सुरंग सुभेस। चल्यौ प्रथिराज सु दष्षिन देस ॥
विरदैं चहु विप्र कहै कवि चंद। सही चहुआंन प्रथी पर इंद ॥८१॥

॥ दूहा ॥

चढ्ढि चलिय प्रथिराज बर। देवग्गिरिध्धर राज ॥
तब सुकन्ह बरदाय बर। पुच्छिय बिगत सुकाज ॥८२॥

॥ कवित्त ॥

एक लष्ष दस अग्ग। सेन सज्जे कमधज्जं ॥
वीय सहस वारुन्न। सत्त हजार फवज्जं ॥
अद्ध लष्ष पैंदल्ल। अद्ध साइक्क बहंतं ॥
सजि समूह चतुरङ्ग। दिसा दच्छिन परजंतं ॥
मुनि श्रवन कुंअरि शशिवृत्त लिय। सुनि आवाज वर बीर घन ॥
चहुआंन वृत्त लीनी अध्रम। प्रान हीन कढ्ढन सुमन ॥८३॥

॥ दूहा ॥

बाल प्रान कढ्ढत सुपुनि। सगुन एक मन मान ॥
वढि आवाज चहुआंन की। अली सुन्यौ अप कान ॥८४॥
यों सु सनिय नृप भांन नैं। पुत्ति प्रलय व्रत कीन ॥
चर पिष्षिय चहुआंन पैं। जद्दव मोलक दीन ॥८५॥

॥ कवित्त॥

दुहूँ पास नृप नयर। राग दिष्षैं प्रति राजं॥
मनों हृथ्थ बर नयर। राज संमुह प्रति साजं॥
कोट कठिन मेखल सुं। कोटि द्रिग पलक उघारिय॥
राज किति संभरन। गोष श्रवनन संभारिय॥
किंकिन सुपाई घुंघर सु गज। राज निसान सबद्द प्रति॥
चहुआंन राव आगम सुव्रत। कमल हीय बढ्ढिय सुरति॥८६॥

॥ दूहा ॥

यों करंत दुत्तिय बियौ। कथा श्रवन सुनि मंत॥
जाकौ तें पतिवृत्त लिय। सो आयौ अलि कंत॥८७॥
श्रवन नयन को मेल कैं। भय चंचल चल चित्त॥
श्रोतानं दिष्टांन अरु। मिलि पुच्छैं दोइ मित्त॥८८॥

॥ चंद्रायना ॥

कर्न प्रयंत कटाछ सुरंग बिराजही॥
कछ पुच्छन कों जाहि पै पुच्छत लाजही॥
नेन सेन में बात जु श्रवनन सों कहै॥
काम किधों प्रिथराज भेद करि ना लहै॥८९॥

॥ दूहा ॥

नैन श्रवन्नन पूछई। तुम जानौ बहु मंत॥
मेरे जीय अंदेस है। कही न मैं पिय जंत॥९०॥
श्रवनन सन नेंना कही। तुम जानौ चहुआंन॥
काम नृपति कौ रूप धरि। आवत है इन थांन॥९१॥
ताम हंस आयौ समषि। कह्यो अहो शशिवृत्त॥
चाहुआंन आयौ प्रछन। मिलन थांन हर सित्त॥९२॥

॥ कवित्त ॥

घेरि गांम जद्दव नरिंद। उभ्भे चिहुँ पासं॥
पल नंषिय रंभा सु। करन आरंभ प्रवासं॥
एक एक गुन करहि। सब्ब फूले सत पत्तं॥
तिन मध्यह शशिवृत्त। भई कम्मोदनि मंत्तं॥
पित पुच्छिपुच्छिपरिवार सब। पुच्छि बंध रज्जन सकल॥
आवृत्त तात अग्या सुग्रहि। भइय बाल बुध्या विकल॥९३॥

॥ दूहा ॥

बिकल बाल जहं सफल हुआ । बुद्धि बिकल प्रति साज ॥
भान बचन सच्चै सुकरि । जिन अप्पी प्रथिराज ॥९४॥

॥ गाथा ॥

बीरं चंद सुब्याहं । सो ब्याहं जोगनी पुरयं ॥
संभरि क्रन शशिवृत्तं । अगम वीराइमं जनंत तयौ ॥९५॥

॥ कवित्त ॥

पुच्छि मात षित पुच्छि । पुच्छि परिवार ग्रेह सब ॥
मैं वृत्त लियौ निबद्ध । गवरि पुज्जनं बाल जब ॥
तिन थांनक सब देव । नीति आरंभ ब्रत लीनौ ॥
तव प्रसाद उप्पनौ । मोहि इच्छा व्रत दीनौ ॥
तिन काल ब्रत्त लीनौ सु मैं । गवरि प्रसाद सु पुज्ज फल ॥
बारंज बात तुअ मोह हुअ । कहै और अब लहिअ फल ॥९६॥

॥ दूहा ॥

दुष देवल कौ छंडनह । उर सिंचन अंकूर ॥
दीह काल बल बीचि बदि । लिय समान संपूर ॥९७॥

बाला बेनी छोरि करि । छुट्टै चिहर सुभाइ ॥
कनक थंभ तें ऊतरी । उरग सुता दरसाइ ॥९८॥

॥ छंद त्रोटक ॥

मय मंजन मंडित बाल तनं । घनसार सुगंध सुबोरि घनं ॥
नव लोइन अंजित मंजित चली । कि मनो कस कुंदन षंभ हली ॥९९॥

सुभ वस्त्र सुअंग सुरंगनसी । सुहली मनु साष मदन्न कसी ॥
जरि जेहरि पाइ जराइ जरी । सजि भूषन नम्भ मनौ उतरी ॥१००॥

सिगरी लट यों बिथरी बिगसें । शशि के मुख तें अहि से निकसैं ॥
रङ्ग रत्त उवट्टन उज्जल कै । तिन में कछु सेत सुधा चलि कै ॥१०१॥

नव राजिय रोम विराज इसी । जमना पर गंग सरस्वति सी ॥
परि पान सुकुंकुम मज्जन कैं । नव नीरज अंजन नैननि कै ॥१०२॥

॥ कुंडलिया ॥

करि मज्जन सज्जन सुक्रम । आभूषन न समान ॥
केहं काके कोहि दिसि । सज सषि नैन कमान ॥

सजि सषि नैन कमान । केश बागुरि बिस्तारिय ।।
हावभाव कट्टाच्छ । ठुंकि षुट्टी दिय भारिय ।।
बैठि नैन नृप मूल । पेम देषन गह सज्जन ।।
मन मृग पिय कृत काज । ताकि बंधन किय मज्जन ।।१०३।।

।। छंद नराच ।।

सुगंध केस पासयं । सुलग्गि मुत्त छंडियं ।।
अनेक पुष्प बीचि गुंथि । भासिता त्रिषंडियं ।।
मनों सनाग पुप्फ जाति । तीन पंथि मंडियं ।।
दुती कि नाग चंदनं । चढंत दुद्ध पंडियं ।।१०४।।

सिंदूर मध्य गुच्छत । अगंमदं बिराजयं ।।
मनों कि सुर उग्गतें । गहे सु पुत्र लाजयं ।।
सुतुच्छ सुच्छ पाट आट । पेम बाट सोभियं ।।
मनों कि चंद राहु वान । बे प्रमान लोभयं ।।१०५।।

कनक्क काम कुंडिलं । हलंत तेज उब्भरे ।।
सभी सहाइ मान भाई । सज्जि सूर दो करे ।।
दुती उपम्म विंद की । किरन्न चंद दिठ्ठयं ।।
मनों कि सूर इंद गोदिं । अप्प आनि बिठ्ठयं ।।१०६।।

भुवन्न बंक संक जूअ । नैन अग्ग जूवयं ।।
उरद्धता चपल्ल गत्ति । अच्छ आनि ऊवयं ।।
कटाच्छ नैन बंक संक । चित्त मान बंकयं ।।
सुछंडि वै सु कुंचितं । श्रवन्न बान नंषयं ।।१०७।।

सुगंधता अनेक भाँति । चीर चारु मंडियं ।।
सु केहरी कटि प्रमान । बीच बंधि छंडियं ।।
सुरंग अंग कंचुकी । सुभंत गात ता जरी ।।
बनाइ काम पंच बान । ओट जोट लै धरी ।।१०८।।

सुरंग माल लाल बाल । ता विलास छंडयं ।।
सु पुब्ब पैर जानि काम । अग्गि संभ मंडयं ।।
जु भारती सु गङ्ग वै । सुमेर श्रृंग तें बही ।।१०९।।

जराइ चौकि स्याम पाट । रत्ति पत्ति तें पुली ।।
सुरंग तिथ्थ थान मंडि । ईस शीश तें चली ।।

सुवनं छुद्र घंटिकादि । षोडसं बषानयं ॥
सु मुत्तिता तमोर तन्न । सादरं बषानयं ॥११०॥

सुगंध गोप चिह्न मंडि । पीत रत्त जावकं ॥
अभूषनं धरंता चित्त । मित्त हित्त शावकं ॥
बनाइ के चौंडोल लाल । चढ्ढिता सु सुन्दरी ॥
सुदोषिता सुरंग थांन । अस्तु तास उच्चरी ॥१११॥

॥ दूहा ॥

सजि श्रृङ्गार शशिवृत्ततम । चढ़ि चौंडोल सुरंग ॥
पूजन कौं बर अंबिका । आई बाल सु अंग ॥११२॥

॥ छन्द नाराच ॥

चली अली घनं बनं । सुभंत सथ्थ संघनं ॥
बिहंग भंगयो पुरं । चलंत सोभ नोपुरं ॥११३॥

अलीन जुथ्थ आवरं । मनो विहंग सावरं ॥
चुवंत पत्त रत्त जा । उवंत जानि अंबजा ॥११४॥

कलिंद सीम केसयं । अनंग अंग लोभयं ॥
उठंत कुंभ कुच्चयं । उपंम कब्बि सुच्चयं ॥११५॥

मनों जरंत बाल की । धरी सु आनि लालकी ॥
सुभंत रोमराजयं । प्रपील पंति छाजयं ॥११६॥

मनोज कूप नाभिका । चलंत लोभ आलिका ॥
सुरंग सोभ पिंडुरी । षरादि काम षिंडुरी ॥११७॥

नितंब तुंग सोभए । अनंग अंग लोभए ॥
मनौं कि रथ्थ रंभ के । सुरंभ चक्क संभ के ॥११८॥

नषादि आदि अच्छनं । मनों कि इंद्र द्रप्पनं ॥
ढारंत रत्त एडियं । उपम्म कब्बि टेरियं ॥११९॥

मनौं कि रत्त रत्तजा । चिकंत पत्र अंबुजा ॥१२०॥

॥ गाथा ॥

पढमे रष्षत बाले । लग्गा सेनाय पास चिहुँ बीरं ॥
धरि धीरं तन दुरयं । रोमं राज रोमयं अंचं ॥१२१॥

॥ दूहा ॥

बाल धरक्कति बचनि गति । ग्यान मोह विष पान ॥
त्यों कमधज्जें देषि कै । बर चितैं चहुआंन ॥१२२॥
शंकर रस आचार किय । मढ़ दिष्षिय प्रति जोइ ॥
मन लग्गिय बंधत सु पय । मन कंद्रप रस भोइ ॥१२३॥

॥ कवित्त ॥

दहति तीन चौंडोल । मध्य चौंडोल बाल भय ॥
भमर टोल झंकार । दासि बिंटिय सु पंच सय ॥
सित्त पंच असवार । पति मंडिय चावद्दिसि ॥
अद्ध लष्ष पैदल्ल । सथ्थ आयो सुअंग कसि ॥
मंगल विवेक विधि उच्चरे । बंधी बंदनमार करि ॥
उत्तरी बाल देवल सुढिग । लग्गि पाई परदच्छि फिरि ॥१२४॥

॥ गाथा ॥

जोइज्जै मन चरियं । हरियं एक कग्गयौ सबदं ॥
सब सेना मन कमधज्जं । विंटे वा वाल सर सायं ॥१२५॥
बर जैचंद सुबंधं । प्रोहित पंग रष्षियं आइयं ॥
सहचर चारु सुपढियं । हालाहलं बालयं मनयं ॥१२६॥

॥ दूहा ॥

चढ्यौ पुंज नव साज बर । अरु भर लिन्ने सथ्थ ॥
संभु थांन पूजन मिसह । चलि बर आयौ तथ्थ ॥१२७॥
तब लगि दल चहुआंन के । ग्रह गुपंति कर आइ ॥
रुक्कि सकै नन मध्य लिये । बोले संमुह धाइ ॥१२८॥

॥ कवित्त ॥

सहस सत्त कप्परिय । भेष कीनो तिन वारं ॥
गोप तेग गहि गुपत । कपट कावरि सब भारं ॥
किहुन फरस किहुँ छुरी । चक्र किन हाथन माही ॥
किन त्रिसूल किन डंड । सिंग सब सथ्थ समाही ॥
सा अंग सिद्ध अहुआंन लैं । दूतन दूत बताइ हरि ॥
सा अंग बाल उतकंठ करि । पैं लग्गी परदच्छि फिरि ॥१२९॥

॥ अरिल्ल ॥

फिरि परदच्छि बाल अपु लग्गी ॥
सुमन काम कामना सुभग्गी ॥
मन मन बंधि कियौ हथ लेवं ॥
सुमन मंत्र प्रारम्भ सुदेवं ॥१३०॥

॥ दूहा ॥

उतरि बाल चौंडोल तें। प्रीत प्रात्त छुटि लाज ॥
शिवहिं पूजि अस्तुति करी। मिलन करैं प्रथुराज ॥१३१॥

॥ कवित्त ॥

सहस सत्त कप्परिय। भेष कीनों तिन वारं ॥
कपट कंध कावरिय। धसिय देवी दरबारं ॥
सर्वं शस्त्र आरम्भ। हस्त आरम्भ सुरी सल ॥
धसिय भीर सम्मूह। जूह पाई समंडि कल ॥
दल प्रबल उदधि ज्यों मथन कज। भुज सुकिस्न चहुआंनकिय ॥
शशिवृत्त बाल रंभह समह। मिलिय गंठि बंधन सुहिय ॥१३२॥

दिठ्ठ दिठ्ठ लग्गी समूह। उतकंठ सु भग्गिय ॥
निष लज्जानिय नयन। मयन माया रस पग्गिय ॥
छल बल कल चहुआंन। बाल कुअंरप्पन भंजे ॥
दोष त्रीय मिट्टयौ। उभय भरी मन रंजे ॥
चौहान हथ्थ बाला गहिय। सो ओपम कवि चंद कहि ॥
मानों कि लता कंचन लहिर। मत्त बीर गजराज गहि ॥१३३॥

॥ चंद्रायना ॥

गहत बाल पिय पानि। सु गुर जन संभरे ॥
लोचन मोचि सुरंग। सु अंसु बहे षरे ॥
अपमंगल जिय जानि। सु नेंन मुष बही ॥
मनों षंजन मुष मुत्ति। भरक्कत नंषही ॥१३४॥

दुहू कपोल कल भेद। सुरंग ढरक्कही ॥
सज्जन बाल बिसाल। सु उरज षरक्कही ॥
सो ओपम कवि चंद। चित्त में बस रही ॥
मनु कनक कसौटी मंडि। म्रग्ग मद कस रही ॥१३५॥

॥ गाथा ॥

मृग मद कसयति चित्ते । भित्तं पुनरोपि चित्तयं बसयं ॥
अजहूँ कन्ह बियोगे । कालिंदी कन्हयो नीरं ॥१३६॥

गहियं गह गह कंठो । बचनं संजनाइं मिठ्ठयो कहियं ॥
जानिज्जै सतपत्तं । बंधे सदाइ भवरयं गहियं ॥१३७॥

तपतं दिल में रहियं । अङ्ग तपताइ उप्परं होइ ॥
जानिज्जै कसु लालं । घटनो अङ्ग एकयौ सरिसौ ॥१३८॥

अपमंगल अल बाले । नेनं नषाइ किसलयौ ॥
जानिज्जै धन कृपनं । सपमंतरों दत्तयं धनयं ॥१३९॥

॥ कवित्त ॥

गहि शशिवृत्त नरिंद । सिढि लंघत ढहि थोरी ॥
काम लता कल्हरी । पेम मारुत झकझोरी ॥
बर लीनी करि साहि । चंपि उर पुठ्ठि लगाई ॥
मन सुरंग सोइ बत्त । कंत लगि कान सुनाई ॥
नृप भयौ रुद्द करुना सुत्रिय । बीर भोग बर सुभर गति ॥
सगपन सुहास बीभच्छरिन । भय भयान कमधज्ज दुति ॥१४०॥

॥ दूहा ॥

बीर गत्ति संधिय सुमति । वृत्त अवृत्त न जाइ ॥
घरी एक आवृत्त रषि । सुबर बाल अनुराइ ॥१४१॥

बाल स बैर स बैर त्रिय । भान बिरुद्ध न कीन ॥
सकल सेन साधन धरी । कलहंकृत गति चीन्ह ॥१४२॥

॥ अरिल्ल ॥

आवृत्त वृत्त गुह निग्रह राज । देव जुद्ध देवत्तह साज ॥
है गै दल सज्जै तिहि बीर । हरी बाल चहुआंन सधीर ॥१४३॥

॥ कवित्त ॥

सबर बीर कमधज्ज । अरध अप्पिय षग मग्नं ॥
इष अच्छित उच्छरहि । जानि परिमानन मग्गं ॥
सार धार पुंषियै । बीर मंगल उच्चारै ॥
सबै साथ बंदियहि । सकल पूजा संभारै ॥

बर मुक्कि बरन बरनी सुबर। इह अपुब्ब पिष्यौ नयन।
उप्पनौ बीर सिंगार संग। रुद्र बीर चौरी नयन ॥१४४॥

॥ दूहा ॥

सिर सोहत बर सेहरौ। टोप ओप अति अङ्ग ॥
बगतर बागे केसरे। रुधि भीजत बिषमंग ॥१४५॥
सकट भग्ग लइबग्ग बर। कमधज बीर बिसेज ॥
मिले बीर बीरत्त बर। दोऊ दैवत तेज ॥१४६॥

॥ दूहा ॥

चाहुआंन कमधज्ज बर। मिले लोह छुटि छोह ॥
धार मुरै मुष ना मुरै। मरट मुच्छ क्रत जोह ॥१४७॥

॥ दूहा ॥

इह कहि कढ्ढिय सार कर। षोलि षग्ग दोउ पानि ॥
मानहु मत्त अनंग द्वै। धूत छुट्टै जम जांनि ॥१४८॥

॥ छंद भुजंगी ॥

मिले हथ्थ न सथ्थंस बथ्थं धारे। मनौ बारुनी मत्त गज दंत न्यारे॥
उडै लोह पंतो परै श्रोन रुंदं। मनौं रुद्धि धारा बरष्षंत बुंद॥१४९॥
घुमे घाय घायं अघायं अघायं। झुमै झारझारं झनक्कैं झकायं॥
करैं जोगनी जोग काली कराली। फिरै पेट धाये महा विक्कराली॥१५०॥
परै सूर वाहै बहथ्थी कृपानं। कढ़ी तांत बाढ़ी मलं चारि जानं॥
धमांधम्म सत्ती महो माहि धानों। पिंजारे सतं रूव पीजंत मानों ॥१५१॥
महादेव मालानि में गूथि मथ्थं। कहैं बारवाहं वहै सूर हथ्थं ॥१५२॥

॥ मुरिल्ली ॥

हाहरे रूष कायर प्रकार। छंडीत लज्ज अरु बीर मार ॥
अभ्यासै सूर जिन सूर रूप। दैवत्त भूप दिष्षै अनूप ॥१५३॥

॥ कवित्त ॥

विषम जग्य आरंभ। बेद प्रारंभ शस्त्र बल ॥
है गै नर होमियै। शीश आहुत्ति स्वस्ति फल ॥
क्रोधकुंड विस्तरिय। कित्ति मंडप करि मंडिय ॥
गिद्धि सिद्धि बेताल। पेषि पल साक्कत छंडिय ॥

तुंवर सु नाग किंनर सु चर । अच्छिरि अच्छ सु गावहीं ॥
मिलि दान अस्स अप्पन जुगति । भुगति मुगति तत पावहीं ॥१५४॥

॥ दूहा ॥

करि सुचार आचार सब । समद कित्ति फल दीन ॥
गुरुजन मिसि करुना करिय । कायर हाहूर कीन ॥१५५॥

॥ दूहा ॥

तब चहुआंन सु कन्ह वर । ठढ्डौ करि कुरुराज ॥
हुक्म नृपति छुट्टौति इम । जनु तीतर पर बाज ॥१५६॥

॥ कवित्त ॥

मुष छुट्टत नृप बैन । नैन दिठ्ठौ धावंतौ ॥
क्रंम बंध बंल मोह । छोह बंध्यौं सुबरत्तौ ॥
सुबर सेन चहुआंन । सिग जद्दुनं नवाई ॥
जनु मंदिर विय वार । ढंकि इक बार बनाई ॥
तकसीर करन दोउ अस बर । कित्त मग्ग करतव्य कर ॥
अथवंत रविह आदित्य दिन । अगनि सार बुढ्ढिय कहर ॥१५७॥

॥ गाहा ॥

मुष छुट्टा नृप बैनं । कै दिठ्ठाय धावता नैनं ॥
बज्जी वाहु सुवारं । धार ढारि मत्तयौ धरयं ॥१५८॥

॥ कवित्त ॥

भान कुंअरि शशिवृत्ति । नैन श्रृंगार सुराजै ॥
बीर रूप सामंत । रुद्र प्रथिराज बिराजै ॥
चंद अद्भ्भुत जानि । भए कातर करुनामय ॥
बीभछ अरिन समूह । सांत उप्पनौ मरन भय ॥
उप्पज्यौ हास अपछरि अमर । भौ भयान भवी बिगति ॥
कूरंभराव प्रथिराज बर । लरन लोह चिंते तरनि ॥१५९॥

॥ छंद भुजंगी ॥

कवि चंद सुबरनंन करै सुकरनं सूरह लरनं भर भिरनं ॥
तिरभंगी छंद नाग नरिदं कथ्थ करिंदं दुष हरनं ॥
षढमंइ दह मत्ता पुनि अठ मत्ता असुवसु मत्ता रस मत्ता ॥
घन घाइ सघत्ता रस सरत्ता मेगल मत्ता करि धत्ता ॥१६०॥

बज्जै बर कोहं लग्गै लोहं छक्कै छोहं तजि मोहं ॥
सूरा तन सोहं स्वामिन दोहं मत्तै ढोहं रिन डोहं ॥
बर बांन बिछुट्टै बगतर फुट्टै पारन षुट्टै अहुट्टै धर तुट्टै ॥
तरवारनि तुट्टै धम्मर लुट्टै अंग अहुट्टै गहि झुट्टै ॥१६१॥

वीरा रस रज्जं सुर सगज्जं सिन्धुअ बज्जं गज गज्जं ॥
अच्छरि तन मज्जं बरे बर जंजं चित्ते बज्जं मन मज्जं ॥
कायर रन भज्जं तज्जि सलज्जं स्वामि सुकज्जं भर सज्जं ॥
जम दढ्ढ सु सज्जे हथ्थह मज्जे छिन्छन लज्जे रिन रज्जे ॥१६२॥

॥ दूहा ॥

सुबर बीर षावास षिजि । षिझ्झकबढ्ढी सु बंकी अस्सि ॥
सोभै सीस गयंद कै । मनुं तेरस कौ सस्सि ॥१६३॥

॥ कवित्त ॥

सुवर बीर षावास । षिझ्झ बढ्ढी बंकि असि ॥
सुभै सीस गज राज । अद्ध तेरसि कि बाल ससि ॥
मुट्ठि चंपि द्रग पानि । नीर बानं सुद्धारह ॥
मनु मुत्तिय बारुन्न । बंदु बंधे इन बारह ॥
सा मरम देन पावरि धनि । स्वामि सु अंतर फुनि मिलिय ॥
जीरन युमास संदेस सदि । गल्ह एक जुग जुग चलिय ॥१६४॥

सुबर बीर कमधज्ज । राज संमुह चरि झारिय ॥
मरन षूंज षावास । मरन अप्पन्नौ बिचारिय ॥
सब सु सथ्थ पुच्छयौ । तंत मंतह उच्चारिय ॥
सकल मंत रजपूत । मंत मो देहु सुचारिय ॥
हारिये धूंम जित्तै सुसब । ता उप्पर तन रषियै ॥
मो मंतु सुनौ तौ हूँ कहूँ । दुज्जन दल बल भषियै ॥१६५॥

॥ गाहा ॥

अस्तमितं बर भानु । पाया नौ परम संतोषं ॥
जानिज्जै जस बंधुअं । नव चंदनं तिकयौ दीयं ॥१६६॥

॥ चंद्रायना ॥

दरि निसान गत भान भइग बर ॥
सिंधु संपतौ जाइ तिमिर चढै गुर ॥

कुमुद विमुद अंकूर सुरातन घरियं ॥
मानौं तम को तेज सु तत्तउ धरियं ॥१६७॥

॥ मुरिल्ल ॥

बर भान संपतौ थांन गुरं । सरसीरुह उद्दित मुदित वरं ॥
बर बीर कमोदनि की सु गती । भए रिसिराज उदोतपती ॥१६८॥

॥ दूहा ॥

निसि गत वंछे भान बर । भंवर चक्कि अरु सूर ॥
मंतह मत्त पयान गति । गर भारथ्य अंकूर ॥१६९॥

॥ कवित्त ॥

कुमुद उघरि मूँदिय । सु बंधि सतपत्त प्रकारय ॥
चकिय चक्क बिच्छुरहि । चक्कि शशिवृत्त निहारय ॥
जुवती जन चढ़ि कांम । जांहि कोतर तर पंषी ॥
अवृत्त वृत्त सुंरिय । काम बढ्ढिय बर अंषी ॥
नव नित्त हंस हंसिह मिलै । बिमल चंद उग्यौ सुनभ ॥
सामंत सूर नृप रष्षि कै । करहि बीर बीश्राम सभ ॥१७०॥

॥ अरिल्ल ॥

तत्त सार प्रति प्रतिप्रमानं । जाहु राज दिल्ली चहुआनं ॥
गुन बढ्ढे हम बढ्ढे सत्त्तं । दुष्ष मानि सुनि सुनिय विरत्तं॥१७१॥

॥ कवित्त ॥

दुष्ष मानि सो रत्त । सुनै सामंत सूर बर ॥
चंद उडगन काम । सर्‌यो कहुँ दिष्षि सूर नर ॥
भान काम नन सरे । अरुन जो होइ तेज वर ॥
काम राम नन सरै । हनू उद्योत लंकछर ॥
नन सरै काम मंगल सुबिधि । जो मंगल आक्रत्त तप ॥
सामंत सूर इम उच्चरै । कढ्ढि मोहि झुज्झहुति अप ॥१७२॥

॥ दूहा ॥

मुहि कढ्ढिरु तुम रहौ बर । जियत जांहि उन थान ॥
ऐसी रीति अरीत पर । पढ्ढी नह चहुआंन ॥१७३॥

॥ गाथा ॥

अंकुर बीर सुभट्टं । अघटं घट्टाइ क्रोधयो कलहं ॥
हय मुक्या चलि बंधी । निढुर सथ्थव सठयो बीरं ॥१७४॥

॥ दूहा ॥

बीर बीर वीराधि बर । कढे लोह तजि छोह ॥
सर धीर सामंत गति । नंहि माया नंहि मोह ॥१७५॥

॥ रसवाल ॥

जित्तें सूर पत्ती । लगै लौह तत्ती ॥
नचे सूर छत्ती । उडे काल तत्ती ॥१७६॥
जुटे जोध पत्ती । उडी रेन गत्ती ॥
सहा बेन तत्ती । कला कोटि कत्ती ॥१७७॥
ग्रवै ग्राव गत्ती । सुरं पंच छत्ती ॥
मचे कूह मत्ती । षचे रोस रत्ती ॥१७८॥
करे घाव कत्ती । इसे सूर चित्ती ॥
शिए फल्ल सत्ती । घुमें घाइ घत्ती ॥१७९॥
भजै भीम मत्ती । हनूमान जत्ती ॥
अनाभूत अत्ती । दिषे दारु दत्ती ॥१८०॥
रुधिं धार रुक्कं । भभक्कै भभक्कं ॥
धका धीग धक्कं । बकै मार बक्कं ॥१८१॥
इसे चित्त अक्कं । छटे मत्त छक्कं ॥
डकारंत डक्कं । त्रिलोकंत हक्कं ॥१८२॥
मनो मोह थक्कं । हको हक्क बक्कं ॥१८३॥

॥ कवित्त ॥

हको हक्कि बज्जिय प्रकार । सार बज्जैं सु वीर बर ॥
सु बुधि बुद्ध आबुद्ध । मत्त लगै असि बर झर ॥
इकत रुद्ध आरुद्ध । नद्द नारद अधिकारिय ॥
रंभ सिंभ आरंभ । सिद्ध बुद्ध दै तारिय ॥
धनि धन्नि सूर दिन धनित बल । छल छत्तिय अंकूर रजि ॥
कलहंत काल काहल बिषम । सुबर बीर बीरत्त रजि ॥१८४॥

॥ दूहा ॥

स्वामि काज लग्गे सुमति। षंड षंड धरि धार॥
हार हार मंडे हिये। गुथ्थि हार हर हार॥१८५॥

॥ कवित्त ॥

घटिय पंच दिन घट्यो। उमरि आरब्ब पुंज षिरि॥
एक दिना दोउ सेन। मोह छंड्यौ क्रम निक्करि॥
बान गंग पत्तयौ। बीर ग्यारसि दिन सोमं॥
सूर धीर सामंत। सूर उड्डे रन रोमं॥
क्रत काम काज सांई विभ्रम। दल दंतिय पंतिय गमै॥
सामंत सूर साई बिभ्रम। रोम रोम राजी भ्रमै॥१८६॥

॥ दूहा ॥

रोम राज राजी भ्रमहि। थोर थनी ढुंढि बाल॥
उतकंठा उतकंठ की। ते पुज्जी प्रतिपाल॥१८७॥

॥ गाथा ॥

आरंभ प्रारंभौ। उतकंठा किनयौ बृतयं॥
साधा धरी सु धरयं। नन छुट्टै तीनयौ पनयं॥१८८॥

॥ दूहा ॥

नह चल्लै पृथिराज रिन। लज्ज लपट्टिय पाइ॥
त्रिय जोरै कर हथ्थ दो। चलि संभरिवै राइ॥ ॥१८९॥

तूं वै एकह पन रहै। रंग कसुंभ प्रमान॥
हों नन छंडों पास तुअ। तीनों पनह समान॥१९०॥

तूं लज्जी मो सथ्थ है। दान षग्ग अरु रूप॥
मो चल्लै तीनों चलैं। संची चवै न भूप॥१९१॥

परे सुमर दोऊन दल। निढ्ढर तेष्यौ बंध॥
कौन भुजा बल जुध करै। सुनि कमधज्ज अमुंद्ध॥१९२॥

बाला लै प्रथिराज गय। गहिय बग्ग कमधज्ज॥
रोस रीस बिरसोज भय। रह बाजे अनबज्ज॥१९३॥

॥ कवित्त ॥

अद्ध कोस नृप अग्ग। बीर ठढ्यौ करि ठढ्ढौ॥
मद समूह गजराज। छंडि पट्टै बल गढ्ढौ॥

लाज बंधि संकरिय । वीर बंध्यौ सु अष्ट कसि ॥
अरिन बौर छंडे न । क्रन्न मंडै दिलीय दिसि ॥
मनमत्थ महाबत बंधि अति । मन मत्तौ उन को धरै ॥
धन घाइ रुधिर छुट्टै परे । अमर पुहप पूजा करै ॥१९४॥
षूब राज प्रथिराज । षूब जैचंद बंध बर ॥
षूब सूर सामंत । षूब नृपु सेन पंग बर ॥
षूऊ सेन बिधि गाम । बानगंगा पथ झारिय ॥
आसेर आस छंडिय नृपति । बिपति संपति जानी भरय ॥
सुठिहार राज प्रथिराज को । धरै सबइ चौंडोल घर ॥१९५॥

॥ दूहा ॥

चहुआंन चतुरंग जिति । निगम बोध रहि राज ॥
बर शशिवृत जित्तिगौ । धाम सु ढिल्ली साज ॥१९६॥

॥ दूहा ॥

सारिन सालै पंस बर । सरि पंस बर भोग ॥
सुबर सूर सामंत लै । करि ढिल्ली प्रति जोग ॥१९७॥
जै जै जस लद्धौ सुबर । बैर नृपति सुरतान ॥
सुबर बैर बर बड्ढयौ । सुबर जित्त चहुआंन ॥१९८॥

॥ कवित्त ॥

भई जीत चहुआंन । अरिय भजे अभंग भर ॥
जै जै सूर बषान । देव नंषैं सुमन्न बर ॥
लै शशिवृत्ता राज । अप्प दिल्ली संपत्तौ ॥
अरि अवनि कोन मंडै मनहु । षग्ग दाग अरि षंडइय ॥
कवि चंद दंद दारुन कयहि । इक अडंड कारि डंडइय ॥१९९॥

कैमास करनाटी प्रसंग

॥ कवित्त ॥

दिंल्ली चहुआंन । तपै अति तेज षग्ग बर ॥
चंपि देस सब सीम । गंजि अरि मिलय धनुद्धर ॥
रयन कुमर अति तेज । रोहि हय पिट्ठ बिसंमं ॥
साथ राव चामंड । करै काल कित्ति असंमं ॥
मेवास बास गंजै द्रगम । नेह नेह बढ्ढै अनत ॥
मातुलह नेह भानेज पर । भागनेय मातुल सुरत ॥१॥

सयन इक्क सवसहि । इक्क आसन्न आश्रम्महि ॥
बीरा नद्द विहार । भार जल राह सुरम्महि ॥
भागनेय मातुलह । जानि अति प्रीति सु उम्मर ॥
चिंति चंदपुंडीर । कही प्रति राज हित्त भर ॥
चावंड रयन सिंघह सुघर । अप्प दह बंध्यौ असम ॥
जानौसुक्रत्य कारनह कलि । कलै ध्रम्म धरनिय बिसम ॥२॥

राज काज दाहिम्म । रहै दरबार अप्प बर ॥
आषेटक दिल्लिय । नरेस षेलै कमंध डर ॥
देस भार मंत्रीस । राव उद्धा सु धारे ॥
न को सीम चंपवै । हद्द तपै सु करारै ॥
लोपौ न लीह लज्जा सयल । स्वामि ध्रम्म रष्षै सुरुष ॥
क्रत नीति रीतिबड्ढै बिसह । बंछै लोक असोक सुष ॥३॥

राज चित्त कैमास । चित्त कैमास दासि गय ॥
नीर चित्त बर कमल । कमल चित्त बर भान गय ॥
भंवर चित भमरी सु । भंवर रत्तौ सु कुसम रस ॥
ब्रह्म लोय रत्तयौ । लोय रत्तौ सु अधम रस ॥
उतमंग ईस धरि गंग कौ । गंग उलटि फिर उदधि मिलि ॥४॥

॥ दूहा ॥

मंदी देश बनिक सुअ । बेसब नंजन वृत्त ॥
बीन जान रस बन सुधर । राजन रष्षिय हित्त ॥५॥

॥ कवित्त ॥

समुष समुष ग्रह राज। महल साला सुरूव रंग ॥
तहं सु रोहि कयमास। सजन आवरिय अप्प अंग ॥
ऊँच महल करनाटि। देषि डंबर घन अंमर ॥
बैठी गवष ससषि। सुमन मंती अरु संमर ॥
समदिट्ठि डिट्ठ दाहिम्म दुअ। अग्नि मार उन्मार चित ॥
अंकूरि द्रष्ट अन्तर उरिय। प्रीति परट्ठिय कालक्रत ॥६॥

नव जोवन श्रृंगार करि। निकरि गवषहु पास ॥
देषि उझकि बर सुंदरी। काम द्रष्टि कयमास ॥
क्रन्नटिय कैमास। प्रिष्ठ देखत मन लग्गो ॥
कलमलि चित्त सुहित्त। मयन पूरन जुरि जग्गो ॥
गयो ग्रेह दाहिम्म। तलप अलपं मन किन्नौ ॥
बोलि अप्प सो दासि। काम कारन हित दिन्नौ ॥७॥

लै मंत्र राज अप्प सिरिस। जौ हम आनैं चित्त हर ॥
सम चली दासी कैमासदिसि। जपिय भेव सनेह बर ॥८॥

॥ दूहा ॥

निसि भद्दव कद्दव कहल। आषेटक प्रथिराज ॥
दाहिम्मौ दहि काम रत। काल रैनि कै काज ॥९॥

॥ कवित्त ।

मध्य महल कैमास। दासि सम अप्प संपत्तौ ॥
ग्रेह निकट पामारि। काम कामना न मत्तौ ॥
घन सुगंध सुर भास। जनि वित इंछिनी चिंतिय ॥
आषेटक दिल्लेस। कहा सुर वास सु भत्तिय ॥
निसि स्याम त्रिलजि त्रियावसन। ढयौ अप्सिढ्ढिय सुमन ॥
इष्यौ सुद्वार इंछिनि तड़ित नर। सुपत्ति कोइ काम रत ॥१०॥

सनमुष साला सुभट। सकल विश्राम नींद भर ॥
जाम देव बलिभद्र। बरन चहुआंन संघहर ॥
तोंवर राय पहार। सिंघ रनभय पावारं ॥
लंगी लंगरराव। सर सा अल्ह कुआरं ॥

आजानबाहु गुज्जर कनक। सोलंकी सारंग बर ॥
सामलौ सूर आरज कमंध। बाम जु इष्ष विसग्ग भर ॥११॥
सुनिय सु नूपुर सद्द नृप। सषी स चिंतिय चित्त ॥
मन्निय कारन सिद्ध मनि। नृप गति दुक्रित नित्त ॥१२॥

॥ चंद्रायण ॥

छतिय हथ्थ धरतं नयंनन चाहुयौ ॥
दासिय दष्षिन हथ्थ सुबंधि दिषाययौ ॥
जिय बाना बलवान रोस रस दाहयौ ॥
मानहु नाग पनित्त अप्प जगावयौ ॥१३॥

॥ दूहा ॥

बंचि बीर कग्गद चरहु। तरकि तोन कर सज्ज ॥
निरतिन कह दीनों नृपति। सब सामंतन लज्ज ॥१४॥
आयौ नृप इंछिनि महल। राज रीस चित मानि ॥
अगनि दझ्झ कैमास कैं। बीर बरन्निय पानि ॥१५॥
सुन्दरि जाइ दिषाइ करि। दासी दहुँ दाहिम्म ॥
बर मंत्री प्रथिराज कहि। दह दुबाह वर क्रम्म ॥१६॥
न दानव न देवगति। प्रभु मानुष वर चिह्न ॥
सु रस पवारि गवारि कह। प्रौढ़ मुगध मति किह्न ॥१७॥
रमनि पिष्षि रमनिय बिलसि। रजनि भयानक नाह ॥
चित्र दिषात सु चित्रंनी। मोन विलग्गिय बाह ॥१८॥
नीच गान नीचहु जनि। विलसन कित्ति अभग्ग ॥
सुनहु सरूप सु मुत्ति कर। दासि चरावति कग्ग ॥१९॥
कर कुंवंड लीनौ तंमिक। अरुचि दान विधि जोय ॥
चरिय कग्ग तरवर सबै। हंसनि हंसन होइ ॥२०॥
निसि अद्धी सुभझैं नहीं। बर कैमासय काज ॥
तड़ित करिग अंगुलि धरम। बान भरिग प्रथिराज ॥२१॥
बन लग्ग कैमास उर। सो ओपम कवि पाइ ॥
मनों हृदय कैमास कै। हथ्थै मुझ्झिय लाइ ॥२२॥

॥ कवित्त ॥

भरिग बान चहुआंन। जानि दुरदेव नाग नर ॥
दिट्ठ मुट्ठि रस डुलिग। चुक्कि निकरिग्ग इक्क सर ॥

दुति आनि दिय हथ्थ। पुट्ठि पामार पचार्‌यो ॥
बानि वृत्त तुटि कंत। सुनत धार धरनि अषार्‌यो ॥
इय कब सब सरसै गुनति। पुनित कह्यौ कवि चंद तत ॥
यों पर्‌यौ कैमास आवास तें। जानि निसानन छित्रपति ॥२३॥
जिन मंत्री कैमास ग्रेह जुग्गिन पुर आनी ॥
जिन मंत्री कैमास बंध बंध्यौ पंगानी ॥
जिन मंत्री कैमास जिवन बंध्यौ षट बार ॥
सो मत्त घट्ठ कैमास की दासि काज संदेह हुअ ॥
दुप्पहर चाह दस दिसि फिरै कोइ छत्री ग्रब्बहन तुअ ॥२४॥

॥ दूहा ॥

षनि गाड्यौ कैमास तह। दासी सभ करि भंग ॥
पंच तत्त सरसै सुषै। प्रात प्रगट्टै रंग ॥२५॥
जो तक पंगति उप्पज्यौ। वैनन दिषि कवि चंद ॥
साम प्रगत बर कंधनह। बर प्रमाद मुष इंद ॥२६॥
घषनि गह्यौ नृप सम धनह। सो दासी सुर पात ॥
दिन धारनें जलद्धिते। लाली कहिग सु प्रात ॥२७॥
षनि गड्डौ तिहि गब षनह। तजि गौषति गइ दासि ॥
षनि गड्डौ कैमास गर। कित दै दासी भासि ॥२८॥
सबै सुर सामंत जुरि। बिना एक कैमास ॥
तस जानौ बरदाइ पन। मंत्रि जोग नन षास ॥२९॥

॥ अरिल्ल ॥

प्रथम सूर पुच्छै चहुआंनय। है कयमास कहौ कहुँ जानय ॥
तरनि छिपत संझ सिर नायौ। प्रात देव हम महल न पायौ ॥३०॥

॥ दूहा ॥

उदय अस्त तौ नयन दिठि। जल उज्जल ससि कास ॥
मोहि चंद है विजय मन। कहहि कहाँ कैमास ॥३१॥
जो छंडै सेसह धरनि। हर छंडै विष कंद ॥
रवि छंडै तप ताप कर। बर छंडै कवि चंद ॥३२॥
हठ लग्गौ चहुआंन नृप। अंगुलि मुष्ष फुनिंद ॥
तिहुँपुर तुअ अति संचरै। कहै बनै कवि चंद ॥३३॥

जी पुच्छै कविचंद सों। तौ ढंकी न उघारि ॥
बअ कित्ती उषर चंपौ। सिंचन जानि गमारि ॥३४॥

॥ कवित्त ॥

एक बान पहुमी। नरेस कैमासह मुक्यौ ॥
उर उप्पर थरहर्यौ। बीर कष्षतर चुक्यौ ॥
वियौ वान संधान। हन्यौ सोमेसर नंदन ॥
गाढ़ौ करि निग्रह्यौ। षनिव गठ्यौ संभरि धन ॥
थल छोरि न जाइ अभागरौ। गाह्यौ गुन गहि अग्गरौ ॥
इम जंपै चंद बरद्दिया। कहा निघट्टै इय प्रलौ ॥३५॥

॥ दूहा ॥

सुनि नृपति कवि के वयन। अनन वीय अवरेष ॥
कविय वचन सम्हौ भयौ। सूर कमोदनि देष ॥३६॥

॥ कवित्त ॥

राजन मज्झ संपरिय। पट्ट दरबार परठ्ठिय ॥
बहुरे सब सामंत। मंत्त भग्गिय सिर लट्ठिय ॥
रह्यौ चंद बरदाइ। विमुष पग डगन सरक्क्यौ ॥
ग्रभ्भ तेज वर भट्ट। रोस जल षिम षिन सुक्क्यौ ॥
रत्तरी कंत जागंत रै। भई घरंघर बत्तरी ॥
दाहिम्म दोस लग्ग्यौ षरौ। मिटै न कलि सों उत्तरी ॥३७॥

॥ दूहा ॥

इह कहि ग्रेह चंद संपन्नौ। बर कैमास आसु भलपन्नौ ॥
मित्रद्रोह भट उर संपन्नौ। दाहिम बरन बरन संपन्नौ ॥३८॥

कनवज्ज समय

॥ चौपाई ॥

बैठौ राजन सभा विराजं । सामंत सूर समूहति साजं ॥
विस्तरि राग कलाक्रत भेदं । हरषित ऋदय असम सर षेदं ॥१॥

॥ दूहा ॥

तत्त समै राजिंद बर । अपि सु षवरि अच्छत्त ॥
जंगम एक सु काय कहि । कमधज पुर पति बत्त ॥२॥
सत्त हेम है राज इक । दिय पातुर प्रति दान ॥
नृत्ति विगति अवलोकिगुन । दई सीष थह मानि ॥३॥
पुनि जंगम प्रति उच्चरिय । कमधज्जन की कथ्थ ॥
बहुरिभिन्न करि उच्चरिय । सुनि सामंत सु तथ्थ ॥४॥

॥ चौपाई ॥

राज जग्य सज्ज्यौ कमधज्जं । देस देस हुंकारत सज्जं ॥
मिलि इक कोटि सूर भर हासं । नृप अंदेश देस रचि तासं ॥५॥
थपि दर द्वारपाल चहुआनं । लकुटिय कनकहथ्थ परिमानं ॥
आय पंग तट इष्ष समाजं । आनि अप्प चहुआंन सुलाजं ॥६॥
इह सु कथा पहिली सुनि राजन । आय कही सोफा फुनि साजन ॥
लग्यौं राज श्रोतान रजानं । बुझ्झी बहुरि सुजंगम जानं ॥७॥

॥ कवित्त ॥

आवलि पंग नरेस । देस मंडन सुबेस बर ॥
बरन कज्ज चौसर । बिचार संजोग दीन कर ॥
देवनाथ कवि अग्ग । बरनि नृप देस जाति गुन ॥
फुनि अष्षै संजोग । कनक विग्रह सु द्वार उन ॥
चहुआंन राव सोमेस सुअ । प्रथीराज सुनि नाम बर ॥
गंध्रव्व वचन बिच्चारि उप । धरि चौसर प्रथिराज गर ॥८॥

॥ दूहा ॥

देषि फेरि कहि नाथ पति । फुनि मुक्कलि कविराज ॥
बहुरि जाहु पंगानि अग । विचरै नृपति समाज ॥९॥

॥ कवित्त ॥

बहुरि नाम गुन जाति । देस पित प्रपित बिरदवर ॥
लैं लै नाम पराम । देवजानी सु देव कर ॥
फुनि चहुआंन सु पास । जाय ठढ्ढे भय जामं ॥
कछु कवि रद्दिय राज । कछुक जंपे गुन तामं ॥
नृप लज्ज पंग ग्रह भट्ट वर । तुच्छ संषेप सु उच्चर्‌यौ ॥
संजोग समझ्झे उरु वरह । कंद प्रथ्थु चौसर धर्‌यौ ॥१०॥

॥ दूहा ॥

दुसर राज इह देषि सुनि । तिय सु नाथ उर जाम ॥
संपत हथ्थ सुर जा धरिय । प्रचरि नरेसनि ताम ॥११॥

॥ कवित्त ॥

फुनि नरेस आदेस । नाथ धिरि आय मझ्झ दर ॥
आदि वंस रचि नाम । चवत विक्रम्म क्रम्प बर ॥
दई पानि कबि जानि । होत काहू कर मंडं ॥
भूत भविष्षत बत्त । भव्वि जानी उर चंडं ॥
उतकंठ लोकि प्रतिमा प्रतषि । दिष्षि देव देवाधि सचि ॥
बरनी संजोग चहुआंन बर । पहुप दाम ग्रीवा सु रचि ॥१२॥

॥ दूहा ॥

कोप कलंमल पंग पहु । समय बिरंचि बिचारि ॥
रोस मोस उर धारि तब । क्रम मति भई न चारि ॥१३॥
उठ्ठि राज अंदरह दर । कियौ प्रवेस अपान ॥
बिमुष निमुष दिष्यौ नृपति । देव क्रत्य परमान ॥१४॥

॥ कवित्त ॥

दइल काल सुनि पंग । जग्य बिग्गर्‌यौ दच्छपति ॥
द्रुपद राय पंचाल । जग्य बिग्गर्‌यौ इष्ट रति ॥
दइय काल दुजराज । जग्य बिग्गर्‌यौ सु जानं ॥
नघुष राइ राज सू । गत्त जानी परमानं ॥
श्रुति बर पुरान श्रोत सबल । विधि बिचार मंडिय सकल ॥
त्रय काल काल सामंत कहि । दइय काल माने अकल ॥१५॥

॥ दूहा ॥

आदि कथा संजोग की। पहिलें सुनी नरेस ॥
अब इह जंगम आय कहि। विधि मिलवन संदेस ॥१६॥

॥ कवित्त ॥

रचि आवास रा पंग। गंग दंगह उतंग तट ॥
दासि सरस सुंदरिय प्रसंग। कल ग्यान भाव पट ॥
वृत उचार चहुआंन। धरत कर करत अप्प पर ॥
पंच धेन पूजंत। बचन मन क्रम्म गवरि हर ॥
सुनि पुनि नरेश संदेस दिढ़। सोफी फुनि जंगल कहिय ॥
आरत्ति चरित चहुआंन मन। दहय भेद चित्तह गहिय ॥१७॥

॥ दूहा ॥

पहिल ग्यान जंगम कहिय। दुतियां सोफी आनि ॥
तब प्रथिराज नरिंद ने। दैव काल पहिचान ॥१८॥

॥ पद्धरी ॥

लाग्यौ सुराज श्रोतान राग। संयोग वृत संभरि समाग ॥
अति असमबान बेधे शरीर। नह धीर हसं नह भाव धीर ॥१९॥

॥ दूहा ॥

लग्गि बान अनुराग उर। मनमथ प्रेरि बसंति ॥
सहै नृपति अष्षै न कहुँ। षेदे रिदय असंत ॥२०॥

॥ कवित्त ॥

दंग सुरंग पलास। जंग जीते बसंत तपु ॥
मदन मानि मन मोद। लीन छेदे प्रच्छेद वपु ॥
देश नरेश अहेस। देस आदेस काम पर ॥
नीर तीर नाराच। पंग वेधे अवेध पर ॥
कलमलत चित्त चहुआंन तब। उर उपजै संजोग वृत ॥
बरदायबोलितिहिकालकवि। मन अनंत मति उधृति ॥२१॥

॥ दूहा ॥

सुक बरनन संयोग गुन। उप लग्गे छुटि बान ॥
षिन षिन सल्लै वार पर। न लहै वेद बिनान ॥२२॥

भय श्रोतान नरिंद मन। पुच्छै फिरि कविरज्ज ॥
दिष्षावै दल पंगुरौ। धर ग्रीषम कनवज्ज ॥२३॥

॥ कवित्त ॥

दीसै वह विध चरिय। सुअन नर दुअन भनिज्जै ॥
बल कलियै अप्पान। कित्ति अप्पनी सुनिज्जै ॥
होंडिज्जै तिहि काज। दुष्ष सुष्षह भोगिज्जै ॥
तुच्छ आव संसार। चित मनोरथ पोषिज्जै ॥
दिष्षियै देस कनवज्ज वर। कही राज कवि चंद कहि ॥
मुक्कही सूर छल संग्रहै। तौ पंग दरसन तत्त लहि ॥२४॥

॥ दूहा ॥

पुच्छि गयौ कविचंद को। इंछिनी महल नरिंद ॥
सुंदरि दिसि कनवज्ज कौ। चलै कहै धर इंद ॥२५॥
इन रिति सुन चहुआंन वर। चलन कहै जिन जीय ॥
हों जानूं पहिले चलै। प्रान प्रयान कि पीय ॥२६॥
प्रान ज्वाब दूनो चलै। आन अटक्कैं घंट ॥
निकसन को झगरौ पर्यौ। रुक्यौ ग्रदग्गद कंठ ॥२७॥

॥ साटक ॥

स्यामंगं कलधूत नूत सिषरं, मधुरे मधु वेष्टिता ॥
वाते सीत सुगंध मंद सरसा, आलोल संवेष्टिता ॥
कंठ कंठ कुलाहले मुकलया, कामस्य उद्दीपने ॥
रत्ते रत्त वसंत मत्त सरसा, संजोग भोगायते ॥२८॥

॥ कवित्त ॥

मवरि अंब फुल्लिग। कदंब रयनी दिघ दीसं ॥
भवर भाव भुल्लै। भ्रमंत मकरंदव सीसं ॥
बहत बात उज्जलति। मौर अति विरह अगनि किय ॥
कुहकुहंत कल कंठ। पत्र राषस रति अग्निय ॥
पयलग्गि प्रान पति बीनवों। नाह नेह मुझ चित धरहु ॥
दिनदिन अवद्धि जुब्बन घटय। कंत बसंत न गम करहु ॥२९॥
धुम्र चलिय बन पवन। भ्रमत मकरंद कंवल कलि ॥
भय सुगंध तहं जाइ। करत गुंजार अलिय मिलि ॥

बल हीना डगमगहि । भाग आवै भोगी जन ॥
उर घर लगै समूह । कंपि भौ सीत भयत नन ॥
लपरी ललित सब पहुप रति । तन सनेह जल पबित किय ॥
निक्करै भ्रंग अंबुज हरुअ । सीत सुगंध सुमंद लिय ॥३०॥

॥ साटक ॥

लै बंधं सुर थट्ट डंक्रित मधू, उन्मन्त्त भ्रंगी धुनी ॥
कंद्रप्पे सु मनो बसंत रमनं, प्राप्तो धनं पावनं ॥
कामं तेग मनं धनुष्ष सजनं, भीतं वियोगी मुनि ॥
विरहिन्या तन ताप पत्त सरसा, संजोधिनी सोभनं ॥३१॥

॥ कुंडलिया ॥

इहि रिति मुक्कि नबाल प्रिय । सुष भारी मन लुट्टि ॥
कामिनी कंत समीप बिन । हुई षंड उर फुट्टि ॥
हुई षंड उर फुट्टि । रसन कुह कुह आरोहै ॥
चलन कहै जो पीय । गात वर भग्गो सोहै ॥
नयन उमगि कन वीय । सोभ ओपम पाई जिहि ॥
मनों षंजन बिय बाल । गहिय नंषत सुत्तिय इहि ॥३२॥

॥ दूहा ॥

इहि रिति रष्षिय इंछिनिय । भय ग्रीषम रितु चारु ॥
काम रूप करि गय नृपति । पुडीरनी दुआर ॥३३॥
सूनि सुन्दरि पहुँ पंग की । दिसि चालन कौ मज्ज ॥
बर उत्तम धर दिष्षियैं । पिष्षन भर कनवज्ज ॥३४॥
नृप ग्रीषम ग्रिह सुष्षनर । ग्रेह मुक्कि नन राज ॥
गोमगांम छादिय अमर । पंथ न सुज्झे आज ॥३५॥

॥ कवित्त ॥

दीरघ दिन निस हीन । छीन जलधर वैसंनर ॥
चक्रवाक चित मुदित । उदित रवि थकित पंथ नर ॥
चलत पवन पावक । समान परसत सुताप मन ॥
सुकत सरोबर मचत । कीच तलफंत मीन तन ॥
दीसंत दिगम्बर सम सुरत । तरु लतान गय पत्त झरि ॥
अक्कुलं दीह संपति बिपति । कंत गमन ग्रीषम न करि ॥३६॥

दीहा दिघ्घ सदंग कोप अनिला, आवर्त मित्ता करं ।।
रेनं सेन दिसान थान मिलनं, गोमग्ग आडंबरं ।।
नीर नीर अपीन छीन छपया, तपया तरुण्या तनं ।।
मलया चंदन चंद मंद किरनं, ग्रीषमं च आषेवनं ।।३७।।

।। कवित्त ।।

पवन त्रिविध गति मुक्कि । सेन भुअ पत्ति जूथ चलि ।।
विरह जाम बर कदन । मदन मैमंत पील हलि ।।
पथिक वधू संभरै । आस आवन चंदाननि ।।
जो चाले चहुआंन तौ । मरै फुट्टि उर ब्रंननि ।।
मन भुअन आन दैतो फिरै । प्रिय आगम गज्जै मयन ।।
कंता न मुक्कि बप कित्तिगर । कहूँ सुनो सोनिय बयन ।।३८।।
षिन तरनी नी तन तपै । बहै नित बाव रयन दिन ।।
दिसि च्यारों पर जलै । नहि कहों सीत अरध षिन ।।
जल जलंत पीवंत । रुहिर निसि वास निघट्टे ।।
कठिन पंथ काया । कलेस दिन रयनि सघट्टे ।।
त्रिय लहै तत्त अष्षर कहै । गुनियन न ग्रब्ब न मंडिये ।।
सुनि कंत सुमति संपति बिपति । ग्रीषम ग्रेह न छंडिये ।।३९।।

।। गीत मालची ।।

त्रिय ताप अंगति दंग दवरति दवरि छब रित भूषनं ।।
कुरु मेह षेहति ग्रेह लुंपिति स्वेद संवित अंगनं ।।
नर रहित अनहित पंथ पंगति पंगयौ जित गोधनं ।।
रवि रत्त मत्तह अब्भ उद्दिक कोप कर्कस मोषनं ।।४०।।
जल बुठ्ठि उठ्ठि समूह बल्लिय मनों सावन आवनं ।।
हिंडोल लोलति बाल सुष सुर ग्रामं सुर सुर गावनं ।।
कुसमंग चीर गंभीर गंधित मुंद बुंद सुहावनं ।।
ढलकंत बेनिय तठ्ठ ऐनिय चंद्र सेनिय आननं ।।४१।।
ताटंक चंचल लजित अंचल मधुर मेषल रावनं ।।
रव रंग नूपुर हंस दो सुर कंज ज्यौं पुर पावनं ।।
नष द्रप्पन देषि अप्पन कोपि कंपि सु नावनं ।।
दमकंद दामिनि दसन कामिनि जूथ जामिनि जाननं ।।४२।।

बल हीना डगमगहि। भाग आवै भोगी जन ॥
उर घर लगै समूह। कंपि भौ सीत भयत नन ॥
लपरी ललित सब पहुप रति। तन सनेह जल पबित किय ॥
निक्करै भ्रंग अंबुज हरुअ। सीत सुगंध सुमंद लिय ॥३०॥

॥ साटक ॥

लै बंधं सुर थट्ट डंक्रित मधू, उन्मन्त्त भ्रंगी धुनी ॥
कंद्रप्पे सु मनो बसंत रमनं, प्राप्तो धनं पावनं ॥
कामं तेग मनं धनुष सजनं, भीतं वियोगी मुनि ॥
विरहिन्या तन ताप पत्त सरसा, संजोधिनी सोभनं ॥३१॥

॥ कुंडलिया ॥

इहि रिति मुक्कि नबाल प्रिय। सुष भारी मन लुट्टि ॥
कामिनी कंत समीप बिन। हुई षंड उर फुट्टि ॥
हुई षंड उर फुट्टि। रसन कुह कुह आरोहै ॥
चलन कहै जो पीय। गात वर भग्गो सोहै ॥
नयन उमगि कन वीय। सोभ ओपम पाई जिहि ॥
मनों षंजन बिय बाल। गहिय नंषत सुत्तिय इहि ॥३२॥

॥ दूहा ॥

इहि रिति रष्षिय इंछिनिय। भय ग्रीषम रितु चारु ॥
कांम रूप करि गय नृपति। पुडीरनी दुआर ॥३३॥
सुनि सुन्दरि पहुँ पंग की। दिसि चालन कौ मज्ज ॥
बर उत्तम धर दिष्षियैं। पिष्षन भर कनवज्ज ॥३४॥
नृप ग्रीषम ग्रिह सुष्षनर। ग्रेह मुक्कि नन राज ॥
गोमगांम छादिय अमर। पंथ न सुज्झे आज ॥३५॥

॥ कवित्त ॥

दीरघ दिन निस हीन। छीन जलधर वैसंनर ॥
चक्रवाक चित मुदित। उदित रवि थकित पंथ नर ॥
चलत पवन पावक। समान परसत सुताप मन ॥
सुकत सरोबर मचत। कीच तलफंत मीन तन ॥
दीसंत दिगम्बर सम सुरत। तरु लतान गय पत्त झरि ॥
अक्कुलं दीह संपति बिपति। कंत गमन ग्रीषम न करि ॥३६॥

दीहा दिघ्घ सदंग कोप अनिला, आवर्त मित्ता करं ॥
रेनं सेन दिसान थान मिलनं, गोमग्ग आडंबरं ॥
नीर नीर अपीन छीन छपया, तपया तरुण्या तनं ॥
मलया चंदन चंद मंद किरनं, ग्रीषमं च आषेवनं ॥३७॥

॥ कवित्त ॥

पवन त्रिविध गति मुक्कि । सेन भुअ पत्ति जूथ चलि ॥
विरह जाम बर कदन । मदन मैमंत पील हलि ॥
पथिक वधू संभरै । आस आवन चंदाननि ॥
जो चाले चहुआंन तौ । मरै फुट्टि उर ब्रंननि ॥
मन भुअन आन दैतो फिरै । प्रिय आगम गज्जै मयन ॥
कंता न मुक्कि बप कित्तिगर । कहूँ सुनो सोनिय बयन ॥३८॥
षिन तरनी नी तन तपै । बहै नित बाव रयन दिन ॥
दिसि च्यारों पर जलै । नहि कहों सीत अरध षिन ॥
जल जलंत पीवंत । रुहिर निसि वास निघट्टे ॥
कठिन पंथ काया । कलेस दिन रयनि सघट्टे ॥
त्रिय लहै तत्त अष्षर कहै । गुनियन न ग्रब्ब न मंडिये ॥
सुनि कंत सुमति संपति बिपति । ग्रीषम ग्रेह न छंडिये ॥३९॥

॥ गीत मालची ॥

त्रिय ताप अंगति दंग दवरति दवरि छब रित भूषनं ॥
कुरु मेह षेहति ग्रेह लुंपिति स्वेद संवित अंगनं ॥
नर रहित अनहित पंथ पंगति पंगयौ जित गोधनं ॥
रवि रत्त मत्तह अभ्भ उद्दिक कोप कर्कस मोषनं ॥४०॥
जल बुठ्ठि उठ्ठि समूह बल्लिय मनों सावन आवनं ॥
हिंडोल लोलति बाल सुष सुर ग्रामं सुर सुर गावनं ॥
कुसमंग चीर गंभीर गंधित मुंद बुंद सुहावनं ॥
ढलकंत बेनिय तठ्ठ ऐनिय चंद्र सेनिय आननं ॥४१॥
ताटंक चंचल लजित अंचल मधुर मेषल रावनं ॥
रव रंग नूपुर हंस दो सुर कंज ज्यौं पुर पावनं ॥
नष द्रप्पन देषि अप्पन कोपि कंपि सु नावनं ॥
दमकंद दामिनि दसन कामिनि जूथ जामिनि जाननं ॥४२॥

॥ दूहा ॥

मान रूप मानिन वचन। गय ग्रीषम बर नेह॥
पावस आगम धर अगम। गय इंद्रावति ग्रेह॥४३॥
पीय बदन सो प्रिय परषि। हरष न भय सुनि गौन॥
आंसू मिसि असु उप्पटैं। उत्तर देय सलोन॥४४॥

॥ साटक ॥

अब्दे बद्दल मत्त बिसिया, दामिन्य दामायते॥
दाद्दूरं दर मोर सोर सरिसा, पप्पीह चीहायते॥
श्रृंगारीय वसुंधरा मलिनता, लीला मभुद्रायते॥
जामिन्या सम बासुरो बिसरता, पावस्स पंथानते॥४५॥

॥ कवित्त ॥

मग सज्जल सुज्झै न। दिसा धुंधरी सघन करि॥
रति पहुवी कि चरित्त। लता तरु वींटि सुमन भरि॥
आलिंगत धर अम्भ। मान मानिन ललचावत॥
बर भद्रव कद्रव मचंत। कद्रब बिरुझावत॥
चतुरंग सेन वै गढ़ दहन। धन सज्जिय नृप चढ़िन तिन॥
भरतार संग बंछै त्रिया। बिन क्रतार भ्रत्तार बिन॥४६॥
घन गरजै घरहरै। पलक निसरेनि निघट्टै॥
सज्जल सरोवर पिष्षि। हियो तत छिन घन फट्टै॥
जल बद्दल बरषंत। पेम पल्हरै निरंतर॥
कोकिल सुर उच्चरै। अंग पहरंत पंच सर॥
दादुरह मोर दामिनि दसया। अरि चवथ्थ चातक रटय॥
पावस प्रवेस वालम न चलि। विरह अगनि तन तप घटय॥४७॥
घुमड़ि घोर घन गरजि। करत आडंबर अंमर॥
पूरत जलधर धसत। धार पथ थकित दिगंबर॥
झंझकित द्रिग सिसु म्रग। समान दमकति दामिनि द्ररसि॥
बिहरत चात्रग चुबत। पीय दुषंत समं निसि॥
ग्रीषंम बिरह द्रुमलतातन। परिरंभन क्रत सेनहरि॥
सज्जंत काम निसि पंचसर। पाव्रस पिय न प्रवास करि॥४८॥

॥ चंद्रायना ॥

विजय बिसहि द्रिगपाल पायननि पंच किय॥
बिरहिन बिस गढ़ दहन मघव धनु अग्र लिय॥

गरजि गहर जल भरति हरित छिति छत्र किय ॥
मनहु दिसान निसाननि आनि अनङ्ग दिय ॥४९॥

॥ गीत मालची ॥

द्रिग भरति धूमिल जुरति भ्रमिल कुमुद नृम्मल सोभिलं ॥
द्रुम अङ्ग वलिल्य सीस हलिल्य कुरलि कंठह कोकिलं ॥
कुसुमंज कुंज सरीर सुब्भर सलिल दुब्भर सद्दयं ॥
नद रोर दद्दर मोर नद्दर वनसि बद्दर बद्दयं ॥५०॥
झम झमकि बिज्जल काम किज्जल श्रवति सज्जल कद्दयं ॥
पप्पीह चीहति जीह जंजरि मोर मंजिर मंद्दयं ॥
जगमगति झिंगन निसि सुरंभन भय अभय निसि हद्दयं ॥
मिलि हंस हंसि सुबास सुंदरि उरसि आनन निद्धयं ॥५१॥
उर सास आस सुबास वासुर छलित कलि वपु सद्दयं ॥
संयोग भोग संयोग गामिनि विलसि राजन भद्दयं ॥५२॥

॥ साटक ॥

जे विज्जुज्झल फुट्टि तुट्टि तिमिरं, पुल अंधनं दुस्सहं ॥
बुंदं घोर तरं सहंत असहं, बरषा रसं संभरं ॥
बिरहीनं दिन दुष्ट दारुन भरं, भोगो सरं सोभनं ॥
मा मुक्के पिय गोरियं च अबलं, प्रीतं तया तुच्छया ॥५३॥

॥ दूहा ॥

सुनि श्रावन बरिषा सघन । सुष निवास नृप कीय ॥
बर पूरन पावस कियौ । राज पयान सु दीय ॥५४॥
हंसावति सुंदरि सुग्रह । गवौ प्रीय प्रथिराज ॥
धर उत्तिम कनवज्ज दिसि । चलन कहत नृप आज ॥५५॥
दिष्षि बदन पिय पोमिन । फुनि जंपै फिरि बाल ॥
सरद रबन्नौ चंद निसि । कित लब्भै छुटि काल ॥५६॥

॥ साटक ॥

पित्ते पुत्त सनेह गेह गुपता, जुगता न दिव्यादने ॥
राजा छत्रनि साज राज छितिया, निंदायि निवासने ॥

कुसुमेषं तन चंद नृम्मल कला वरदायने ॥
मा मुक्के प्रिय बाल नाल समया सरदाय दर दायने ॥५७॥

॥ दूहा ॥

आयौ सरद स इन्द्र रिति। वित्त पिय पिया संजोग ॥
दिन दिन मन केली चढ़े। रस जु लाज अलि भोग ॥५८॥

॥ कवित्त ॥

पिष्षि रयनि नृम्मलिय। फूल फूलंत अमर धर ॥
श्रवन सबद नहि सूझै। हंस कुरलंत मान सर ॥
कवल कद्रव बिगसंत। तिनह हिमकर परजारै ॥
तुमहि चलत परदेस। नहीं कोई सरन उबारै ॥
निग्रहन रत्त भरपञ्च सर। अरि अनङ्ग अंगै वहै ॥
जो कंत गवन सरदै कहै। तौ विरहिनि सिष ह्वै दहै ॥५९॥
द्रप्पन सम आकास। श्रवन जल अमृत हिमकर ॥
उज्जल जल सलिता सु। सिद्धि सुंदर सरोज सर ॥
प्रफुलित ललित लतानि। करत गुंजारव भंमर ॥
उदति सित्त तिसि नूर। अंग अति उमगि अङ्ग बर ॥
तलफंत प्रान निसिभवन तन। देषत दुति रिति मुष जरद ॥
ननाकरहु गवन नन भवनतजि। कंत दुसह दारुन सरद ॥६०॥

॥ माधुर्य ॥

लहु बरन षट बिय सत्त, चामर तीय तीय पयोहरे ॥
माधुर्य छंदय चंद जंपय नाग बाग समोहरे ॥
अति सरद सुभगति राज राजत्ति सुमति काम उमद्दयं ॥
ग्रह दीप दीपति जूप जूपति भूप भूपति सद्दयं ॥६१॥
नवनलिनिअलि मिलि अलिनअलि मिलि अलिनि अलिव्रत मंडियं ॥
चक चकी चक्रित चकोर चष्षित चच्छ छंडत चंदयं ॥
दुज अलस अलसनि कुसुम अच्छित कुसुम मुद्दित मुद्दयं ॥
भव भवन उच्छव तरु असोकह्नि देव दिव्य निनद्दयं ॥६२॥
नौरता मंत्रहि नृपति राजत बीर झंझरि वग्गयं ॥
महि महिल लच्छिर सुभ्रित अच्छिर सकति पाठ सुदुग्गयं ॥
अट्ठार भारह पुषित अभ्रित अधर अमृत भामिनी ॥
रस तीय राजन लहय सोजन सरद दीपक जामिनी ॥६३॥

॥ कवित्त ॥

नव नलिनी अलि मिलहि । अलिन अलि मिलि बृतम मंडै ॥
तनु नृम्मल षह चंद । चष्ष चक्कोरति छंडै ॥
दुज अलसित बर निगम । कुसुम अच्छित मुद्रावलि ॥
पित्र नेह ग्रह रचे । वाल छुट्टे अलकाबलि ॥
करि स्नान धूत बसतर रचें । कंज वदन चित्रंग चरि ॥
आनूह जूप अंजन रचै । बिना कंत तियगुन सुगरि ॥६४॥
चंद रयनि नृम्मली । सरिस आकास अभयासित ॥
पिया बदन सो चंद । दोइ कुच चिकुर प्रगासित ॥
षंजन नयन अलोल । कीर नासा नृम्मल मुति ॥
उज्जल वस्त्र अनूप । पुहप भाजन रजता भति ॥
नव गात नृमल सुन्दर सरल । नवल नेह नित नित भलौ ॥
चित चतुर रीति बुज्झै नृपति । सरद दरद करि मति चलौ ॥६५॥

॥ दूहा ॥

हिम आगम वित्तें सरद । गवन चित्त नृप इंद ॥
पुछन कुरंभी महल गय । सरद ग्रेह वर चंद ॥६६॥

॥ साटक ॥

छिन्नं वासुर सीत दिध्घ निसया, सीतं जनेतं बने ॥
सेजं संजर बानया बनितया, आनंग आलिंगने ॥
यों बाला तरुनी वियोग पतगं, नलिनी दहन्ते हिमं ॥
मा मुक्के हिमवंत मंत गमने, प्रमदा निरालम्बनं ॥६७॥

॥ रोला ॥

कुच वर जंघ नितंब निसा बढ्ढत धन बढ्ढी ॥
लक छीन उर छीन छीन दिन सीत सुचढ्ढी ॥
गिर कंदर तप जुगति जागि जोगीसर मंनं ॥
ते लम्भे कविचंद वाम कामी सर धंनं ॥६८॥

॥ कवित्त ॥

देस धरें दो गत्ति । भोग जोगह तिन सेवा ॥
कै वनकै वनिता । अगनित तप कै कुच लेवा ॥

गिरि कंदर जल पीन। पियन अधरारस भारी ।।
जोगिनी मद उमद। कै छगन बसन सवारी ।।
अनुराग बीत कै राग मन। बचन तीय गर झरन रति ।।
संसारविकट इन विधितिरय। इही विधी सुर असुर अति ।।६९।।
रोमावलि वन जुथ्थ। बीच कुच कूट मार गज ।।
हिरदै उजल विसाल। धित्त आराधि मंडि संज ।।
बिरह करन क्रीलई। सिद्ध कामिनी डरप्पै ।।
तो चलंत चहुआंन। दीन छंडै पै रुप्पै ।।
हिमवंत कंत मुक्कैन लिय। पिया पन्न पोमिनि परषि ।।
ग्रहि कंठ ऊठनि अवनि। चलत तोहि लगिवाय रुष ।।७०।।
न चलि कंत सुभचित्त। धनी बहु वित्त प्रगासी ।।
गहगहि ऐसी प्रेम। सौज आनंद उहासी ।।
दीरघ निसि दिन तुच्छ। सीत संतावै अंगा ।।
अधर दसन घरहरै। प्रात परजरै अनंगा ।।
जा ऐनि रैनि हर हर जपत। चक्क सद्द चक्की कियौ ।।
हिमवंत कंत सुग्रह ग्रहित। करंहहत फुट्टै हियौ ।।७१।।

।। त्रोटक ।।

गुरु पंच सुभै दस मत्त पयो। श्रिय नाग हरर् हरबाहनयौ ।।
इति छंद बिछंद बिलास लहै। तत त्रोटक छंद सुचंद कहै ।।७२।।
दिव दुर्ग्ग निसा तिन तुच्छ रवै। जरि सीत बन वनवारि जवैं ।।
चकचक्कि चकी जिमिवित्तभवै। नित वाम प्रिया मुष मोरिठवै ।।७३।।
विरही जन रंजन हारि भियं। घनसार मृगंम दसारंपुंज कियं ।।
पहुपंकति पजति कंत जियं। पुरिरंभन रंभन रेरतियं ।।७४।।
नव कंडल मंडल क्रन्न रमै। कच अभ्रपटी जनु बीज भ्रमै ।।
कुसुमावलि तुट्टि लवंग लग। बरनं रचि छुट्टति पंति बगं ।।७५।।
श्रम बुंदति मुत्ति झरं उरनं। झरती जनु गिम्ह सिवं सरनं ।।
कटि मंडल घंठि रमम्नि रवै। सुरमंजु मंजीर अमीय श्रवै ।।७६।।
रति ओज मनोज तरंग भरी। हिमवंत महा रित राज करी ।।७७।।

।। दूहा ।।

संगम सुष सुत्तौ नृपति। ग्रिह बिन एक न होइ ।।
सुनि चहुआंन नरिंद बर। सीत न मुक्कै तोइ ।।७८।।

हिम बित्यौ आगम शिशिर। चलन चाइ चहुआंन ॥
सुनि पिय आगम शिशिर कौ। क्यों मुक्कै ग्रिह थान ॥७६॥

॥ साटक ॥

रोमाली बन नीर निद्ध चरयो गिरिदंग नारायने ॥
पव्वय पीर कुचानि जानि मलया, फुंकार झुंकारए ॥
सिसिरे सर्बरि बारुनी च बिरहा माहद्द मुव्वारए ॥
मां कंते म्रिगबद्ध मध्य गमने, किं दैव उच्चारए ॥८०॥

॥ दूहा ॥

अरिय सघन जीतन दिसा। चलन कहत चहुआन ॥
रतिपति चल पोइ पिथ्थ गय। ग्रह हमीर ग्रिह जानि ॥८१॥

॥ कवित्त ॥

आगम फाग अवंत। कंत सुनि मित्त सनेही ॥
सीत अंत तप तुच्छ। होइ आनंद सब ग्रेही ॥
नर नारी दिन रैनि। मैन मदमाते डुल्लैं ॥
सकुच न हिय छिन एक। वचन मनमानै बुल्लैं ॥
सुनौ कंत सुभ चित करि। रयनि गवन किम कीजइय ॥
कहि नारि पीय विन कामनी। रिति ससिहर किम जीजइय ॥८२॥

॥ हनूफाल ॥

गुर गरुअ चामर नंद। लहु बरन बिच बिच इंद ॥
विवहार पय पय बंद। इति हनुमानय छंद ॥८३॥
रिति ससि रसरवरि सोर। परि पवन पत्त झकोर ॥
पन त्रिगुन तुल्ल तमोर। घन अगर गंध्र निचोर ॥८४॥
भुअ भोज व्यंजन भोर। लव अमर तिष्ष कठोर ॥
रस मधुर मिष्टित थोर। रति रसन रमनति जोर ॥८५॥
कल कलस नृत्ति किलोर। वय स्याम गुन अति गोर ॥
परि पेम पेम सजोर। अवलोक लोचन ओर ॥८६॥
इति ससिर सुष बिलसंत। रिति राइ आय बसंत ॥
षटु रित्तु षट रमनीय। रषि चंद बरनन कीय ॥८७॥

॥ कवित्त ॥

कुंज कुंज प्रति मधुप । पुंज गुंजन बैरनि धुनि ॥
ललति कंठ कोकिल । कलाप कोलाहल सुनि सुनि ॥
राछत वन मंडित । पराग सौरंभ सुगंधनि ॥
बिकसे किंसुक विहि । कदंब आनंद विविध धुनि ॥
परिरंभ लता तरवरह सम । भए वर अनंग तिथि ॥
बिच्छुरत छिनक संपत्ति पति । कंत असंत बसंत रिति ॥८८॥

॥ दूहा ॥

षट रिति बारह मास गय । फिर आयौ रु बसंत ॥
सो रिति चंद बताउ मुहि । तिया न भावै कंत ॥८९॥
जौ नलिनी नीरहि तजै । सेस तजै सुरतंत ॥
जौ सुबास मधुकर तजैं । तौ तिय तजै सु कंत ॥९०॥
रोस भरै उर कामनी । होइ मलिन सिर अंग ॥
उहि रिति त्रिया नभावई । सुनि चुहान चतुरंग ॥९१॥

॥ चौपाई ॥

षट्ट सुवरनी विथ षट मासं । रष्षे बर चहुआंन बिलासं ॥
ज्यों भवरी भवरं कुसमंगा । त्यों प्रथिराज कियौ सुष अंगा ॥९२॥

॥ दूहा ॥

बर बसंत अग्गें जियति । सेन सजी बहु भार ॥
दिसि कनवज बर चढ़न कों । चितवति संभरिवार ॥९३॥
कै जानैं कविचंदई । कै प्रयान प्रथिराज ॥
सित सामंत सु संमुहै । पंगराय ग्रह काज ॥९४॥

॥ दूहा ॥

ग्यारह से एकानवै । चैत तीज रविवार ॥
कनवज देषन कारनें । चल्यौ सु संभरिवार ॥९५॥

॥ कवित्त ॥

ग्यारह से असवार । लष्ष लीने मधि लेखैं ॥
इसे सूर सामंत । चक अरि दल बल भष्षैं ॥

तनु तुरंग बर बज्ज । बज्ज ठेलै बज्जानन ।।
बर भारथ सम सूर । देव दानव मानव नन ।।
नर जीव नाम भंजन अरिय । रुद्र भेस दरसन नृपति ।।
मेट्यौ सु यह भर सम्भई । दिपति दीप दिबलोक पति ।।९६।।
कनवज्जह जयचंद । चल्यौ दिल्लीपति पिष्षन ।।
चंद बरद्दिय तथ्य । सथ्थ सामंत सूर घन ।।
चाहुआंन कूरंभ । गौर गाजी बडगुज्जर ।।
जादव रा रघूबंस । पार पुंडीरति पष्षर ।।
इत्तने सहित भूपति छढ्यौ । उड़ी रेन छीनी नभौ ।।
इक लष्ष बर लष्ष लेषिए । चले सथ्थ रजपूत सौ ।।९७।।

।। दूहा ।।

तट कालिंदी तहं बिमल । करि मुकाम नृप राज ।।
सथ्थ सयन सामंत भर । सूर जु आये साज ।।९८।।

।। दूहा ।।

रति माधव मोरे सु तरु । पुहप पत्र बन बेलि ।।
राज कबी करतह चले । सम सामंतन केलि ।।९९।।

।। दूहा ।।

इन सग्गुन दिल्लिय नृपति । संपत्तौ झूसाम ।।
कोस तीस दुअ अग्गरौ । कियौ मुकाम सु ताम ।।१००।।
सद्दि राज रनबीर तहं । किय भोजन सु उताम ।।
सब आहारे अन्न रस । चढ्या जाम निसि जाम ।।१०१।।

।। दूहा ।।

पहु फट्टिय घट्टिय तिमिर । तम चूरिय कर भान ।।
पहुमिय पाय प्रहारनह । उदो होत असमान ।।१०२।।
रत्तंबर दीसै सुरबि । किरन परष्षिय लेत ।।
कलस पंग नहिं होय यह । विय रवि बंध्यौ नेत ।।१०३।।
रवि तंमुह संमुह उठ्यौ । इह है मग्ग समुझ्झि ।।
भूलि भट्ट पुब्बह चलिय । कहि उत्तर कनवज्ज ।।१०४।।
बंचन फूलिय अर्क बन । रतनह किरनि प्रसार ।।
सुचि कलस जयचंद घर । संभरि संभरिवार ।।१०५।।

गंगा तट साधन सकल । करिह जु भांति अनेक ।।
नट नाटिक संभरि धनी । बर बिख्यात छबि केक ।।१०६।।

॥ कवित्त ॥

अंबुज सुत उमया बिलोकि । बेद पढ़त षलि बीरज ।।
सहस बहत्तरि कुंवर । उपजि भीजंत गंग रज ।।
आभूषण अंबर सुगंध । कवच आयुध रथ संतर ।।
रविमंडल के पास । रहत चौकी सु निरंतर ।।
चहुआंन चमू तिन समरजत । सुकवि चंद ओपम कथिय ।।
सामंत सूर परिगह सकल । उतरि तट्ट भागीरथिय ।।१०७।।

॥ दूहा ॥

रहसि केलि गंगह उदक । सम नरिंद किय केलि ।।
चिरन त्रिभंगी छंद पढि । चंद सु पिंगल मेलि ।।१०८।।

॥ त्रिभंगी ॥

हरि हरि गंगे तरल तरंगे अध क्रित भंगे भ्रित चंगे ।।
हरि सिर परसंगे जटनि बिलंगे बिहरति दंगे जल जंगे ।।
गुन गंध्रब छंदे जै जै बंदे क्रित अध कंदे मुष चंदे ।।
मति उच गति मंदे दरसत नंदे पढ़ि बर छंदे गत दंदे ।।१०९।।

॥ दूहा ॥

कूच करिग भावी श्रवन । बर बर चलि सहरत्त ।।
प्रात भयौ कनवज्ज फिरि । सुनि निसान धुनि पत्त ।।११०।।
हर सिद्धी परनाम करि । रषि समंत सु साज ।।
कनवज दिष्षन राज ग्रह । चल्यौ चंद बर राज ।।१११।।
भंवर टोल झंकार बर । सुमन राइ फल लिद्ध ।।
कूर दिष्ट मन रह बढ़ी । ससि तारक भ्रित रिद्ध ।।११२।।

॥ पद्धरी ॥

बर मग्ग बग्ग चिहुँ कोद दिष्षि । बिस्तार पंच जोजन्न लष्षि ।।
कछ मग्ग भोमि चिहुँ मग्ग दिस्सि । नारिंग सुमन दारिम बिगस्सि ।।११३।।
प्रतिब्यंब अंभ झलकत सरूप । उप्पम्म तास बरनत अनूप ।।
नव बिद्ध गत्ति सह जल प्रबेस । मुसकंत झुंड दिष्षि सुदेस ।।११४।।

प्रतिब्यंब झलकि चंपक प्रसून । उप्पंम देषि कवि चंद दून ।।
दीपक्क माल मनमथ्थ कीन । हरभयति दिष्षि इह लोक दीन ।।११५।।
हलचलत लता दमकंत वाय । मनु बध्वौ सपतसुर भंग पाइ ।।
चल्लै सुगंध बर सीत बत्त । जानिये सब्ब हथ्थीन जित्त ।।११६।।

।। भुजंगी ।।

तहां प्रात प्रातं बिबं अंब मोरै । सुरं कंठ कलियंठ रस प्रस्स झोरे ।।
फली फूल बेली तरुं चढ्ढि सोहै । तिनं ओपमा दैन कबिचंद मोहै ।।११७।।
रवी तेज देषी ससी बाल भागी । मनों तारिका उड्डि तर सब्ब लागी ।।
कहों जुही जंभीर गंभीर बासी । तभी तप्पनी सेव सीसंम सासी ।।११८।।
ग्रसैं मोर मकरंद उड़ि बाग में ही । मनों विरहनी दिघ्घ उस्साह लेही ।।
कितें एक बीजोर फल भार लुट्टै । मनों जीवनं पीव पीयूष फुट्टै ।।११९।।
कहूँ सेव सत्ती फुलै ते प्रकारं । किधौं दिष्षियं प्रगट मकरंद तारं ।।
कहूँ सोभही थट्ट गुल्लाह फूलं । चपं भोर मकरंद सह फूल भूलं ।।१२०।।
बरं बोरसरि फूल फूली सुरंगी । छके भोर झौरं मनं होड़ पंगी ।।
कहूँ कद्द सेसुरंगं जु पंती । किधौं मंतमथ्थं किवीचै धमंती ।।१२१।।
घरी एक चहुआंन तिनथान राही । असंसार संसार संसार काही ।।
तरं पिंड आकास फुल्लै निनारै । बरन्नं बरन्नं अनेकं सवारे ।।१२२।।
सबैं कब्बिराजं उपम्मान पग्गी । मनों नौ ग्रहं वार रस आय मग्गी ।।
कवी जे जुवानं मनं ओप जानै । कवी जेम वत्तं रसं सो बषानै ।।१२३।।
न लालं न पिंगी षजूरं अमग्गी । नरं उंच नृषंत सो सीस पग्गी ।।१२४।।

।। दूहा ।।

बिलम सगुन चल्यौ नृपति । नेन दरसि सो सथ्थ ।।
बर दीसी हट नैर कौ । मिलन पसारत हथ्थ ।।१२५।।
नगर प्रबेसिन देषि नृप । जूप साल जेठाइ ।।
ता बृन्नन रस उपज्यौ । कहत चंद बरदाइ ।।१२६।।

।। दूहा ।।

अमग हट्ट पट्टन नयर । रत्न मुत्ति मनिहार ।।
हाटक पट धन धात सह । तुछ तुछ दिष्ष सवार ।।१२७।।

।। मोतीदाम ।।

अमगति हट्टति पट्टन मंझ । मनो द्रग देवल फूलिय संझ ।।
जु नष्षहि मोरि तमोरि सु ठार । उलिचत कीचकि पीक उगार ।।१२८।।

मिलै पद पट्ट सु वेदल चंप। सु सीत समीर मनो हिम कंप।।
जु बेलि सेबंतिय गुंथहि जाइ। दिलै द्रब दासि सु लेहि ढहाइ।।१२९।।
जराव कनक्क जरंज कसंत। मनो भयो बासुर जामिनि अंत।।
कसिवकसि हेम सु काढ़त तार। उगंत कि हंसह क्रन्न प्रकार।।१३०।।

।। दूहा ।।

हय गय दल सुंदरि सहर। जौ बरनौं बहुबार।।
इह चरित्र कहं लगि कहूँ। चलि पहुपंग दुआर।।१३१।।
चलत अग्ग दिष्यौ नृपति। हरि सिद्धी सु प्रसाद।।
चंद नम्मि अस्तुत करिय। हरिय अध्घ अपराध।।१३२।।
कौतूहल दिष्षै सकल। अकल अपूरब बट्ट।।
पानघार छर छग्गरह। राजग्रही बर भट्ट।।१३३।।

।। कवित्त ।।

गज घंटन हय षेह। बिबिध पसुजन समाज इव।।
घन निसान घुम्मरत। प्रबल परिजन समथ्थ नव।।
बिबिध बज्ज बज्जत सु। चंद भर भीर उमत्तिय।।
इक्क लत्त आवत सु। इक्क नरपत्ति समथ्थिय।।
षुंभिय अवनि सुभ्भय महल। जनु डुल्लित उभ्भिय करत।।
दरबार राज कमधज्ज कौ। जग मंडन मज्झहं धरनि।।१३४।।

।। मुरिल्ल ।।

पुच्छत चंद गयो दरबारह। जहां हेजम रघुबंस कुमारह।।
जिहि हरि सिद्ध पास बर पायो। सुकवि चंद दिल्लिय तें आयो।।१३५।।

।। मुरिल्ल ।।

रु कि कविंद हेजम बुल्लिय हसि। कौन थान बरचलिथ कोंन दिस।।
को नृप सब देव का नाम। किहि दिसिचित कस्यो परिनाम।।१३६।।
हो हेजम रघुबंस कुमार। नृप चहुआंन पृथी अवतार।।
फिर ढिल्ली कवियान नरिंद। मो बर नाम कहै कवि चंद।।१३७।।

।। दूहा ।।

नृप कवि हेजम मद्धि दर। रष्षि गयो नृप पास।।
भट्ट संपतौ राज पै। बैने चंद बिलास।।१३८।।

सीस नायि बल्ली बयन । और पंग राजेस ॥
कवि जौ जुग्गिनि पुर कहै । संपत्ती द्वारेस ॥१३९॥

॥ दूहा ॥

हक्कार्यौ हेजम्म कवि । निकट बोलि नृप ईस ॥
सरसें बर संभारि करि । कवि दीनी आसीस ॥१४०॥

॥ कवित्त ॥

जिम ग्रह पित ग्रहपति । जिम सु उड़पति तारायन ॥
मधि नाइक जिम लाल । जिम सु सुरपत नारायन ॥
जिम विषयन संग मयन । सकल गुण संग सील जिम ॥
बरन मध्य जिमि उगति । चित्त इन्द्रिय जालह तिम ॥
अनि अनि नरेस भर भीर सर । दरिम नृप मंदिर मरिय ॥
दिख पंग पानि उन्नित करिय । सुकविचन्द आसिष्य दिय ॥१४१॥

॥ दूहा ॥

पंग पयंप्यौ कवि कमल । अमर सु आदर कीन ॥
पुष नरेस परसन रिट्ठि । सब जंपयौ प्रवीन ॥१४२॥
मुह दारिद्र अरु तुच्छ तन । जंगल राब सु हद्द ॥
बन उजार पसु तन चरन । क्यों दूबरौ वग्द्द ॥१४३॥

॥ कवित्त ॥

चढ़ि तुरंग चहुआंन । आन फेरीत परद्धर ॥
तास जुद्ध मंडयौ । जास जानयौ सबर बर ॥
केइक तकि गहि पात । केह गहि डार भूर तरु ॥
केइत दंत कुछ छिन्न । गए दस दिसनि भाजि डर ॥
भुअलोकतदिन अचिरिजभयौ । मान सबर बर मरदिया ॥
प्रथिराज षलन पद्धौ जु षर । सु यों दुब्बरौ बरद्दिया ॥१४४॥
हंस न्याय दुब्बरौ । मुत्ति लब्भै न चुनंनह ॥
सिंध न्याय दुब्बरौ । करी चंपे न कंठ कह ॥
म्रग्ग न्याय दुब्बरौ । नाद बंधिये सु बधन ॥
छैल छक्क दुब्बरौ । त्रिया दुब्बरी मीत मन ॥
आसाढ़ गाढ़ बंधन धुरा । एक्हि गाहि हहग्दिया ॥
जंगर जुरारि उज्जर षर न । क्यों दुब्बरो वरद्दिया ॥१४५॥

पुरे न लग्गी आरि। भारि लद्यौ न पिट्ठ पर ॥
गज्जवार गंभार। मही गट्ठी न नथ्थ कर ॥
भ्रम्यौ न कूप भावरी। कब्बहूँक सब सेन रुत्तौ ॥
पंच धारि ललकारि। रथ्थ सथ्थ जह जुत्तौ ॥
आसाढ़ मास बरषा समै। कध न कहों हहरद्दिया ॥
कमधज्ज राव इम उच्चरै। सु क्यौं दुब्बरौ बरद्दिया ॥१४६॥

फुनि जंपै कवि चंद। सुनौ जैचंद राज बर ॥
पुरै आर किम सहै। भार किम सहै पिठ्ठ पर ॥
नथ्थ हथ्थ किम सहै। कूप भांवरि किम मंडै ॥
है गै सुर वर सुधर। स्वामि रथ भारथ तंडै ॥
बरषा समान चहुआंन कै। अरि उर बारह हरद्दिया ॥
प्रथिराज षलनि पद्धो सुषर। सु इम दुब्बरौ बरद्दिया ॥१४७॥

प्रथन नगर नागौर। बंधि साहाब चरिग तिन ॥
सोझंत्तै भर भीम। सीम सोधीत सकल बन ॥
मेवाती मुगल महीप। सब्ब यत्तजु षद्धा ॥
ठढ्ढा कर ढिल्लिया। सार संमूर न लद्धा ॥
सामंत नाथ हथ्थां सु कहि। लरिकैं मान मरद्दिया ॥
प्रथिराज षलन पद्धो सुषरा। यौं दुब्बरौ बरद्दिया ॥१४८॥

सुनत पंग कवि बयन। नयन श्रुति बदन रत्त बर ॥
भुवन बंक रद अधर। चंपि उर उससि सास झर ॥
कोप कलंमलि तेज। सुनत विक्रम अरि क्रम्मह ॥
सगुन बिचार कमंध। दिष्षि दिह चंद सु पिम्मह ॥
आदर सुभट्ट राजिंद किय। अंग एंडाइ बिसतारि कर ॥
ननमिल मोहि संभरिधनिय। कहौ बत्त मुष बिरद बर ॥१४९॥

जिहि बरद्द चढ्ढि कै। गंग सिर धरिय गवरि हर ॥
सहस मुष्ष संपेषि। हार किन्नौ भुजंग गर ॥
तिहि भुजंग फन जोर। झोलि रिष्षौ बसुमत्तिय ॥
बसुमत्ती उप्परै। मेरगिरि सिंधु संपत्तिय ॥
ब्रहमंड मंड मंडिय सकल। धलल क्रंध करता पुरस ॥
गरुअत बिरह पहुपंग दिय। क्रपा करिय भट्टह सरिस ॥१५०॥

॥ दूहा ॥

आदर किय नृप तास कौं। कह्यौ चंद कवि आउ ॥
मिले मोहि ढिल्लिय धनी। सु वत कहिग समझाउ ॥१५१॥
उनि मातल मुहि तात कहि। नित नित प्रेम बढ़ंत ॥
जिमि जिमि सेव स अद्दरिय। तिम तिम दान चढ़ंत ॥१५२॥
कितक सूर संभरि धनी। कितक देस दल बंधि ॥
कितक हथ्थ रत अग्गरौ। हसि नृप बूझ्यौ चंद ॥१५३॥

॥ कवित्त ॥

कितक सूर संभारि नरेस। अंदेस कहत करि ॥
कितक देश बल बंधि। राव रावात छत्रधर।
कितक कोस मेंगल मदंध। तोषार भार भर ॥
कितइक गहि करिवार। कलह विहारि बीर झर ॥
कित इक मौज बिदरन बहत। अति पर आगम जानियै ॥
उग्गौ न अरक तित्तह लगै। तिमिर तितें बल मानियै ॥१५४॥

॥ दूहा ॥

बिहसत कवि बुल्ल्यौ बयन। इह लच्छन छिति है न ॥
सूअ सु मुरति लच्छिनह। को दिषवों पहु नैंन ॥१५५॥
मुकट बंध सब भूप हैं। सब लच्छिन संजुत्त ॥
कौन बरन उनहार किहि। कहि चहुआंन सु उत्त ॥१५६॥

॥ कवित्त॥

बत्तीसह लच्छिनह। बरस छत्तीस मास छह ॥
इस दुज्जन संग्रहत। राह जिस चन्द सूर ग्रह ॥
एक छुटहि महिदान। एक छुट्टहिति दंड भर ॥
एक गहहि गिर कंद। एक अनुसरहि चरनपरि ॥
चहुआंन चतुर चावद्दिसहि। हिंदवान सब हथ्थ जिहि ॥
इम जंपे चंद वरद्दिया। प्रथीराज उनहारि इहि ॥१५७॥
इसौ राज प्रथिराज। जिसौ गोकुल महि कन्हह ॥
इसौ राज प्रथिराज। जिसौ पथ्थर अहि वन्नह ॥
इसौ राज प्रथिराज। जिसौ अहंकारिय रावन ॥
इसौ राज प्रथिराज। राम रावन संतावन ॥

बरस तीस छह अग्गरौ । लच्छिन सब जंजुत्त गनि ॥
इम जंपै चंद बरद्दिया । प्रथीराज उनहारि इनि ॥१५८॥
दिष्षि नयन कमधज्ज । नरेस अंदेस बृद्ध बर ॥
दंग दहन जीरन जरंत । परचंत अंत पर ॥
श्रुति अरुन मुष अरुन । नेम आरत्त पत्त सम ॥
पानि मोंडि दवि अधर । दंत दब्बंत तेज तग ॥
कवि चंद बहुत बुल्लहु बयन । छित्ति अछिति षत्री कवंन ॥
चल दल समान रसना चपल । विफले बाद मंडौ मवन ॥१५९॥

॥ दूहा ॥

देषि थबाइत थिर नयन । करि कनवज्ज नरिंद ॥
नयन नयन अंकुरि परिय । इक थह होइ मयंद ॥१६०॥

॥ कवित्त ॥

दिष्षि नयन रा पंग । दंग चहुआंन महा भर ॥
अंकुरि नयन विसाल । जाल झारंत रंच उर ॥
इक्क थार कंठीर । पल नं आकज्जकरत तमि ॥
बर बारुनी समंग्ग । मत्त मांतंग रोस जमि ॥
कमधज्जराज फिरि चंद कहु । कहत बत्त संभरधनिय ॥
बर बर कवित्त कबिउच्चरिय । अब सुकत्ति कथ्थी धनिय ॥१६१॥
अति गभ्भीर पहु पंग । मन सु दब्बै द्रिग लज्जइ ॥
कवन काज छग्गरह । पानि ग्राही भट कज्जइ ॥
क्रित्त काज करि बेन । बानि बंदन बरदाइन ॥
श्रवन राग हम तुमै । दिष्टगोचर तत लाइय ॥
संभरे जंम देषै सुभट । अंत निमत पुज्जै मिलत ॥
सोमेस पुत्त तुम हित्त करि । क्यौं मुझ्झहि नाही मिलत ॥१६२॥

॥ दूहा ॥

मन मंतौं लेहु मंत कहि । नीतें नीति बढंत ॥
जिम जिम सैसव सो दुरै । तिम तिम मदन चढंत ॥१६३॥

॥ दूहा ॥

सत सुवत्त कवि चंद मुष । तब पुच्छिय इह बत्त ॥
हों पुच्छो चाहूँ सुमति । सो जंपौ कबि तत्त ॥१६४॥

जे त्रिय पुरषि परस बिनु । उठिग राइ सु निसान ।।
धवल ग्रह संपन्न कहि । भट्टहिं अप्पन पान ।।१६५।।
महल अदिट्ठ चिय दिट्ठ सुअ । क्यों ब्रन्नै बर कव्वि ।।
सरसें बुधि ब्रन्नन कर्‌यौ । मुष दिष्षे नन रव्वि ।।१६६।।
कछुक सयन नयनह करिय । कुछ किय बयन बषान ।।
कछु इक लछिन विचार किय । अति गंभीर सु जानि ।।१६७।।

।। कवित्त ।।

आय निकट रा पंग । अंग आरथन बेद बर ।।
अति सुगंध तंमोर । रंग जुत धरय चुथ्थ पर ।।
दिष्षि नृपति प्रथिराज । दासि आरोहि सीस पट ।।
मनहु काम रति निरषि । सकुन्चि गुर पंच मद्धिघटु ।।
कमधज्ज राज संकुल सभा । अकुल सुभर दर संत दिस ।।
उस्ससे अंग उम्भरि अरषि । परसपरसु अवलोकि सिस ।।१६८।।

।। चौपाई ।।

चहुआंनह दासी सिर कंषिय । पुर रठ्ठौर रही हिसि नंषिय ।।
बिगरत केस पुरुष नहिं अंकिय । प्रथीराज देषत सिर ढंकिय ।।१६९।।

।। अरिल्ल ।।

ढंकित केस लषी भयभूपह । दिन दिन दिस्स कहाँ राई मह ।।
कविवर सथ्थ प्रथी नृप आयौ । सो लच्छित बर दासि बतायौ ।।१७०।।

।। कवित्त ।।

अप्प अप्प भट अटकि । षटकि पट दासि मंडि सिर ।।
इक्क चवै क्रत बढ़न । एक षल नथ्थ जानि थिर ।।
इक्क कहै प्रथिराज । इक्क जंपय षवास बर ।।
दिष्ष दरस रर्यसिघ । ककदीह वना अज्ज भर ।।
कट्ठिया बिकट केहरि कहर । जहर भार अंगय मनह ।।
संग्रहौ आय रिपु दुष्ट ग्रह । समय सद्ध रा पंग कह ।।१७१।।

।। दूहा ।।

मैं चकि भूप अनूप मह । पुरष जु कहि प्रथिराज ।।
सुमति भट्ट सथ्थह अछै । जिहि करंत तिय लाज ।।१७२।।

॥ अरिल्ल ॥

करि बल कलहस मंत्री मार्‍यौ। नहि चहुआंन सरंन विचार्‍यौ॥
सेंम सुबर कहि कवि समझाई। अब तूं कलह करन इहां आई॥१७३॥
समझिदासि सिर बरतिन ढंक्यौ। कर पल्लव तिन द्रग बर अंक्यौ॥
कव रस सबै सभा कमधज्जी। भैचकि भूप सिंगिनी सज्जी॥१७४॥

॥ कवित्त ॥

बर अद्भुत कमधज्ज। हास चहुआंन उपन्नौ॥
करुना दिसि संभरी। चंद बर रुद्र दिपन्नौ॥
बीभछ बीर कुमार। बीर बर सुभट बिराजै॥
गोपन पाल झंषतह। द्रिगत सिंगार सु राजै॥
संभयौ संत रस दिष्ष बर। लोहालंगरि बीर कौ॥
मंगाइ पान पहुपंग बर। भय नव रस नव सीर कौ॥१७५॥

॥ दूहा ॥

अप्पि मान सनमान करि। नहि रष्यौ कवि गोय॥
जु कछु इच्छ करि मंगिहौ। प्रात सकप्पों सोय॥१७६॥
हक्कायौ रावन नृपति। के के मुक्ति सुवास॥
पच्छि दिस्सि जैचंद पुर। तिहि रष्षौति अवास॥१७७॥

॥ कवित्त ॥

तव राजव जैचंद। बोलि सोमित्र प्रधानह॥
अरु प्रोहित श्रीकंठ। मुकंद परिहार सुजानह॥
दियौ राइ आएस। जाहु सो कवियन थानह॥
बिबिध अन्न ब्यंजनह। सरस रसरंग रसानह॥
तंमोर कुसुम केसरि अगर। कट्ठ कपूर सुगंध सह॥
आदर अनंत उपचार बर। करिसु प्रसन्नह कविय कह॥१७८॥

॥ दूहा ॥

अगि मोकलि रावन नृपति। हक्कार्‍यौ कविराज॥
भट्ट हट्ट मोकलि सु बर। कंक बिसाहन काज॥१७९॥

॥ कवित्त ॥

गयो रावन मेल्हान। चंद बरदिया समष्षनु॥
देषि सिंघासन सद्यो। पास पारस्स इंद्र जनु॥

कवि आदर बहु कियौ। देषि कनवज्ज मुकुट मनि ॥
इह ढिल्लिय सुर दत्त। वियौ नाहि गनै तुझगिनि ॥
थिरु रहै थवा इत बज्रकर। छंडि सिकारहि छिन कुरहि ॥
जिहिअसिय लष्ष पलानि यहि। पान देहि दिढ़ हथ्थ गहि ॥१८०॥

॥ कवित्त ॥

गहि कर पान सु राज। फिर्यो निज पंग ग्रेह वर ॥
सो मंत्रिक परधान। बोल उच्चरिय क्रोध भर ॥
गहे राज संभरि नरेस। सामंत अंत रिन ॥
मिटै बाल उर आज। आज जीवन सु मिटै तिन ॥
बोलिय सुमित्र कमधज्जबर। छग्गर भट्ट न पृथु गहन ॥
भृत भ्रात तात सामंत सुत। छलन काज पट्टिय पहन ॥१८१॥
कहि सब कनवज राइ। भज्जि प्रथिराज जाइ जिन ॥
असिय लष्ष हय दलह। षबरि किज्जै सु षिन्नषिन ॥
हसिय सब्ब सामंत। रोस प्रथिराज उहासै ॥
मिलिय सेन रघुबंस। चंद तब भट्ट प्रग्रासे ॥
इट्ट दैत्य रूप जुध मंगिहै। भाज नीक परतह बहै ॥
कनवज्ज नाथ मन चित इह। जुध अनेक बल संग्रहै ॥१८२॥

॥ दूहा ॥

सकल सूर सामंत सम। बर बुल्यो पृथिराज ॥
जौ रुक्कौ षिन षेत में। देषौं नगर बिराज ॥१८३॥
चल्यो नयर दिष्षन करन। तजि सामंत सुलच्छि ॥
गौं दिष्षन निष्षन करन। चित्त मनोरथ बंछि ॥१८४॥
कुंभ चित्त चहुआंन की। चीकट बुंद न अम्भ ॥
जल भय पंगह न भिदै। ज्यौं जल चीकट कुंभ ॥१८५॥
इते सेन चढ़ि पंग बर। है गै दिसा निसान ॥
लच्छिन नैर नरिंद करि। गंग सुपत्तौ ध्यान ॥१८६॥

॥ कवित्त ॥

राज गुरू दुज कन्ह। कन्ह मोकलि सु लेन नृप ॥
स्वामि मल्हि सह सथ्थ। मंत्र कारज्ज मंत्र अप ॥

लै आवौं प्रथिराज। पंग है विड्डुर सेनं॥
पष्ष बैन पथ आज। भयौ भर अंतर केनं॥
यों करिग देव दच्छिन सुद्दुज। दिसि सामंत षटंग बर॥
संजोग दासि वृन्दह नृपति। ठठुकि रह्यौ तणि थांननर॥१८७॥

॥ दूहा॥

मनहु बंध अनभूति धर। है तिन जानत थट्ट॥
बचन स्वामि भंग न करहि। सह देषहि नृप बट्ट॥१८८॥
अवलोकति तन स्वामि मन। मौ सामंतनि सुष्ष॥
हंसहि सुर सामंत मुष। कायर मानहि दुष्ष॥१८९॥
धीरत धीर ढिल्लेस बर। नहु दंती उभ रोभ॥
नृपति नयन तन अंकुरे। मनहु मद्द गज सोभ॥१९०॥

॥ कुंडलिया॥

देषि सुभर नृप नेन। आनि भौ आनंद चंद॥
अरि गंजे रूप नृप्प। बीर हक्के ग्रह दंद॥
बीर हक्के ग्रह दंद। मुकति लुट्टे कर रस्सी॥
आज सामि रन दैहि। बरै अच्छरि कुल लस्सी॥
काम तेज संभरी। देव कंदल जुध विष्षै॥
गुरू कल्ह उद्धरौ। टुट्टि धारा रवि पिष्षै॥१९१॥

॥ दूहा॥

हरषवंत नृप भ्रत्त हुअ। मन मज्झह जुध चाव॥
मिलत हथ्थ कंकन लष्यौ। कह्यौ कन्ह इह आव॥१९२॥
गगन रेन रवि मुंदि लिय। धर भर छंडि फुनिंद॥
इह अपुब्ब धीरत्त तुहि। कंकन हथ्थ नरिंद॥१९३॥
हथ्थह कंकन सिर तिलक। अच्छित लगे लिलार॥
कंठ माल तुअ कंठ नहि। कहि नृप कवन विचार॥१९४॥

॥ चौपाई॥

सुनि सुनि बचन भूमि सिर नायौ। क्रपन दान ज्यौं बंजि दुरायौ॥
पंच पंच श्रब लीन क चित्तर। छंडित बद्दि दियौ तब उत्तर॥१९५॥
बरिय बाल सुत पंगह राय। वह ब्रत भंग मोहि वृत जाइ॥
तिहि मुंधहि अब जुद्ध जुहाई। अथ्थिअ वासह देउं बताई॥१९६॥

तिहि तजि चितकियौ तुम पासं । छंडिय कन्ह रुदंत अवासं ॥
सौ सुभट्ट महि एक भट होइ । तौ नृप धनहि न मुक्कै कोइ ॥१९७॥
जौ अरि थाट कोरि ढल साज । तौदिल्लिय तषतदेहि प्रथिराज॥
इतनौ नृपति पुच्छियै तोहि । परनि मुक्कि सुंदरि इह होइ ॥१९८॥

॥ श्लोक ॥

जक्षकालेषु धर्मेषु । कामकालेषु शोभिता ॥
सर्वत्र वल्लभा बाला । संग्रामे नन गेहिनी ॥१९९॥

॥ चौपाई ॥

हम सौ रजपूत रु सुंदरि एक । मुक्कि जांहि ग्रह बंधहि तेक ॥
जौअरियनथटकोरिदलसाज हि । तौदिल्लियतषदेहिप्रथिराजहि॥२००॥

॥ कवित्त ॥

महि मंडन महिलान । जोग मंडन सुष मंडन ॥
दुष बंटन जम त्रसन । नेह पूषनि मन षंडन ॥
कासवंत सोभाय । पूर चित समर विमत्तन ॥
मय मुष दिष्षत मोह । लीन भी अनुरत रत्तन ॥
संसार सुबरनी सरम रुष । करहि सरन अनमुष्म रुष ॥
अरि धनिमुक्किधारन प्रपत । चलहि कित्त जुग एक मुष ॥२०१॥

॥ दूहा ॥

जग्गि काल ध्रुग काल कौ । सब्ब काल सोभित्त ॥
पूरन स्रब सोरथ्थ स्रग । मोकिल ना मोहित्त ॥२०२॥
भर बंकै अच्छरि बरन । रस बंके दिसि बाल ॥
दुहु बंके पारथ करन । चढ्ढि सुरत्तन साल ॥२०३॥
चलि चलि सूरत सथ्थ हुअ । रन निसंक मन भोंन ॥
सह अचार मुष मंगलह । नहहुँ करहि फिरगोंन ॥२०४॥
पति अंतर बिछुरन विपति । नृपति सनेह संजोग ॥
सुनत भयौ सुष कोंन बिध । दैव जिवावन जोग ॥२०५॥

॥ मुरिल्ल ॥

पानिपरस अरु दिट्ठबिलग्गिय । सा सुंदरि कामागिन जग्गिय ॥
षिन तलपह अलपह मन कीनो । ज्यों बर वारि गये तन मीनौ ॥२०६॥

अंगन अंग सु चंदन लावहि । अरुराजन लाजन समुझावहि ॥
दै चंचल अंचल द्रिग मूँदहि । बिरहायन दाहन रबि उद्दहि ॥२०७॥
फिरि फिरबालग बष्षनि अष्षिय। तासिष देंन बेंन बर सष्षिय ॥
बिन उत्तर सु मोंन मन रिष्षिय । मन बच क्रम पीतम रस कष्षिय॥२०८॥

॥ कवित्त ॥

बाली बिजन फिरंन । चंद चारी क्रिव्रम रस ॥
के घनसार सुधारि । चंद चंदन सोभति लस ॥
बहु उपाय बल करत । बाल चेतै न चित्रमय ॥
है उच्चार उचार । सखी बुल्लयति हयति हय ॥
श्रवनेंसु नाइ जंपै सु अलि । नाम मंत्र प्रथिराज बर ॥
आवस निवत्त अंगाद भय । तं निबलह द्रिग छिनक कर ॥२०९॥

॥ दूहा ॥

तन तज्जै संजोगि पिय । गहि रष्षी फिरि बाल ॥
जानि नछत्रिन परि गिरी । चंद सरद्दति काल ॥२१०॥

॥ अरिल्ल ॥

बहुत जतन संजोगि सभाए । सोम कमल दिनयर दरसाए ॥
उझकिझंकि दिध्योप्रनपत्तिय । पति दिष्षतमनमहि अलि रत्तिय॥२११॥
व्याहनाथसंजोगिसुलच्छन । जिहि तुम कर साह्यौ बर दच्छिन ॥
सा तुअ तात भए दल तत्ती । सरन तोह सुंदरि संपत्ती ॥२१२॥

॥ दूहा ॥

ता मुष मुंदिन मोद किय । अलियन जंपहु आलि ॥
दाधेऊ पर लवन रस । म्रतक न दिज्जै गारि ॥२१३॥
अंध न द्रप्पन दिष्षिहै । गुंग न जंपहि गल्ह ॥
अश्रुत नर गान न लहै । अबल न करै सबल्ल ॥२१४॥
में निषेद किन्नौ जु कथ । दुज अरु दुजिय प्रमान ॥
टरै न गंध्रब गंध्रबिय । बिधि कीनीव प्रमान ॥२१५॥

॥ श्लोक ॥

गुरजनं मनो नास्ति । तात आज्ञा बिवर्जितं ॥
तस्य कार्यं विनश्यंति । यावत् चंद्रदिवाकरौ ॥२१६॥

॥ दूहा ॥

इह कहि सिर धुनि सषिनि सो। दिषि संजोगिय राज ॥
जिहि प्रिय जन अंगुलि करै। तिहि प्रिय जन किहि काज ॥२१७॥
इह चिंतित बत्तीसु सुनि। क्रोध ज्वाल सरि अंब ॥
रही जु लिषिये चित्र में। ज्यों सरद्द प्रतिब्यंब ॥२१८॥

॥ कुंडलिया ॥

धुनत गवष्षन सिर लष्यौ। अंबुज मुष ससि अंब ॥
अनिल तेज झलहल कंपै। सरद इंद्र प्रतिब्यंब ॥
सरद इंद्र प्रतिब्यंब। चिंति चतुरानन आनन ॥
निरषि राज प्रथिराज। साज सुंदरि अपकानन ॥
हय सत भट्ट सु भूप। मग्ग भोहैं न गनंतन ॥
मानि बिसव्वा बीस। सीस धुनि धुनि न धुनंतह ॥२१९॥

॥ कवित्त ॥

झंकत नृप दष्षी बर बुल्लै। गंग निकट प्रतिब्यंब-सो हल्लै ॥
चिहलै पर्‌यौ चंद तरषीनौ। कै स्त्रग तिस्त्र देषि मन मीनौ ॥२२०॥
मुच्छि बाल संजोगि उठाई। देवर तर दिसि दिसि पट्ठाई ॥
कै श्रोतान सूर सुनि झूठे। कै कातर अबहीं निप दीठे ॥२२१॥

॥ दूहा ॥

ए सामंत जु सत्त कहि। पंग पुत्ति घटि मंत ॥
एक लष्ष भर लष्षियै। जै कढ्ढै गज दंत ॥२२२॥

॥ गाथा ॥

मदनं सरलति विविहा। जिव्हा रटयति प्रान प्रानेस ॥
नयन प्रवाहति विवहा। अह बांमा कंत कथ्थयं ॥२२३॥

॥ आर्या ॥

कहु लोभा सो चंद लासौ। मनमथ्थं पहुपांजलि ॥
बरन मान निसा दिवसे। धुनयं सीस जो मम ॥२२४॥

॥ दूहा ॥

किमि हय पुट्ठहि आरुहौं। घटि दल संगह राज ॥
भीर परत जो तजि चल्यौ। तब मो आवै लाज ॥२२५॥

तब हंसि जंप्यो नृप बयन । गहर न करियै अब्ब ॥
सब्ब पंग दल संहरों । सुंदरि लाज न तब्ब ॥२२६॥

॥ दूहा ॥

चव चंद पुंडीर इम । कह बल कथ्थहु पुब्ब ॥
पंग पंग पग नरिंद कौ । जग्ग बिध्वंस्यौ सब्ब ॥२२७॥
सुनत बाल छंड्यौ सु हठ । बर चढ़ी द्रिग बंक ॥
किधों बाल मन मोहिनी । कै विय उदित मयंक ॥२२८॥
बाले बल सामंत कलि । देखि सूर सम चित ॥
इन जु हीन बल जंपियै । ध्रिकत बुद्धि इन वृत्त ॥२२९॥

॥ दूहा ॥

परनि राव ढिल्ली मुषहि । ग्रहि लीनी कर बांम ॥
सम संजोगि नृप सोभियत । मनहु बने रति कांम ॥२३०॥

॥ चंद्रायना ॥

सुंदरि सोचि समुझ्झित गह गह कंठ भरि ॥
तबहि पानि प्रथिराज सुषंचिय बाह करि ॥
दिय हय पुट्ठिहि भोर सु सब्ब सु लच्छनिय ॥
करत तुरंत सुरंग सु पुच्छनि बच्छनिय ॥२३१॥

॥ कवित्त ॥

हय संजोगि आरुहिय । पुट्ठि लग्गी सु बांम नृप ॥
पति राका पूरन प्रमांन । अरक बैठे सु सूर बिप ॥
काम रितु रहि चंढी । काम रति दंपति राजं ॥
कै बिद्रम हिम संग । वियन ओपन छपि माजं ॥
सामंत सूर पारस नृपति । मधि सु राज राजंत बर ॥
ग्रह सत्त भान ससि बिटिकै । दिपत तेज प्रथमी सु पुर ॥२३२॥

॥ आर्या ॥

एकथ्थोय संजोई । नेकथ्थौ होइ समर नियोसौ ॥
अनि लेय यथा पदमं । अंदोलए राज रिदएवं ॥२३३॥

॥ दूहा ॥

मस अंदोलित चंद मुष । दिषि सामंत सरुष्ष ॥
अंदोलित प्रथिराज हुअ । सिर कट्टिय सुष दुष्ष ॥२३४॥

बय सु लग्गि एकत करह । कक्कर लग्गिय लाज ॥
बय जुग्गिनि पुर छलि कहै । लाज कहै भिरि राज ॥२३५॥

॥ चौपाई ॥

वै सुष सब्ब संजोगि बतावै । राजमरन दिसि पंथ चलावै ॥
दोई चित्त चढ़ी बर राजं । वै बिलास मरंन कहि लाजं ॥२३६॥

॥ दूहा ॥

मिष्टानं बर पान भय । नव भामिनि रस कोक ॥
अमर राइ इच्छति सबै । लाज सुष्ष परलोक ॥२३७॥

॥ चौपाई ॥

मो तजि मति चौहान सुजाई । ज्यों जलविंदु सब कित्ति समाई ॥
तौ तिय पन वय तज्जि दिषाई । तिय जिय जाहु ये लज्जन जाइ ॥२३८॥

॥ दूहा ॥

सुनत बचन लज्जिय वयह । उत्तर दीय न लज्ज ॥
वै विलास उत्तर दियौ । अज्जु लज्ज हम कज्ज ॥२३९॥
वै मुष कौपि प्रमान से । मुक्किय जुगति जुगत्ति ॥
ए हलका दंतीन के । धाए उज्जल कंति ॥२४०॥
वै तन कुरषि निरष्षयौ । लाज सु आदर दीन ॥
कलि नारद नीरद्द कवि । प्रकट करहु हम कीन ॥२४१॥
कहत भट्ट दल विषम है । तुही दल तुच्छ नरिंद ॥
परनि पुति जैचंद की । करहि जाइ ग्रह नंद ॥२४२॥
झुकित राज उत्तर दियौ । सो सथ सत्त सुभट्ट ॥
हूँ चहुआंन जु संभरी । भुज ठिल्लौ गज थट्ट ॥२४३॥
चल्यौ भट्ट संमुह तहां । जहं दल पंग अरेस ॥
जो इंछै नृप तुज्झ मन । टट्टौ षेत नरेस ॥२४४॥
परनि राइ ढिल्लिय सु मुष । रुष किन्नौ मन आस ॥
कह्यौ चंद नृप पंग दल । जुद्ध जुरे जम दास ॥२४५॥
चढ़िग सूर सामंत सह । नृप ध्रम्मह कुल लाज ॥
सुहर समुह दिष्षहि नयन । त्रिय जु बरिग प्रथिराज ॥२४६॥
गयौ चंद नृप बयन सुनि । जहं दल पंग नरिंद ॥
अरि आतुर अरि ग्रहन कौ । मनों राहु अरु चंद ॥२४७॥

॥ श्लोक ॥

कस्य भूपस्य सेनायां । कस्य बाजित्र बाजनं ॥
कस्य राज रिपू अरितं । कस्य सन्नाह पष्षरं ॥२४८॥

॥ दूहा ॥

छलि आओ चहुआंन नृप । भट्ट सथ्थ प्रथिराज ॥
तिहि पर गय हय पष्षरदि । तिहि पर बज्जत बाज ॥२४९॥

॥ गाथा ॥

सा याहि दिल्लि नाथो । सा यंतु जग्य विध्वंसनो ॥
परनेवा पंगपुत्री । जुद्ध मगंतं भूषनं ॥२५०॥

॥ दूहा ॥

सुनि श्रवननि चहुआंन को । भयो निसानन घाव ॥
जनु भद्दव रवि अस्त मनि । चंपिय बद्दल बाव ॥२५१॥

॥ कवित्त ॥

बजत धरद्धर सीस । धरनीय सेस कहि ॥
कुंडलेस कुंडलिय । कहय पन्न गति अरुल रहि ॥
अहि अहि कहि अहि नाम । संकभौ सीस सेस बर ॥
गहिन परै तिहि नाग । चित्त विभ्रम चित्रक पर ॥
कंपेस नाम कंपत भयौ । बहुत नाम तद्दिन लहिय ॥
जिन जिन उपाय रष्षिय इला । पंग पयानह तिहि कहिय ॥२५२॥

॥ कवित्त ॥

तब सु कन्ह चहुआंन । गहिय करवान रोस भरि ॥
असित लष्ष त्रिन गनिय । हनत हय गय पय निंदरि ॥
करत कुंभस्थल घाव । चाव अवगुन धरि धीरह ॥
तुबक तीर तरवार । लंगत संक्यौ न सरीरह ॥
कहि चंद पराक्रम कन्ह कौ । दिय ढहाय गेंवर समर ॥
उछरंत छिछ श्रोनित सिरह । मनहु लाल फरहरि चमर ॥२५३॥

॥ दूहा ॥

अद्ध अवन्निय चंद किय । तारस मारू भिन्न ॥
पलचर रुधिचर अंस चर । करिय रवन्निय रिन्न ॥२५४॥

॥ कवित्त ॥

चवद्दिसि रषि सूर। मद्धि रष्यौ प्रथिराजं ॥
ज्यौं सरद काल रस सोच। मद्धि ससि जुत्त बिराजं ॥
ज्यौं जल मद्धित जोत। तपति बड़वानल सोहं ॥
ज्यौं कल मद्धे जनम। रूप मधि रत्तौ मोहं ॥
इम मद्धि राज राष्यौ सुभर। नग्न सकल निंदौ सु बर ॥
सब मुष्ष पंग रुक्यौ सु बर। सो उप्पम जंप्यौ सु गिर ॥२५५॥

॥ चंद्रायना ॥

पह चारु रुचि इंद इंदीवर उद्दयौ ॥
नव बिहार नवनेह नवज्जल रुद्दयौ ॥
भूषन सुब्भ समीपनि मंडित मंड तन ॥
मिलि म्रदु मंगलकीन मनोरथ सब्ब मन ॥२५६॥

॥ श्लोक ॥

जितं नलिनी तितं नीरं। जितं नलिनी जलं तितं ॥
जतो गृह ततो गृहिणी। जत्र गृहिणी ततो गृहं ॥२५७॥

॥ दूहा ॥

मिलि मिलि बर सामंत सह। नृप रष्षन बिच्चार ॥
चलैं राज निज तरुनि सम। इहै सुमत्तह सार ॥२५८॥

॥ कवित्त ॥

पंचति रष्षहि पास। पंच धरणी बन रष्षहि ॥
पंच पृच्छि अनुसरहि। पंच तत्तै जिय लष्षहिं ॥
पंच भीत बंचियै। पंच आदर अमनाइत ॥
पंच पंच धर तीन। करुनि मंडिय बासन जति ॥
चहुआंन राइ सोमेस सुअ। इमग तेग बद्दै सुकिति ॥
अनुसरिय लाज राजन रवन। सुनौ राज राजंन पति ॥२५९॥
सुनौ सूर सामंत। सूर मंगल सुपत्ति तन ॥
लाज बनू सो पत्ती। राज सोपत्ति सूर घन ॥
कवि बानी सोपत्ति। जोग सोपत्ति ध्यान तम ॥
मित्रापति सोपत्ति। पत्ति बंधे सो आतम ॥

हम पत्ति पत्ति नृप जो चलै। तो पति हम पुज्जै रली ॥
सा ध्रम जु पेंज सामंत भर। रुक्के पंगह मेजली ॥२६०॥
सूर मरन मंगली। स्याल मंगल घर आयैं ॥
वाय मेघ मंगली। धरनि मंगल घरजल पायैं ॥
क्रियन लोभ मंगली। दान मंगल कछु दिन्नै ॥
सत मंगल साहसी। मंगन मंगल कछु लिन्नै ॥
मंगली बार है मरन की। जो पति सथ्थह तन षंडियै ॥
चढि षेत राइ पहु पंग सों। मरन सनंमुष मंडियै ॥२६१॥

सुनौ सूर सामंत। जिवन अहि‍डढ्ढ कालपुर ॥
अध्रम अकित्तौ मुष्ष। सा मनौ ग्रह दंड दुर ॥
मोह मंद बर जगत। भए बिधि चित्र चिताही ॥
अचित होइ जिहि जीत। पुन्न जित देषि पिषाही ॥
नन मोह चोह दुष सुष्ष तन। तौ जर जीवन हथ्थ भुत ॥
पहु तंग जंग मुक्कै नहीं। जौ जग जीबहि एक सत ॥२६२॥

अरे अमंत सामंत। मोहि भज्जंत लाज जल ॥
काम अग्गि प्रज्जरै। लोभ अधीन बाइ बल ॥
निस दिन चढ़े प्रमान। दुहूँ कन्ना परि सुझ्झी ॥
इह लग्गी कल पंक। कच्च जिहि जिहिबरबुझ्झी॥
को राव रंक सेवक कवन। कवन नृपति को चिक्करै ॥
ढिल्लीव दिसा ढिल्लिव नृपति। पंग फौज धर उप्परै ॥२६३॥

नह मन्निय मति राज। सब्ब सामंत सहित्तं ॥
बरजि ताम कविचंद। मन्न भन राजन बत्तं ॥
बहुरि दिन्न सामंत। गिरद रष्यौ फिर राजन ॥
फिरे भ्रत्य अप थांन। बिट लिन्ने ते जाजन ॥
बुल्यौ ताम जादव जुरनि। अद्धौ कन्ह सुनि नाह नर ॥
नृिप ब्याह हरांचितौ सुचित। घर सुतरुनि तरुनिय सुघर ॥२६४॥

सुनिय बत्त राजंन। कन्ह मन रीस अप्प चित ॥
पय लग्यौ नर नाह। धन्नि जंपी सु धन्नि हित ॥
बलिय बास न अनन्य। फिरत रोपिय सब संगिय ॥
बंध बारि बिथ्थारि। उद्ध चिंतान विलग्गिय ॥
जंपयौ राज जद्दौ नमिय। प्रथिम रज्ज इह ब्याह रह ॥

खनिय सु ग्रेह प्रथमाह यह । करहु सयन नृप सुष सह ।।२६५।।

।। दूहा ।।

मंजोगिय नयननि निरषि । सफल जनम नृप मानि ।।
काम कसाये लोयननि । हन्यौ मदन सर तानि ।।२६६।।
सुधि भूली संग्राम की । भूलि अप्पनिय देह ।।
जोन भयो बसि पंग दल । सो भयो बाम सनेह ।।२६७।।
नयन चरन कर मुष उरज । बिकसत कमल अकार ।।
कनक बेलि जनु कामिनी । लचकनि बारन भार ।।२६८।।
रवनि रवन मन राज भय । भयौ नैंन मन पंग ।।
सूरन सों संग्राम तजि । मंड्यौ प्रथम रस जंग ।।२६९।।
तव सुराज रवनिय निरषि । हसि आलिंगन विठ्ठ ।।
रचिय काम सयनह सुबर । दिय अग्या भर उठ्ठ ।।२७०।।

।। कवित्त ।।

बिनह भान पायान । इदं कमधज्ज जुद्ध दुअ ।।
सह्यो न बोलि संषुलै । बिरद पागार ब्रज्र भुअ ।।
सुकल षोलि कल्हार । झुकित कढ्यौ झाराहर ।।
बिनह अरुन उद्योत । अरुन उग्यौ धाराहर ।।
पहु बिन पुकार पहु उप्परिग । सु प्रह पहक फट्टी फहन ।।
उद्दिग सुतन अरिबर किरन । मिलिव चक्क चक्की गहन ।। २७१।।

।। वृद्धनाराच ।।

हयग्गयं नरब्भरं रथं रथंति जुट्टयौ ।।
मनों नरिंद देव देव झल्लरी सु बट्टयौ ।।
किनंकही तु रंग तुंग जूह गज्ज चिक्करं ।।
जु लोह छक्कि नष्षि भोमि षेत मुक्कि निक्करं ।।२७२।।
बजंत घाय सद्दकं ननद्द सद्द मुदरं ।।
गरब्बि देषि अग्गि ज्यौं बिदोष मन्न जो दुरं ।।
उठंत दिष्ट सूर की करूर अंषि राजई ।।
मनों कि सौकि वीय दिष्ट बंकुरीति साजई ।।२७३।।

उभै सयन्न क्रम्म यंक को न भूमि छंडयं ॥
जु मज्झि कंक भज्जि कोन सार अंग षंडयं ॥
बरंत रंभ रंभ भंति सार के दुझारयं ॥
जुधं जुधं बजंत सूर धार धीर पारयं ॥२७४॥
तुटंत श्रोन सीस द्रोन नंचि रीस हक्कयौ ॥
रचंत भोम बिद्र कार बीर बीर झक्कयौ ॥
परंत के उठंत फेरि मच्छ ज्यौं तरफ्फई ॥
रनं बिधान धीर बीर बीर बार जंपई ॥२७५॥

॥ दूहा ॥

रुंड मुंड षल षंड भुअ। मचि योगिनि बेताल ॥
चिल्हनि धष जंबुक गहकि। हर गुँथी गल माल ॥२७६॥
लै चिल्ही भ्रम्मिय सुभर। है हरि सिद्धि रूप ॥
बीर सीस चुंगल चंपै। गय ग्रधन्न अनूप ॥२७७॥
आनंदी पंषी सकल। चिल्हानी पूछि कंत ॥
कहि कहि गल्ह सुरंग बर। सुष दुष जीवन जंत ॥२७८॥
चिल्हानी बुलि पत्ति सों। ऊमंती बरजंत ॥
बड़ गुरजन बत्ती सुनी। सो दिठ्ठी दिषि कंत ॥२७९॥

॥ कवित्त ॥

केहरि रा कंठेरि। स्वामि सिंगिनि गर घत्तिय ॥
बरुन पास निय नंद। लोकपालन पति पत्तिय ॥
हसि हल्लक्कि हक्कारि। पंग पुत्तिय जानन पन ॥
चहुआंन रथ्थ सथ्थह चढ़िय। नंषि बथ्थ कमधज्ज बर ॥
अब देषि बाल लालन सु बर। सुतन ह्राल बिच्चै सु बर ॥२८०॥

॥ दूहा ॥

गुन कड्डिय रमनिय सु बर। डसनह पंग कुंआरि ॥
असि बर झर प्रथिराज हानि। सूर हथ्थ नर बारि ॥२८१॥
देषि संजोगिय पिय सु बल। श्रम जल बूँद बदन्न ॥
रति पति अहित पवित्त मुष। जालि प्रजालि मरन्न ॥२८२॥

॥ साटक ॥

घुरि निसान उनि भान कला कर मुद्दयौ ॥
श्रम सामंत नरिंद छिनक धर धुक्यौ ॥
सबिष पंग दल दिष्ट सरोस निहार्यौ ॥
अंचल अमृत संयोगि रेन मिस झार्यौ ॥२८३॥

॥ कवित्त ॥

समौ जानि कवि चंद । कहै प्रथिराज राज मुनि ॥
आदि क्रम्म तें करें । तास को सकै गुनिक गुनि ॥
सेस जीह संग्रहै । पार गुन तोहि न पावै ॥
तें जु करिय पहुपंग । मिलिय आरनि थर सावै ॥
नन कियौ न को करि है न को । जै जै जै लद्धी तरुनि ॥
ग्रिह जाइ अप्प आनंद करि । बढ़ै किति्त सब लोग पुनि ॥२८४॥

॥ दूहा ॥

इह कहि सु कवि समीप गय । गहिय बग्ग हैराज ॥
चल्यौ षंषि ढिल्ली सु रह । सुभर सु मन्यौ काज ॥२८५॥
प्रबल जलह जल हर चलिय । बलि बंधन बलि बार ॥
रथ चक्कां हरि करि करिय । परि प्रब्बत पथ्थार ॥२८६॥
उदय तरुनि नट्ठिग तिमिर । सजि सामंत समूह ॥
नृप आग्गै बद्दै सु इम । चलहु स्वामि करि कूह ॥२८७॥
चलन मानि चहुआंन नृप । बज्जै पंग निशान ॥
निमि जु इंद दुहुँ दल भयौ । विद्ध सहित बिन भान ॥२८८॥
हय गय करि अग्गें नृपति । षिझि चंपे प्रथिराज ॥
मो अग्गैं आजुहि रहै । टरिग दीह विय साज ॥२८९॥

॥ कवित्त ॥

पट्टै पल छुट्टत । कन्ह धाराहर वज्यौ ॥
जनुकि मेघ मंडलिय । बीर बिज्जलि गहि गज्यौ ॥
हय गय नर तुट्टंत । बिरह तुट्टिय तारायन ॥
तुट्टिय षोहनि पंग । राय क्षोनिय भारायन ॥
हल हलिय नाग नागिन पुरत । नागिन सिर बुढ्यौ रुहिर ॥
आवहि न संग सिंगान मन । मननि सीस मुक्कौ सु धर ॥२९०॥

दिष्षि सेन पहुपंग । आस ढिल्ली ढिल्ली तन ॥
चिंति कन्ह चहुआंन । पट्ठ छुट्ट्यो सुझ्यौ बन ॥
निपथ अप्प है जनिय । पंग जंपै जीवन गहु ॥
सु पथ सूर सामंत । जीह जीयत सु बैन लहु ॥
आवृत्त जात धंधो तिनं । सो धंधो जुरि भंजयौं ॥
बज्जियन जीव रुंध्यौ नृपति । मुकति सथ्थ है बज्जयौ ॥२६१॥

॥ पद्धरी ॥

कलहंत कन्ह कुप्पौ कराल । फरकंत मुंछ चष चढ़ि कपाल ॥
चिंती सु चित देयी प्रचंड । कहकहति कंक कर सूल मंड ॥२६२॥
गुररंत सिंघ आसन अरोह । बामंग वाह षप्पर सु सोह ॥
इहि भंति प्रसन सजि देव दंद । तहं पढ़त छंद अन्नेक चंद ॥२६३॥
षोलंत नयन जिहि समर रंग । भारथ्थ कथ्थ भीषम प्रसंग ॥
भज्जनह राय संकर पयान । षूनी न षग्ग षंडल षयान ॥२६४॥

॥ कवित्त ॥

चहूआंन सुज्जान । भूमि सर सेज्या सूतौ ॥
देषि बिअच्छरि बर । समूह बरनह सानूतौ ॥
जनु परित्रिय् परहंस । हंस आलिंगन मुक्कयौ ॥
भर भारी कन्हह । हनंत अवसान न चक्कयौ ॥
धर गिरत धरनि फुनि फुनि उठत । भारथ सम जिन बर कियौ ॥
इम जंपै चंद बरद्दिया । कोस दसह भूपति गयौ ॥२६५॥
जिम जिम तम जरजर्‌यौ । बिहसि बर धायौ तिम तिम ॥
जिम जिम अंत रुलंत । लष्ष दल तिन गनि तिम तिम ॥
जिम जिम करिवर परत । उठत जिम सीस सहित बर ॥
जिम जिम रुधिर झरंत । सघन घन बरषत सद्धर ॥
जिम जिम सु षग्ग बज्ज्यौ उरह । तिम तिम सुर नर रनि मन्यौ ॥
जिम जिम सु चाव धरनी पर्‌यौ । तिम तिम संकर शिर धुन्यौ ॥२६६॥
गह गह गह उच्चार । देव देवासुर भज्जिय ॥
रह रह रह उच्चार । नाग नागिनि मन लज्जिय ॥
बह बह बह उच्चार । सु रह असुरन धुनि सज्जिय ॥
त्रह त्रह त्रह तासंत । तुट्टि पायन पर तज्जिय ॥

मुह मुहह मुच्छ कर कन्ह तुअ । चमर छत्र पहु पंग लिय ॥
सिर बंध कंध असिवर ढरिग । पहर एक पट्ठ न दिय ॥२९७॥

पहर एक पर प्रहर । टोप असि बर बर बज्जिय ॥
बषर पषर जिन सार । पार बट्टन तुटि तज्जिय ॥
रोम रोम बर बिद्ध । सिद्ध किन्नर लिन्निय बर ॥
अस्त बस्त बज्री । कपाट दद्धीच हरी हर ॥
रुधि मंस हंस हरिबंस नर । दिव दिवंग मिटि अम्मिलित ॥
कन्नर कबंध घटि तंति तिन । सुबर पंग दिष्षिय षिलत ॥२९८॥

॥ दूहा ॥

पुर सोरों गंगह उदक । जोग मग्ग तिथ बित्त ॥
अद्भुत रस असिवर भयौ । बंजन बरन कवित्त ॥२९९॥

॥ कवित्त ॥

बेद कोस हरसिंघ । उभै त्रियत्त बड़ गुज्जर ॥
काम बान हर नयन । निडर निड्डुर भुमि सुज्झर ॥
छग्गन पट्ठ पलानि । कन्ह षंचिय द्रग पालह ॥
अल्ह बाल द्वादसह । अचल बिग्घा गनि कालह ॥
श्रृंगार बिंझ सलषह सुकथ । लषन पहारति पंचचय ॥
इत्तने सूर सथ झुज्झ तह । सोरों पुर प्रथिराज अय ॥३००॥
पर्‌यौ पेषि पाहार । राज कमधज्ज कोप किय ॥
पहु सोरों प्रथिराज । निकट दिष्ष्यो सुचिंति हिय ॥
गयौ राज जंगलिय । नाथ कनवज्ज मन्नि मन ॥
जग्य जोंग बिग्गार । लहिय जै पुनि हरिय तिनु ॥
आइयौ राइ महदेव तब । नाय सीस बोल्यौ बयन ॥
संग्रहों राज प्रथिराज को । सद्धों पहु जंगल सयन ॥३०१॥
घरिय च्यारि दिन रह्यो । घरिय दुअ बित्तक बित्तौ ॥
नको जीय भय गुर्‌यौ । नको हार्‌यौ न को जित्तौ ॥
पंच सहस सें पंच । लुथ्थि पर लुथ्थि अहुट्टिय ॥
लिषे अंक बिन कंक । नको झुज्झ्यो बिन षुट्टिय ॥
दो घरिय मोह मारुत बज्यो । करन अंभ बरष्यो निमिष ॥
तिरिगत्त राज तामस बुझ्यौ । दिषिय पंग संजोगि मुष ॥३०२॥

मुरझानो जैचन्द चरन। चंप्यौ हम बर तर॥
उतरि सेन सब पर्‌यौ। राव कढ्‌यौ हरवै कर॥
लेहु लेहु नृप करय। चवन चहुआंन बुलायौ॥
सूर वीर मंत्री प्रधान। मिलि कै समुझायौ॥
उत परे सथ्थ इत को गनै। असुगुन भय राजन गिर्‌यौ॥
धर हुतंप लान्यौ अमत करि। सीस धुनत नरवै फिर्‌यौ॥३०३॥

॥ कुंडलिया ॥

दिष्षि पंग संजोगि मुष। दुष किन्नौ दल सोग॥
जग्य जर्‌यौ राजन सधन। अबरन अहुति संजोग॥
अबरन अहुति संजोगि। कित्ति अग्गी जल लग्गी॥
ज्यों षल षट आदर्‌यौ। लीय पुत्रिय छल मग्गी॥
मुष जीवन अरु लाज। मनहि संकलपि सिलष्षी॥
निबल एम संकलै। आस लग्गी मय दिष्षी॥३०४॥

॥ दूहा ॥

चढ़ि चहुआंन दिल्ली रुषह। उड़ी दुहुँ दल षेह॥
छंडि आस चहुआंन पहु। गयौ पंग फिरि ग्रेह॥३०५॥

॥ कवित्त ॥

समझायौ तिन राइ। पाय लगि बात कहिय जब॥
जिके सूर सामंत। करौ गोनह न कोइ अब॥
फिर्‌यौ नृपति पहुपंग। सयन हुअ तह घर आयौ॥
रय ढिल्ली सुरतान। जान आवतह न पायौ॥
आयौ नरिंद प्रथिराज जिति। भुअन तीन आनन्द भयौ॥३०६॥

॥ दूहा ॥

पुर कनवज्ज कमंध गय। अरि डर गंट्ठिय अथ्थ॥
कहै चंद प्रोहित्त प्रति। तुम दिल्लिय पुर जथ्थ॥३०७॥
गन अनेक बिधि बिधि विचित्र। औपर गने कोइ गेउ॥
बिजै करत बिजपाल निज। लिय सु वस्तु दिव देउ॥३०८॥

॥ मुरल्लि ॥

पुर ढिल्ली आयौ प्रोहित्तह। मंन्यौ मन चहुआंन सुहित्तह॥
दिय थांनक आसन उत्तिम ग्रह। वर प्रजंक भोजन भल भष्षह॥३०९॥

दिल्लिय पति दिल्लिय संपतौ । फिरि षहुपंग राइ ग्रह जत्तौ ।।
जिम राजन संजोगि सु रत्तौ । सुइ दुइ करन चंद पहि मत्तौ ।।३१०।।

॥ कवित्त ॥

कनक कलस सिर धरहि । चर्वहि मंगल अनेक त्रिय ।।
षाटंबर बहु द्रब्य । सज्जि सब सगुन राज लिय ।।
ढरहि चौर गज गाह । इक्क आरती उतारहि ।।
इक्क छोरि करि केस । रेन चरनन की झारहि ।।
इम जंपहि चंद बरद्दिया । मुकताहल पुज्जंत भुअ ।।
घर आइजित्तिदिल्लियनृपति । सक्कल लोक आनंद हुअ ।।३११।।

॥ दूहा ॥

गौ अंदर प्रथिराज जब । भंडि महूरत ब्याह ।।
आय प्रिथा कहि बंध सम । करहु सु मंगल राह ।।३१२।।

॥ कवित्त ॥

निरषत द्रग संजोगि । गयौ प्रथिराज मोह मन ।।
उदय सूर उठि राज । काज किन्नौ सु ब्याह पन ।।
आप पंग प्रोहित्त । दीन सब बस्त संभारिय ।।
जे पठई जैचंद । ब्याह संजोगि सु सारिय ।।
परबेस बिंद कारन नृपति । आए बज्जन बज्ज घर ।।
पुंषे सु प्रथ्थ श्रृङ्गार करि । दीनी यिधि बिधि दान भर ।।३१३।।

॥ चंद्रायना ॥

अगर धुम्म मुष गौषह उनयो मेघ जनु ।।
तहय मोर मल्हार निरत्तहि मत्त घन ।।
सारंग सारंग रङ्ग पहुक्कहि पंषि रस ।।
बिज्जुलि कोकिल सानि झमक्कहि जासु मिसि ।।३१४।।

दादुर सादुर सोर नवप्पुर नारि घन ।।
मिलि सुर मधि मधु वृत्त मधुर सझ्झि मन ।।
सालक पंच पचीस प्रजंकति दून दस ।।
तहाँ अथ्थि परवीन सु बीनति दासि दस ।।३१५।।

के जुअ जुथ्थ जवादि प्रमादहि मंद गति ।।
केवल अंचल बाय निरूपहि सरद रति ।।

केवर भाष पराक्रत संक्रित देव सुर ।।
केवर बीन बिराजति राजहि बार बर ।।३१६।।

बन बिधि बिलसि बिलास असार सु सार किय ।।
दै सुष जोउ संजोगि प्रिथी प्रथिराज प्रिय ।।
ज्यों रति संगम मारन जानै रयन दिन ।।
केतकि कुसुम लुभाय रह्यौ मनु भ्रमर मन ।।३१७।।

।। गाथा ।।

अंबा अंबाह पत्ती । कंतौ कंताय दिठ्ठ सा दिठ्ठौ ।।
महिला मरम सु मिठ्ठौ । पतौ कंताइ इच्छि सिछांइ ।।३१८।।

।। दूहा ।।

भजै न राज संजोगि सम । अति सुच्छम तन जानि ।।
तब सु सषी पंगानि बर । रछी बुद्धि अप्पान ।।३१९।।
मधि अंगन नव दल सुतरु । पत्र मौर घन उट्टि ।।
इक मंजर पर भ्रमर भ्रमि । बास आस रस बिट्ट ।।३२०।।
भार भ्रमर मंजरिन मिग । तुटत जानि उटि पंषि ।।
कछु अंतर राजन सुनहि । बोलि बयन दिषि अंषि ।।३२१।।
रस घुट्टत लुट्टत मयन । नन डुलि मंजरि याह ।।
भार भगत कथ्थह सुनी । अलियल मंजरि याह ।।३२२।।

।। गाथा ।।

अप्पह आरुहि भ्रङ्ग । मग डरई मद्ध देषि झीनंगं ।।
पत्तली षग्ग धारा । हय गय कुंभस्थलं हनई ।।३२३।।
जे केहरि नन झीनं । तंत गज मत्त जूथयं दलए ।।
नव रमनी रमि राजं । एक पलं जम्भ सुष्यांइ ।।३२४।।

।। दूहा ।।

अलिय अलिय एकत मिलिय । रम सरवर संजोगि ।।
सो कवि चंद त्रय बरस रस । पुह प्रगटित रति भोग ।।३२५।।

बड़ी लड़ाई समय

॥ अरिल्ल ॥

अषाढे मासे दुतियानं, राज सभा मंडिय महिलानं।
सा इंछिनि दच्छिन पामारी, सील सुच्च पतिब्रत संचारी ॥१॥

मुक्की सा जदि पुत्ति पंगानी, न्याय बट्ट प्राया प्रीयानी ॥
सिंघासन राजन सनमानी, कैलाशी लच्छिय इह दानी ॥२॥

इक प्रोढह इक्कह मुगधानं, दुह लच्छन बंधे बंधानं।
इंछिनि प्रौढ पवित्र पुंआरी, मुगध संजोगिय पंग कुमारी ॥३॥

दुविधि प्रीति राजन प्रति पारी, चतुरत्तन चिंत्यौ बर नारी।
म्है बरनी बरुनी वर संच्य, बिनयं बल पंगज पति अंच्यौ ॥४॥

लिषि नेनं सु चिन्ह बिनानं, बसि करि मोहि सु मुष्य सयानं।
तिय परिमान तिषा परि जानं, इहां अंदेस जु है कछ आनं ॥५॥

हैं बिनया बिनया बर संच्यौ, कनवज्जनि बसि करि करपंच्यो।
बान पंच धरि काम बिनानं, धर धर धुक्कि परी सहि आनं ॥६॥

॥ दूहा ॥

पित्र घात सों मन मिलै, और बैर मिट जाइ।
सौत बैर अंतर जलनि, दिन प्रति ग्रीषम लाइ ॥७॥
मुष मिट्ठि बित्तां करै, मन में देत सराप।
बंटै प्रेम सु प्रीय कौ, अंतर दज्झै आप ॥८॥

॥ अरिल्ल ॥

इंछिनि इंछिन अच्छनि रष्षय, रा संजोइय प्रेम परष्षन।
दुज दिय हथ्थ प्रजंक संजोइय, निसिगतिमोहिकथा सुनितोइय ॥९॥

दिय पामारि पवित्र सुक, लिय संजोइय बंदि।
पन प्रजंक टट्टन टरति, गति न कहै सुर सद्दि ॥१०॥

॥ चौपाई ॥

रचि श्रृङ्गार अनोपम रूपं, चातुरता गति मति आनूपं।
मंगहि इष्ट सूकंमति गत्ती, बिधिपरजंक संयोगि संपत्ती ॥११॥

॥ कवित्त ॥

ससि रुन्नौ म्रग बद्धौ, कह्यौ सुक सप्त दीप तन।
तम सु देव पुलि पंग, जोति संदीप छिनहि छित।
हुई लज्ज अचलाय, कलिय मुद्ध गति जानं।
छिम छिम तमहर तिपति, परसि पुहुमुञ्जलि थानं।
नृप तुष्ठि काम कमलारमन, भवन दृष्टि रुचि रमन मन।
जिमजिम सुबिनय बिलसि प्रबल, तिम तिम सुक बुद्धिय प्रमन ॥१२॥

देषि बदन रति रहस, बुंद कन स्वेद सुब्भ बर।
चंद किरन मनमथ्थ, हथ्थ कट्ठे जड्डु डुक्कर।
सु कवि चंद बरदाय, कहिय उप्पम श्रुति चालह।
मनो मयंक मनमथ्थ पूज्यौ मुत्तायह।
कर किरनि रहसि रति रंग दुति, प्रफुलि कली कलि सुंदरिय।
सुक्र कहै सु किय इंछिनि सुनबि, पै पंगानिय सुंदरिय ॥१३॥

॥ कुंडलिया ॥

जो रस रसनन अनुदिनह, अधर दुराइ दुराइ।
सो रस दुज कन कन कर्यो, सषिन सुनाइ सुनाइ।
सषिन सुनाइ सुनाइ, हिये सुचि सुचि लज मन्नह।
सुथल बिथल थल कंपि, नेने नटकीय नहन्नय।
जियन मरन मिलि नेम, कह्यो अद्भुत प्रिय रस।
एक रस अंतर भेद, प्राय जानैं त्रिय जौ रस ॥१४॥

॥ मुरिल्ल ॥

कल कल बानी सुक्क प्रगासै, वृद्ध बाल बे कौतिक भासै।
को को दीष दीह तो बालं, जषी जेम तोहि तो कालं ॥१५॥

॥ दूहा ॥

राजय सुक पुच्छन बिगति, भयो इंछिनि दुष राज।
हूँ माया रस भुल्लयौ, नहु पायौ गुन काज ॥१६॥

॥ गाथा ॥

जीवं वारित रज्ञं, आयसं नथ्थिवै दुष्ष देहं।
भाविय भाविय गतनं, किं कारनं दुष्ष बालायं ॥१७॥

॥ दूहा ॥

जौ पुच्छै सुष दुष्ष मो, तौ मो एह अंदेस ।
देषि कहै बर बत्त मै, किहि गुन रचिय नरेस ॥१८॥
सुनि बाला बर बेन मुहि, मंत्र भेद बहु भेस ।
जौ बछै इंछिनि सहल, तौ मेटै अंदेश ॥१९॥

॥ कवित्त ॥

सुक पंजर करि हेम, माल मोतीन मंत्र जरि ।
धन सुगंध निकुरास, देस संष गुरिग हथ धरि ।
दस हथ्थी इंछिनि रसाल, माल त्रिय साल उनंगी ।
सेत रत्न बर सुमन, मुक्कि कर गंध सुरंगी ।
नर भेष नारि कंचुकि सरस, हुइ दासी बर भज्जि मन ।
क्रम चुकंति दुक्कति बिकम, बयन दरसि सज्जल नयन ॥२०॥

॥ अरिल्ल ॥

दस हथ्थी पंजर धर मुक्किय, दिसि संजोगि राज दिठि रुक्किय ।
नन तुच्छी नृपं पच्छिल रत्ती, ज्यों सर फुट्टै हंस प्रपत्ती ॥२१॥

॥ दूहा ॥

बक्र दिष्ट संजोग की, सुक कहि नृपहि सुनाइ ।
एक अचिज्ज इंछनिय, में ग्रह दिट्ठी राइ ॥२२॥
कहै सुक्क फुनि में लग, नृप सुनि कही न बत्त ।
मंत्र भेद उप्पर करी, करत चित्त अनुरत्त ॥२३॥
जो सुक नृप काननं ली, तब पुच्छयौ बर जोय ।
जो कछु कह्यौ सु कंत सौ, कह्यौ कंत जो होय ॥२४॥

॥ पद्धरी ॥

मति मान रूप लच्छीय मान, जीवन सु पीव आनंद थान ।
करवत्त दोष कप्पन बारि, बर कंक दिन्न बर सब्बं रारि ॥२५॥
घुम्मर बदन्न दुष दमित पाइ, ज्यौ आनंद जाइ कुमलाइ पाइ ।
मंडित्त मत्त तिहि चाहुआंन, मुष रुठ्ठ त्रीय नव रुठ्ठि प्रान ॥२६॥

॥ दूहा ॥

जिन बिन नृप रहते न छिन, ते भट कटि कनवज्ज ।
उर उप्पर रष्षत रहै, चढ़ै न चित हित रज्ज ॥२७॥

॥ कवित्त ॥

कटे कुटुंब मन मित्त, हित्तकारी काका भट।
कटे सूर सामंत, सजन दुज्जन दहंन ठट।
कटे सुसर सारे सहेत, मातुलह पछय फुनि।
कटे राज रजपूत, परम रंजन अवनी जन।
निसि दिन सुहाइ नह नृपति कौं, उच्च सास छंडै गहै।
अंतरित अग्नि उद्‌देग अति, सगति सूल सालै सहै ॥२८॥

॥ दूहा ॥

तब सारे अंते उरह, कीनौ मनौ विचारि।
नृप अग्गै उच्चार किय, धरि मुष अग्ग पंवारि ॥२९॥
चरन लग्गि युग जोरि करि, कह्यौ सुनहु महि इंद।
हमहि सिकार दिषाइये, मत्त मृगादि मयंद ॥३०॥

॥ दूहा ॥

क्यौ बराह बागुर रुकै, क्यौ बंधरि बर बानि।
क्यौ छुट्टै छर डोरि कै। क्यों जुट्टहि सक स्वान ॥३१॥
बिहँसि बयन अलसिन नयन। दिय इक उत्तर राय॥
गोठि करो गोरी सकल। तो अषेट षिलाइ ॥३२॥
कहि परनाम प्रनाम करि। राजिय मानिय बात॥
सकल षरच्च संजोगिता। साज सु जोवत प्रात ॥३३॥

॥ चौपाई ॥

झगरू साह साज सब। सो पहुँचाय नीरपथ दई॥
बारी सघन बरि बहु जहाँ। बैठि गोठ बिस्तारी तहाँ ॥३४॥

॥ दूहा ॥

तिन रिति मन मृगया करिय। चढ़ कहत चहुआंन॥
आगै आगै अँगनाँ। पीनीपंथ मिलान ॥३५॥
रानी पहुँची जानि कै। राजा चढ्यौ तुरंग॥
पायन पेलै वाइ ज्यों। धाय न जाय कुरंग ॥३६॥

॥ कवित्त ॥

पानीपंथह राय। आ षेलत आषेटक॥
फिरि पहार उज्जार। देषि बंधा आगे टक॥

नै विहंड बन हंकि । सकि नव षंड मंड बर ।।
मूर सूर बाघत । बाज छाडंत छंडि बर ।।
बेधहि बराह उच्छाह मन । तानि इक्क सर इक लहै ।।
पावै न जान सावज अबर । ऐन सैन मेलै गहै ।।३७।।
सोलंबी संतोष दास । नंदन नारायन ।।
तुच्छ पटे पग दौरि । पवन बिन न्रिपति परायन ।।
आसा लगि धावंत । रहै दासा तन लीयैं ।।
रेन दीह जानेन । रहै हिय हुकुम जु कीयै ।।
तिन कह्यौ आय प्रथिराज सहुँ । सिंध एक भाल्यौ निकट ।।
निठुर निसंक कंदर मड्यौ । बीज तेज लोचन ब्रिकट ।।३८।।

।। गाथा ।।

यौ सु न्रिपति श्रवन्न । गवनं कीन लीन कोवंडं ।।
कोमल पद संचारं । उच्चारं कोमलं भासं ।।३९।।

।। दूहा ।।

कंदर अंदर घूम किय । सिंध भस्म प्रथिराज ।।
पुब्ब पुरान नहीं सुन्यौ । अति गति होत अकाज ।।४०।।

।। पद्धरी ।।

त्रिन पत्त कढ्ढ लगि उठी झार । गइ गुहा मंझ धसि धूमि धार ।।
चट पट्ट सद्द सुनियै न कान । फुट्टिय सु झाल छुटै औसान ।।४१।।
सब जीय जंत भजि सैल तज्जि । धरराय झार पावक गरज्जि ।।
चष श्रवा संकि पारंत चीस । कलमलि मुनिंद मनभई रीस ।।४२।।
कोमल सु कमल द्रग श्रवै नीर । रद चंपि अधर कंपत शरीर ।।
जट जूट छूटि उरझंक पाय । म्रग चरम परम नंष्यौ रिसाय ।।४३।।
तमि तोरि डारि दिय अच्छ माल । निकर्‌यौ रिषीस बेहाल हाल ।।
गहि दर्भ हस्त बर नीर लीन । प्रथिराज राज कहु श्राप दीन ।।४४।।

।। गाथा ।।

गहि रिषि कहि बरबैनं । तजि संसार श्रापियं रायं ।।
मो द्रिग जिहि दुख दीन । तास तुमचच्छ कढ्ढाइं ।।४५।।

।। कवित्त ।।

तबहि चंद कवि दौरि । विप्र पद रह्यौ विप्र गहि ।।
छमि स्वामी अपराध । साध मुनि फुनि उद्धार कहि ।।

तुम सु षंड ब्रह्मंड। षंड नव तुम तप चल्लहि ॥
तुम ध्रंमन जीमूत। बरषि जीवन प्रति पल्लहि ॥
केहरि भरंम हम धूम किय। पायक बसिइय देव हुअ ॥
संकुचि नरिंद कंप्पे डरपि। थरपि हथ्थ सिर सोक सुअ ॥४६॥
चंद बदन्न मुन्निंद। कहै तुम नाम ठाम कहु ॥
तो मुष सबद रसाल। सुनत सुष होय हियें बहु ॥
तबहि भट्ट भाषंत। स्वामि मो नाम चंद कवि ॥
वह नरिंद प्रथिराज। लज्ज भरि रह्यौ देव दवि ॥
अब ह्वै कृपाल प्रभु उच्चरहु। कछुक देउ बरदान फिरि ॥
श्रप्पौ नरिंद फिरि उद्धरहु। जिहि पारंगत होहि तिरि ॥४७॥

॥ चौपाई ॥

हों बालक दुरवासा तनौ। सत्ति बात सब तोसौ भनौ ॥
इह न्रप होहि दियौ बरदान। तेरे कर मरिहें सुलतान ॥४८॥
यों कहि रिषि अंतर सकुचान। मुह अग्गै न्रप मुष कुम्हिलान ॥
देषि दया उर भई मुनिंद। बाल्यौ रिजु दुज आउ नरिंद ॥४९॥

॥ दूहा ॥

न्रप चहुआंन रु चंद कवि। अरु गोरी सुलतान ॥
इक्क महूरत में मरैं। इह हम दिय बरदान ॥५०॥
आनंद्यौ प्रथिराज सुनि। निज मन करै विचार ॥
देहन दनु देवन रहै। साह सहित भ्रम सार ॥५१॥
विन बेरां डेरां गयौ। भूपति भयौ उदास ॥
मरन हान सें मग्गई। सुनय सकल रनिवास ॥५२॥
डेरां लगै डरावना। रह्यौ कटक सब मौन ॥
नर नारी नारी छतें। मतो प्रान किय गौन ॥५३॥
चित्त चिंति संयोगिता। कोन कियौ मैं पाप ॥
भोग समें संयोग में। कंतह भयौ सराप ॥५४॥

॥ कवित्त ॥

कै मैं कट्टी जाय। गाय चरती हक्कारी ॥
कै कांसो पग छियौ। धूम मैं नागिनि मारी ॥

कै न्योति विप्र परहर्‌यौ । कर्‌यो नन बैन सासु को ।।
तेम लोंन बर हेम । चीर घर धर्‌यौ कासु को ।।
कीनी न कानि कै जेठ की । कै बोलउ ज्वाब न दयौ ।।
बुल्ल्यौ सराप रिषि कंत कौ । सती हारु क हर लयौ ।।५५।।
निसा एक माधव सु मास । ग्रीषम रिति आगम ।।
निसा जाम पच्छलौ । सुपन राजा लहि जागम ।।
सेत चीर छोनी । पवित्र आभ्रंन अलंकिय ।।
मुंकत बंध त्राटंक । बंध बेनी अवलंकिय ।।
निज बैरि धारि कज्जल नयन । हरहराह सद्दह करिय ।।
कानिक्क राइ बंसह विषम । रष्षि रष्षि धरनी धरिय ।।५६।।

।। साटक ।।

का तूं सुंदर हुंधिर किमहिता इच्छा परा बांछिता ।।
को बांछा बर राज को बर रुची दाताग्य रूपानिवा ।।
नं नं नं न्रप जान दानरुचयं रूपं न विद्धी त्रयं ।।
षड गंधार समार दुत्तर अरी सो मे वरं सुंदरं ।।५७।।

।। दूहा ।।

इस बसुधा सुपनंत दिय । रजगति रजन विचार ।।
बिलसत दिन ग्रीषम अरध । सुधपिय पंग कुआरि ।।५८।।
रष्षि रष्षि उच्चार बर । गति सिंघल अतिरूप ।।
सुपनंतर चहुआंन सों । चलन कहत इन भूप ।।५९।।
धरकि चित्तजोगिनि न्रपति । दिषि प्रभात द्रुति गान ।।
भान किरन दिसिदिसि फटी । तम घटि तमचर गान ।।६०।।

।। कवित्त ।।

जग्गि जलनि प्रथिराज । जग्गि संजोग सुपनि कहि ।।
सो सुपनंतर जंपि । पत्ति दिट्ठि जु रत्ति महि ।।
सेत वस्त्र उत्तङ्ग । चित्त हरनी कुटिला गति ।।
बैसम गुन गुर दुत्ति । दुत्ति उजलंत कुटीरति ।।
ऊँचै बचन्न बर कठिनह । घन कुलटा गति चलन कहि ।।
भवभवसि गत्ति न्रिम्मान कहि । नन जानै भव गतिय बहि ।।६१।।
सुनि सुकंत धरइंद । जोयं दिद्यौ जुग्गिनि गति ।।
पत्त मित्त दारा न बंध । रोकन पितुरनि पति ।।

तुम सु षंड ब्रह्मंड । षंड नव तुम तप चल्लहि ॥
तुम ध्रंमन जीमूत । बरषि जीवन प्रति पल्लहि ॥
केहरि भरंम हम धूम किय । पायक बसिइय देव हुअ ॥
संकुचि नरिंद कंप्पे डरपि । थरपि हथ्थ सिर सोक सुअ ॥४६॥
चंद बदन्न मुन्निंद । कहै तुम नाम ठाम कहु ॥
तो मुष संबद रसाल । सुनत सुष होय हियें बहु ॥
तबहि भट्ट भाषंत । स्वामि मो नाम चंद कवि ॥
वह नरिंद प्रथिराज । लज्ज भरि रह्यौ देव दवि ॥
अब ह्वै कृपाल प्रभु उच्चरहु । कछुक देउ बरदान फिरि ॥
श्रप्पौ नरिंद फिरि उद्धरहु । जिहि पारंगत होहि तिरि ॥४७॥

॥ चौपाई ॥

हों बालक दुरवासा तनौ । सत्ति बात सब तोसौ भनौ ॥
इह न्रप होहि दियौ बरदान । तेरे कर मरिहें सुलतान ॥४८॥
यों कहि रिषि अंतर सकुचान । मुह अग्गै न्रप मुष कुम्हिलान ॥
देषि दया उर भई मुनिंद । बाल्यौ रिजु दुज आउ नरिंद ॥४९॥

॥ दूहा ॥

न्रप चहुआंन रु चंद कवि । अरु गोरी सुलतान ॥
इक्क महूरत में मरैं । इह हम दिय बरदान ॥५०॥
आनंद्यौ प्रथिराज सुनि । निज मन करै विचार ॥
देहन दनु देवन रहै । साह सहित भ्रम सार ॥५१॥
बिन बेरां डेरां गयौ । भूपति भयौ उदास ॥
मरन हान सें मग्गई । सुनय सकल रनिवास ॥५२॥
डेरां लगै डरावना । रह्यौ कटक सब मौन ॥
नर नारी नारी छतें । मतो प्रान किय गौन ॥५३॥
चित्त चिंति संयोगिता । कोन कियौ मैं पाप ॥
भोग समें संयोग में । कंतह भयौ सराप ॥५४॥

॥ कवित्त ॥

कै मैं कट्टी जाय । गाय चरती हक्कारी ॥
कै कांसो पग छियौ । धूम मैं नागिनि मारी ॥

कं न्योति विप्र परहर्‌यौ। कर्‌यो नन बैन सासु को ॥
तेम लोंन बर हेम। चीर घर धर्‌यौ कासु कों ॥
कीनी न कानि कै जेठ की। कै बोलउ ज्वाब न दयौ ॥
बुल्ल्यौ सराप रिषि कंत कौ। सती हारु क हर लयौ ॥५५॥
निसा एक माधव सु मास। ग्रीषम रिति आगम ॥
निसा जाम पच्छलौ। सुपन राजा लहि जागम ॥
सेत चीर छोनी। पवित्त आभ्रंन अलंकिय ॥
मुंकत बंध ताटंक। बंध बेनी अवलंकिय ॥
निज बैरि धारि कज्जल नयन। हरहराह सद्दह करिय ॥
कानिक्क राइ बंसह विषम। रष्षि रष्षि धरनी धरिय ॥५६॥

॥ साटक ॥

का तूं सुंदर हुंधिर किमहिता इच्छा परा बांछिता ॥
को बांछा बर राज को बर रुची दाताग्य रूपानिवा ॥
नं नं नं न्रप जान दानरुचयं रूपं न विद्धी त्रयं ॥
षड गंधार समार दुत्तर अरी सो मे वरं सुंदरं ॥५७॥

॥ दूहा ॥

इस बसुधा सुपनंत दिय। रजगति रजन विचार ॥
बिलसत दिन ग्रीषम अरध। सुधपिय पंग कुआरि ॥५८॥
रष्षि रष्षि उच्चार बर। गति सिंघल अतिरूप ॥
सुपनंतर चहुआंन सों। चलन कहत इन भूप ॥५९॥
धरकि चित्तजोगिनि न्रपति। दिषि प्रभात द्रुति गान ॥
भान किरन दिसिदिसि फटी। तम घटि तमचर गान ॥६०॥

॥ कवित्त ॥

जग्गि जलनि प्रथिराज। जग्गि संजोग सुपनि कहि ॥
सो सुपनंतर जंपि। पत्ति दिट्ठि जु रत्ति महि ॥
सेत वस्त्र उत्तङ्ग। चित्त हरनी कुटिला गति ॥
बैसम गुन गुर दुत्ति। दुत्ति उजलंत कुटीरति ॥
ऊँचै बचन्न बर कठिनह। घन कुलटा गति चलन कहि ॥
भवभवसि गत्ति न्रिम्मान कहि। नन जानै भव गतिय बहि ॥६१॥
सुनि सुकंत धरइंद। जोय दिद्यौ जुग्गिनि गति ॥
पत्त मित्त दारा न बंध। रोकन पितुरनि पति ॥

दिष्टमान रीकै प्रमान । चच्छि अंछनि लच्छि कुछी ॥
भोग बिना बंधि जगत । भ्रम्मवय जग त्रय तुछी ॥
मायाति नट्ट संसारनिय । त्रिप चच्चवि मुक्के जगत ॥
जीवन्न प्रान प्रापति जबसु । तब लग इह भावी विगति ॥६२॥

॥ मुरिल्ल ॥

हंसि आलिंगन दै चहुआनं । पिय मयूष दंपति रसपानं ॥
सुरत सुरत मंनं बर मत्तं । करहि सार संसार सुरत्तं ॥६३॥

॥ कवित्त ॥

तब सु साहि गज्जनै । दूत ढिल्लीय पठाए ॥
जु कछु तंत कौ मंत । अंत कहि कहि समुझाए ॥
लै आवहु जंगल नरेस । पब्बरि सब सुद्धिय ॥
राज काज चहुआंन । सकल सायंत सुबुद्धिय ॥
फुरमान साहि सिरधिरि लियो । भेष कियौ सोफी तिनह ॥
उभै पष्ष क्रम पंथह चलै । कागर काइथ कर दिनह ॥६४॥

॥ दूहा ॥

चर बर बत्तति सिद्धि किया । झुकि किय धाव निसान ॥
सत्त सहस कग्गर फटे । देस देस सुरतान ॥६५॥
फुट्टिय वत्त प्रचार जर । घर घर ढिल्लिय थांन ॥
चढ्य साहि चहुआंन पर । चढि हय गय असमांन ॥६६॥
बढि आव ढिल्ली सहर । चढ्यौ साहि सुरतान ॥
घर अंगन मंगन रुरिग । सुनत सूर अकुलान ॥६७॥
ग्रह बंभन ग्रहवान नर । ग्रह छत्ती छन्न वृन्न ॥
भई बाति नर नारि मुष । सब लग्गै सन सन्न ॥६८॥

॥ मुरिल्ल ॥

लग्गौ दिल्लिय पुर जामह । नगर सेठ पहि गय प्रजतामह ॥
मिलिय सकल एकंत महाजन । किम बुज्झै रतिवंतौं राजन ॥६९॥

॥ दूहा ॥

सुने गहंगह विप्र दर । आयौ उट्टै ताह ॥
तब दरपति सनमुष कहिय । आये श्रीपति साह ॥७०॥

प्रजा षलक सथ उम्मही । जे बड़ दिल्ली साह ।।
सो आये दरबार तुम । कोइ इक काज उगाह ।।७१।।
आए आतुर राज गुर । करिय बिबह महमान ।।
आदरि करि आसन्न दिय । संबोधे बर बानि ।।७२।।

।। कवित्त ।।

सुनि अवाज सुरतान । षलक भज्जिय नद मंडल ।।
कर कुसाव मेहरा । दान अरु मान अषंडल ।।
मिलि परवान पुंडीर । सहार लुट्यौ द्रव साइय ।।
हनि सोदागिरि बानि । बनिज उन्नित पट पाइय ।।
अग्यान लुपै अग्या न्रपति । सत संपति संभह धनी ।।
गुरराज काज अवसर अवसि । प्रज पुकार मंडिय धनी ।।७३।।
हम सु कज्ज प्रब पंज । पढ़ै पत्ता प्रभु रंजहि ।।
हम जु लच्छि आसरहि । चरन चंदन घसि बंदहि ।।
हम सुदेव जग्योपवीत । सोहै तन मंडन ।।
हम बिरद्द बंदि न पढंत । पापह पर षंडन ।।
इह विकट भट्ट चंदहि चरित । कहैं सुमानै न्रप नवल ।।
परतष्षि द्रग्ग पुच्छन चलौ । मंत्र घत्त अस्त्रह सबल ।।७४।।

घर बाहर षंडबन बुद्धि । बंधवन रुधि छुट्टिय ।।
घर बाहर बामंन । छलित्त बस दोष सुथट्टिय ।।
घर बाहर जुरि जरासिंध । गुर राज जुद्ध किय ।।
घर बाहर सुर पत्ति । अस्ति दद्धीच मंगि लिय ।।
जिहि जियत धर नित्तर और प्रभु । तिहि जननी जुब्बन हरिय।।
बंभर सुकज्ज अज्ज तुम । प्रज पुक्कार मंडी करिय ।।७५।।

।। दूहा ।।

आदर चंद अनंत किय । ग्रह आवत गुरु राम ।।
सब सुत त्रियनि सु चरन परि । सिर फेरिग सब हाम ।।७५।।

।। मुरिल्ल ।।

तब गुरराज कवि बुझ्झै । तुहि बरदाइ तीन पुर सुझ्झै ।।
अहि निसि देव सेव गुरुठानिय । सो षट मास मिले बिनजानिय ।।७७।।

॥ दूहा ॥

हस्यौ चंद बर विप्र सों। तुम जानहु बहु भंति ॥
जिहि कामिनी कलहौ कियौ। सो जामिनि बिलसंति ॥७८॥

॥ भुजंगी ॥

मिले बिप्र भट्ट अनूपंम धामं। मनो हिंदवानं सावनं तकामं ॥
उभै सूर सांई सु अग्या बिनानं। चढे एक चौडोल नर एक जानं ॥७९॥

॥ कवित्त ॥

दिष्षि दइय दरबार। पंग कूंअरि चर बारहि ॥
नारि भेष नर वस्त्र। सस्त्र लकरी कर झारहि ॥
मार मार उच्चार। बाल तरुनी सुगंध रस ॥
तुरिय नथ्थि गज नथ्थि। नथ्थि रथ बिरद बंदि जस ॥
बाजहि बिसाल रनतूर रव। भवर भीर भामिनि भवन ॥
दिठि परत लरथ्थर पय परत। नकरि जीय अग्गद् भवन ॥८०॥

॥ दूहा ॥

वर किंचिक पुब्बह न्रपति। सुनि कलरव कबि बानि ॥
धाय चंद दरसन कियौ। ध्रम्म परिग्गह ठानि ॥८१॥
सुनि कबि बानि प्रमान धन। कहि इंछनी से जाइ ॥
जु कछु कहौ बरदान बर। ज्यों हित दिसा पसाइ ॥८२॥
कग्गर अप्पह राज कर। मुष जंपह इह बत्त ॥
गौरी रत्तौ तुअ धरनि। तूं गोरी रस रत्त ॥८३॥
सुनि कग्गर फार्‌यो सुकर। धर रष्षै गुर भट्ट ॥
तरकि तोन सज्यौ न्रपति। जिम बदल्यौ रस नट्ट ॥८४॥
प्रिय अप्रिय दिष्षौ बदन। किय जिय नृप भौ सथ्थ ॥
हूँ पूछों बर बरह तुहि। कहि सम दौरति कथ्थ ॥८५॥
अद्‌भुत इक दिष्षौ नृपति। रयनि गलित षिन प्रात ॥
सुरति एक सम्मुह रही। सा सुपनंतर बात ॥८६॥

॥ कवित्त ॥

सुनि उट्टिय संयोगि। बचन जै जै जंपत जस ॥
धनि सूरति चहुआंन। राज सिंगार बीर रस ॥

हक्क मरन सुर नरां। मरन सिध साधक मुक्कै ॥
मरन रहै जग नाम। चित्त रष्षत म्रत चुक्कै ॥
अध-अध करे अरियन दुअध। तूँ उधतदि अहधंग हौं ॥
सामंतन को सो मंत करि। राजस अप्प पधारिहौं ॥८७॥

सुपनंतर पुच्छनह। राजगुर कबिगुर बुल्लिय ॥
सो सुपनंतर सुनबि। तेन मुख तिन प्रति पुल्लिय ॥
सुबर हथ्थ दै मथ्थ। अभय पंजर पढि दिन्नो ॥
सहस कलस भरि षीर। अरघ रवि ससि को किन्नो ॥
दसबलि दिसान दस महिष हनि। मित अनंत मित दान दिय ॥
तिहि दिवस देव प्रथिराज दर। संझ सुभर भर मद्दन किय ॥८८॥

॥ दूहा ॥

आवस्यक भावी बिगति। कहा महिष बध होइ ॥
जो जतिननि टारी टरै। नल पंडव सम कोई ॥८६॥

॥ कवित्त ॥

करिय सुचित भर सब्ब। राज दिन्नेश द्रव्य भर ॥
भंगि मदन श्रृङ्गार। गज्जबर पट्ट मद्द झर ॥
रयन कुमर आभासि। दीन माला मुत्ताहल ॥
असी बंधी निज पानि। बंदि कीनौ कोलाहल ॥
आरोहि गज्ज कुम्मार निज। पच्छ बध सा सिंधु किय ॥
जोगिनिय बंदि चहुआंन पहु। क्रत्य काज मन्नेव इय ॥६०॥

॥ कवित्त ॥

उठ्ठि महल प्रथिराज। मंगि अरोहन बाजिय ॥
रावल ग्रथम चढाय। चढ्यौ चहुआंन सुताजिय ॥
करि अस्तुति सम सिंध। तुमहि बड्डं बड्डांइय ॥
तुम जोगिंद जग जित्त। कित्ति तुम कहिय न जाइय ॥
परसंस करत अन्नेक परि। करि डेरा रावर समर ॥
चढ्ढनह बर निसि सेष कहि। आयो बज्जन बजत घर ॥६१॥
बाजि घरिय घरियार। साहि उत्तरिय सिंधुनद ॥
विषम बाव उड़ि भ्रिंग। सिंधु छुट्यौ कि सद्द मद ॥
तमसि तमसि सामंत। राजराजस किय तामस ॥

॥ दूहा ॥

हस्यौ चंद बर विप्र सों । तुम जानहु बहु भंति ॥
जिहि कामिनी कलहौ कियौ । सो जामिनि बिलसंति ॥७८॥

॥ भुजंगी ॥

मिले बिप्र भट्ट अनूपंम धामं । मनो हिंदवानं साबनं तकामं ॥
उभै सूरसांई सुअग्या बिनानं । चढे एक चौडोल नर एक जानं ॥७९॥

॥ कवित्त ॥

दिष्षि दइय दरबार । पंग कूंअरि चर बारहि ॥
नारि भेष नर वस्त्र । सस्त्र लकरी कर झारहि ॥
मार मार उच्चार । बाल तरुनी सुगंध रस ॥
तुरिय नथ्थि गज नथ्थि । नथ्थि रथ बिरद बंदि जस ॥
बाजहि बिसाल रनतूर रव । भवर भीर भामिनि भवन ॥
दिठिपरत लरथ्थरपयपरत । नकरि जीय अग्गद् भवन ॥८०॥

॥ दूहा ॥

वर किंचिक पुब्बह न्रपति । सुनि कलरव कबि बानि ॥
धाय चंद दरसन कियौ । ब्रम्म परिग्गह ठानि ॥८१॥
सुनि कबि बानि प्रमान धन । कहि इंछनी से जाइ ॥
जु कछु कहौ बरदान बर । ज्यों हित दिसा पसाइ ॥८२॥
कग्गर अप्पह राज कर । मुष जंपह इह बत्त ॥
गौरी रत्तौ तुअ धरनि । तूं गोरी रस रत्त ॥८३॥
सुनि कग्गर फार्‌यो सुकर । धर रष्षै गुर भट्ट ॥
तरकि तोन सज्यौ न्रपति । जिम बदल्यौ रस नट्ट ॥८४॥
प्रिय अप्रिय दिष्षौ बदन । किय जिय नृप भौ सथ्थ ॥
हूँ पूछों बर बरह तुहि । कहि सम दौरति कथ्थ ॥८५॥
अद्‌भुत इक दिष्षौ नृपति । रयनि गलित षिन प्रात ॥
सुरति एक सम्मुह रही । सा सुपनंतर बात ॥८६॥

॥ कवित्त ॥

सुनि उट्टिय संयोगि । बचन जै जै जंपत जस ॥
धनि सूरति चहुआंन । राज सिंगार बीर रस ॥

हक्क मरन सुर नरां । मरन सिध साधक मुक्कै ।।
मरन रहै जग नाम । चिन्न रष्षत म्रत चुक्कै ।।
अध-अध करे अरियन दुअध । तूँ उधतदि अहधंग हौं ।।
सामंतन को सो मंत करि । राजस अप्प पधारिहौं ।।८७।।

सुपनंतर पुच्छनह । राजगुर कबिगुर ब्रुल्लिय ।।
सो सुपनंतर सुनबि । तेन मुख तिन प्रति पुल्लिय ।।
सुबर हथ्थ दै मथ्थ । अभय पंजर पढि दिन्नो ।।
सहस कलस भरि षीर । अरघ रवि ससि को किन्नो ।।
दसबलि दिसान दस महिष हनि । मित अनंत मित दान दिय ।।
तिहि दिवस देव प्रथिराज दर । संझ सुभर भर महन किय ।।८८।।

।। दूहा ।।

आवस्यक भावी बिगति । कहा महिष बध होइ ।।
जो जतिननि टारी टरै । नल पंडव सम कोई ।।८६।।

।। कवित्त ।।

करिय सुचित भर सब्ब । राज दिन्नेश द्रव्य भर ।।
भंगि मदन शृङ्गार । गज्जबर पट्ट मद्द झर ।।
रयन कुमर आभासि । दीन माला मुत्ताहल ।।
असी बंधी निज पानि । बंदि कीनौ कोलाहल ।।
आरोहि गज्ज कुम्मार निज । पच्छ बध सा सिंधु किय ।।
जोगिनिय बंदि चहुआंन पहु । क्रत्य काज मन्नेव इय ।।६०।।

।। कवित्त ।।

उठ्ठि महल प्रथिराज । मंगि अरोहन बाजिय ।।
रावल ग्रथम चढाय । चढ्यौ चहुआंन सुताजिय ।।
करि अस्तुति सम सिंध । तुमहि बड्डं बड्डांइय ।।
तुम जोगिंद जग जित्त । कित्ति तुम कहिय न जाइय ।।
परसंस करत अन्नेक परि । करि डेरा रावर समर ।।
चढ्ढनह बरनिसि सेष कहि । आयो बज्जन बजत घर ।।६१।।
बाजि घरिय घरियार । साहि उत्तरिय सिंधुनद ।।
विषम बाव उड़ि भ्रिंग । सिंधु छुट्यौ कि सद्द मद ।।
तमसि तमसि सामंत । राजराजस किय तामस ।।

घुमरि घुमरि नीसान। थांन जग्गे मन पावस ॥
निसि अद्ध अनेही पीय तिय। पिय पिय पिय पप्पीह तिय ॥
पंपनिय फरिक अंषिय अंनषि। उदय अनंद सुबीर किय ॥९२॥

॥ मोतीदाम ॥

जयंजय सद्द बदै अहुँओर। करै जनु प्रात सिषंडिय सोर ॥
झनक्किय भेरि सुझझ्झर बद्द। रनक्किय बरि नफेरि सद्द ॥९३॥
हरक्किय झूझ सुराज रबद्द। भरक्किय नाग गयो सिर लद्द ॥
तरक्किय तुङ्ग तुरङ्गन हीस। सरक्किय सप्पय सेसनि सीस ॥९४॥
षरक्किय पष्षर पष्षर तोन। ढलक्किय ढाल सुढल्लिय प्रोन ॥
हलक्किय हाल फवज्जिय सूर। धरक्किय धाम सुकातर कूर ॥९५॥
कथं कथमार गुमान उमान। दुअंदसकोस मिलान मिलान ॥
सुं हिंदुअ मेछ बज्यौ रन तोल। गयौ दिव देव कबी दिय बोल ॥९६॥
निमेषक भूमि अयामह अंग। चढ्यौ जनु इंद्र धनुक्कह रंग ॥
जयजय सद्द करी तिहि बीर। कह्यौ तिनि राज रवन्नह पीर ॥९७॥

॥ कुंडलिया ॥

न्रप पयान पोमिन परिष। घटि साहस घाट एक ॥
सुकथ केलि पीयूष पिय। जतन करहि सषि केक ॥
जतन करहि सषि केक। हाय करि जै जै जंपहि ॥
दंत कष्ट कर मींडि। थरकि थरहर जिय कंपहि ॥
इह प्रयान नृप करत। षरी संजोगि धरा धपि ॥
सषी करत सब जतन। चलत पवान तहाँ नृप ॥९८॥

॥ त्रोटक ॥

जतनं जननं किय झंझलियं। दिषि दीपक भोंन भरुयौं सुहियं ॥
भवन भवनं भवनां गरियं। धर मुच्छि परी बुधि सागरियं ॥९९॥
ससि सूर चयं रवि जोग ससी। विष ज्वाल असी सुमनं विगसी ॥
द्रिग चंचल अंचल सोमुदयं। बिरहा उर उग्गं ग्रसी सुधियं ॥१००॥
अहि घुट्टि लिय बयरं जुलियं। पह तुट्टि सुधा निधि की विधियं ॥
वर बिंब बिलोकि सषी करियं। असु आसिक नासिकंसे झरियं ॥१०१॥
अह कट्ठहि निठ्ठ निसान घटे। बिरही घटिका जनु अग्गि पढै ॥
बिरही बरनेह अनंग कसं। भए जानि कि रोग त्रिदोस बसं ॥१०२॥

सुवठी बिरही न घटे न घटं । सुचठी जनु बेलिय अ्रष बटं ॥
जल नेननि बूंद परै कुचयं । तिनकी उपमा नयनं संचयं ॥१०३॥
जुरठी हुति पुब्ब कमोद कली । तिहि तारक सोम बसीठ हली ॥
इहि सारन प्रान न मुक्कि पती । तिन मंडि रहें दुष देषि जती ॥१०४॥
चल चंदन चीरति सीर करै । लहरी विष जानित प्रान हरै ॥
सषि सूंठिन मूढ रसे सुतनं । घन सारनि हारनि नारिथनं ॥१०५॥
नटि नारिय नारिय पानि गहै । तजि जानि न अंक वियोग सहै ॥
पल ध्याननि आननि नेन चहै । अलि ओटन जोट वियोग सहै ॥१०६॥
घन घूमरि झूंमि समीप रहै । ठग ठग्ग लगी चष कोन चहै ॥
षिन दाषिन षीनह षीन भई । घरियार निहारत प्रात भई ॥१०७॥

॥ कुंडलिया ॥

घर घयार बज्जिग विषम । हलिग हिंदु दल हाल ॥
दुनिया चंद पूनिम जिसैं । बर बियोग बढि बाल ॥
बर बियोग बढि बाल । लाल प्रीतम कर छुट्टौ ॥
है कारन हा कंत । आसआसु जानि न फुट्टौ ॥
देषंत नैन सुज्झै न दिसि । परि भूमि संथार ॥
संजोगी जोगिन भई । जब बज्जिग घरियार ॥१०८॥

॥ कवित्त ॥

वही रत्ति पावस्स । वही मघवान धनुष्षं ॥
वही चपल चमकंत । वही बगपंत निरष्षं ॥
वही घटा घन घोर । वही पप्पीह मोर सुर ॥
वही जमीं आसमान । वही रवि-ससि निसिबासुर ॥
बेई अवास जुग्गिन पुरह । वेई सहचरि मंडलिय ॥
संजोगि षयंपति कंत बिन । मुहि न कछू लग्गत रलिय ॥१०९॥

॥ पद्धरी ॥

चढ़ि चल्यौ साह चहुआंन सर । धुंधरी बिदिस दिसि दिषि करुर ॥
सुर धुनि निसान बज्जै सुरंग । नफ्फेरि रंग सिंधू उपंग ॥११०॥
चतुरंग सेन सजि बर प्रमान । सिंधूरन ब्रह्म चढि चाहुआंन ॥
षोलि किपाट बर मुगति रूप । सोमेस पूत अवधूत भूप ॥१११॥

॥ कवित्त ॥

चढत राज चहुआंन । छींक अगनव देव दिसि ॥
मिल कुंजर बिन दंत । अश्वअपलानिचित्त बसि ॥
सूत्र मंत तुट्टयौ । राज दिट्टं सु विचारय ॥
गौर कुंभ उप्परै । स्याम कुंभह अद्धारिय ॥
तजि मोष रस्स संधी त्रिया । आवै क्रित गवनन छत्री ॥
असु नीम जोख पंचमि दिवस । चढ्यौ राज निस तुछ पत्री ॥११२॥

॥ दूहा ॥

इह चरित्र पिष्षिय चरन । वह चरित्र नह राय ॥
सो चरित्र सुरतान सों । सिंध उलंघिय धाय ॥११३॥
जाय जलह पथाहरौं उत्तर्यौ । दिल्ली वै चहुआंन ॥
सूरत अति आनंद हुअ । सहि संजोगी हान ॥११४॥

॥ कवित्त ॥

सुभर उतरि सतनंज । चंद पट्टौ कंगूरह ॥
लै आयौ जालंध । राह हाहलि हंमीरह ॥
जाल पाप रसि परस । परम दरदत दह अप्यौ ॥
आदि जुद्ध नय दीन । सिंघ पष्षरि किन दिष्यौ ॥
हम नमसकार करि पुच्छयौ । अरु पुछमौ पछली बिगति ॥
हूँ कहों सु तुम जानहु सकल । चलहु चंद अग्गे निरति ॥११५॥

॥ दूहा ॥

बहुत कहत हम्मीर सुनि । अब कछु रहत रसन्न ॥
थान भिष्ट सोभत नहीं । नर नष केस दसन्न ॥११६॥
तत्त बत्त जानौ सबै । हम माया इछांमि ॥
चलि जालंधर ढैहरैं । मिलि जालय पुच्छांमि ॥११७॥

॥ कवित्त ॥

कहि हमीर सुनि देव । तत्तवादी कवि आया ॥
को हिंदू को तुरुक । कोंन रंकं सु को राया ॥
को रविंद को जिंद । कोन तापस को छाया ॥
को साहब को राज । कवन सुकवि कह गाया ॥
इह परम हंस संसार हित । तूं माया तूं मोह मत ॥
जानो न बामदच्छिन करन । हों सांई संसार रत ॥११८॥

एह परत्तर दीह । चंद जान्यौ चहुआनं ॥
जिन भुजानि धर भार । भोम तिय अधरं भानं ॥
हसम हयग्गय देस । दीह घट्टै बल घट्टै ॥
धन्न मरन तिन जानि । महल सिर सारे पट्टै ॥
आवृत्तबात जोगिनि पुरन । भव भवस्य इह न्रिमंयौ ॥
कविचंद रुक्किबंच्यौजियन । ग्रिह गोरी हाहुलि गयौ ॥११९॥

॥ कुंडलिया ॥

रोकि कबिंदहि अप्प मिलि । सो सुरतान अबुझ्झ ॥
सुनन राज पृथिराज कै । हवि लागी उर मझ्झ ॥
हवि लागी उर मझ्झ । संझ आई गुर गल्हां ॥
भट्ट बसीठह रोकि । अप्प है वै दिसि हल्लां ॥
दस हजार हैवरनि । लष्ष पयदल श्रम वृन्दा ॥
मिल्यौ जाइ सुलितान । रोकि देवलें कबिंदा ॥१२०॥

॥ कवित्त ॥

सजि आयौ सुरतान । जूह सेना अति आतुर ॥
तुरिय लष्ष दह शुभर । दंति दस सहस मंत बर ॥
पुर संतुल सा निकट । आय दलबल संपत्तौ ॥
सज्यौ देषि दिल्लीस । नाम गोरी अनुरत्तौ ॥
पुछ्यौ सुमंत तातारषां । षुरासांन साहाब सदि ॥
टट्टो सुसज्जि जंगल सुपह । रचौ बंध अप्पान रदि ॥१२१॥

॥ दूहा ॥

साक सु बिक्रम रुद्र सौ । अट्ठ अग्र पंचास ॥
सनि बासर संक्रांति क्रक । श्रावन अद्धौ मास ॥१२२॥
सावन मावसि सूर सुअ । उभय धटी उदयत्त॥
प्रथम रोस दोउ दीन दल । मिलन सुभर रन रत्त ॥१२३॥
दरसे दल बद्दल विषम । रागरु लाग निसांन ॥
मिले पुब्ब पच्छिम तें । चाहुआंन सुलतान ॥१२४॥
सारन धीरी सारुहै । धीर न धरी प्रमान ॥
चाहुआंनं गोरी सरिस । गोरी रा चहुआंन ॥१२५॥

॥ कवित्त ॥

चढत राज चहुआंन । छींक अगनव देव दिसि ॥
मिल कुंजर बिन दंत । अश्वअपलानिचित्त बसि ॥
सूत्र मंत तुट्टयौ । राज दिट्टं सु विचारय ॥
गौर कुंभ उप्परै । स्याम कुंभह अद्धारिय ॥
तजि मोष रस्स संधी त्रिया । आवै क्रित गवनन छवी ॥
असु नीम जोख पंचमि दिवस । चढ्यौ राज निस तुछ पत्री ॥११२॥

॥ दूहा ॥

इह चरित्र पिष्षिय चरन । वह चरित्र नह राय ॥
सो चरित्र सुरतान सों । सिंध उलंघिय धाय ॥११३॥
जाय जलह पथाहरौं उत्तर्यौ । दिल्ली वै चहुआंन ॥
सूरत अति आनंद हुअ । सहि संजोगी हान ॥११४॥

॥ कवित्त ॥

सुभर उतरि सतनंज । चंद पट्टौ कंगूरह ॥
लै आयौ जालंध । राह हाहलि हंमीरह ॥
जाल पाप रसि परस । परम दरदत दह अप्यौ ॥
आदि जुद्ध नय दीन । सिंघ पष्षरि किन दिप्यौ ॥
हम नमसकार करि पुच्छयौ । अरु पुछमौ पछली बिगति ॥
हूँ कहों सु तुम जानहु सकल । चलहु चंद अग्गे निरति ॥११५॥

॥ दूहा ॥

बहुत कहत हम्मीर सुनि । अब कछु रहत रसन्न ॥
थान भिष्ट सोभत नहीं । नर नष केस दसन्न ॥११६॥
तत्त बत्त जानौ सबै । हम माया इछांमि ॥
चलि जालंधर ढैहरै । मिलि जालय पुच्छांमि ॥११७॥

॥ कवित्त ॥

कहि हमीर सुनि देव । तत्तवादी कवि आया ॥
को हिंदू को तुरुक । कोंन रंकं सु को राया ॥
को रविंद को जिंद । कोन तापस को छाया ॥
को साहब को राज । कवन सुकवि कह गाया ॥
इह परम हंस संसार हित । तूं माया तूं मोह मत ॥
जानो न बामदच्छिन करन । हों सांई संसार रत ॥११८॥

एह परत्तर दीह । चंद जान्यौ चहुआनं ॥
जिन भुजानि धर भार । भोम तिय अधरं भानं ॥
हसम हयग्गय देस । दीह घट्टै बल घट्टै ॥
धन्न मरन तिन जानि । महल सिर सारे पट्टै ॥
आवृत्त बात जोगिनि पुरन । भव भवस्य इह त्रिमंयौ ॥
कविचंद रुक्किबंच्यौजियन । ग्रिह गोरी हाहुलि गयौ ॥११९॥

॥ कुंडलिया ॥

रोकि कबिंदहि अप्प मिलि । सो सुरतान अबुझ्झ ॥
सुनन राज पृथिराज कै । हवि लागी उर मझ्झ ॥
हवि लागी उर मझ्झ । संझ आई गुर गल्हां ॥
भट्ट बसीठह रोकि । अप्प है वै दिसि हल्लां ॥
दस हजार हैवरनि । लष्ष पयदल श्रम वृन्दा ॥
मिल्यौ जाइ सुलितान । रोकि देवलें कबिंदा ॥१२०॥

॥ कवित्त ॥

सजि आयौ सुरतान । जूह सेना अति आतुर ॥
तुरिय लष्ष दह शुभर । दंति दस सहस मंत बर ॥
पुर संतुल सा निकट । आय दलबल संपत्तौ ॥
सज्यौ देषि दिल्लीस । नाम गोरी अनुरत्तौ ॥
पुछयौ सुमंत तातारषां । षुरासांन साहाब सदि ॥
टट्टो सुसज्जि जंगल सुपहु । रचौ बंध अप्पान रदि ॥१२१॥

॥ दूहा ॥

साक सु बिक्रम रुद्र सौ । अट्ट अग्र पंचास ॥
सनि बासर संक्रांति क्रक । श्रावन अद्धौ मास ॥१२२॥
सावन मावसि सूर सुअ । उभय धटी उदयत्त ॥
प्रथम रोस दोउ दीन दल । मिलन सुभर रन रत्त ॥१२३॥
दरसे दल बद्दल विषम । रागरु लाग निसांन ॥
मिले पुब्ब पच्छिम तें । चाहुआंन सुलतान ॥१२४॥
सारन धीरी सारुहै । धीर न धरी प्रमान ॥
चाहुआंनं गोरी सरिस । गोरी रा चहुआंन ॥१२५॥

॥ भुजंगी ॥

मिले चास चौहन सुलतान षग्गं । मनो बारुनी चक्किबे वारुलग्गं ॥
उठे हथ्थ हक्कं कहं कूइकालं । जुटे जोंध जोद्धं तुटै ताल तालं ॥१२६॥
भए सेल भेलं हुं हु मार मारं । बढ़ी संग लग्गी बजी धार धारं ॥
सुभट्टं सुथट्टं सुरीसं समेकं । भई सेलमेलं अनी एक एकं ॥१२७॥
हरें घाइ अघ्घाइ केकेन सुद्धं । कटै अद्ध अद्धं कमद्धं कमद्धं ॥
परे सूर सज्झं उतंगं सुधारं । भ्रमै व्योम विम्मान आरंभ हारं ॥१२८॥
छुटे बान चहुआंन आबद्ध राजं । लगे मेछ अंगं मनों बज्र बाजं ॥
फुटै संगि संनाह के अंग अंगं । उठै श्रोन छिछें जरै जानि ढंगं ॥१२९॥
हते राज प्रथिराज सामंत सेतं । भए मेछ अद्धे मनों राह केतं ॥
बढ्यो बीर नन्दी सुसूली अनन्दी । नचै भूतभैरुं बकेंजानि बंदी ॥१३०॥
भिरें जुद्ध जानीय जुथ्थानि जुथ्थं । ग्रहै गिद्धि सेवाल लुथ्थानि लुथ्थं ॥
चुवै श्रोम सट्ठी किलक्कंत घुटै । ग्रंह मेछलागें जुरै सूर छुट्टै ॥१३१॥

॥ कवित्त ॥

एक बान कम्मान । साहि चहुआंन कोप गहि ॥
षां ततार लहु बंध । कढ्ढे सुरंग बहि ॥
ओड़न नंषि नरिंद । बार कट्टिय कट्टारिय ॥
दिन पलट्यौ चहुआंन । हथ्थ छुट्टै नह तारिय ॥
भावी विगत्ति भंजन घड़न । दइ दुबाह इह न्रिम्मयौ ॥
पृथिराज गहन सुरत्तान कै । मुष जंपन बर सुभ्भयौ ॥१३२॥
मरत बार दुरजोध । पानि संग्रहि रोरह बर ॥
नल मुक्कै भट्ट नट्ट । गोपि ग्राहत तन पंडर ॥
मलह सिंह कछि ऋदंग । गूजर राव अंगन ॥
सूर राह संग्रहन । दान छुट्टंत सो पनि घन ॥
राजेस सूर संभरि धनी । अरि बंसि परिमंत्रन सुगुर ॥
सामंत सूर सब्बै परे । रह्यौ एक रूपे पहर ॥१३३॥

॥ मोतीदाम ॥

करी मति घेरन हथ्थिय गंसि । सुत रावन ज्यौं चतुरानन पंसि ॥१३४॥
परी चिहुँ कोदह घेर नरिंद । कढे कर दंत ज्यौ भिल्लिय कंद ॥
सुसंग्रहि संकट सूर निसंधि । लियौ न्रप गोरिय साहि सुरुंधि ॥१३५॥
गजंभर ढाल बैठाय नरेस । चल्यो गुरि गोरिय गज्जन देस ॥१३६॥

॥ दूहा ॥

ग्रहे राज गज्जन चल्यौ । तव रन रत्ता सूर ॥
अड्डे आवध बज्जि भ्रत । संधारिग भर सूर ॥१३७॥

॥ कवित्त ॥

न मिटै लिषित लिलाट । लिष्यौ ब्रह्मा सिर अष्पर ॥
असुर गह्यौ प्रथिराज । सुनत संजोगि परिय धर ॥
चंद्र सूर ग्रह रिष्ष । इंद्र सुर नर असुराइन ॥
सिध साधक मुनि राइ । मंत तंतिय तारायन ॥
को सकै अवर आरंभ करि । जो ब्रिधिना बिधिगति भन्यौ ॥
निम्मान बात जुग जुग लगै । यह दिट्ठौ मिठन सुन्यौं ॥१३८॥

॥ दूहा ॥

बहु बिलाप सब मिलि करहि । नहि सुध्रि बुद्धि गियान ॥
प्रीय बचन अप्रीय सुनि । गये संजोगिय रान ॥१३९॥
प्रान जात नह पल लग्यौ । सुन संदेश बिराग ॥
सुनत बचन प्रियजन कु कल । धन्नि त्रिया तो भाग ॥१४०॥

॥ कवित्त ॥

गहि चहुआंन नरिंद । साह गज्जनै सपत्तौ ॥
थांन रष्षि ढिल्ली प्रमान । साहि पीरोज प्रमत्तौ ॥
उत उतंग बाजित्र । नद्द सहनाय सुभेरिय ॥
जीति लियौ चहुआंन । दोउ दिष्षत दल फेरिय ॥
सुरतान गह्यो चहुआंन बर । कवि छुट्टो जालंध ते ॥
संपन्न सूर पत्तह दिली । भौ कवि रत्तसुअं मतै ॥१४१॥

॥ कुंडलिया ॥

चर आए ढिल्लिय नयर । दसमि सुदिन अंगार ॥
बुद्धबार एकादसी । चली बरन स्रगदार ॥
चली बरन स्रगदार । सूर सामंत तीय बर ॥
सब परिहग प्रथिराज । भयौ मंगल मंगल झर ॥
षट मुरतिय चहुआंन । अग्गि आलिंग अंग बर ॥
दुष्ष बंधि संजोगि । जोग संयोग कहै चर ॥१४२॥

॥ कबित्त ॥

निरषि निधन संजोगि। प्रिथी सज्जिय सु सामि सथ ॥
हक्कि हंस तत्तरि। बीर आवरिय प्रेम पथ ॥
सजि सकल श्रृंगार। हार मंडिय मुगतामनि ॥
रजि भूषन हय रोहि। जलज अच्छित उछारति ॥
हैहया सद्द जंपत लगत। हरि हर सुर उच्चार बर ॥
सह गमन सिध रावर चले। तजि महि फूल श्रीफल सुकर ॥१४३॥

सहस पंच सह गवनि। अवर सामंत सूर भर ॥
चलिय मिलिय मन संधि। सकल निज नाह साह बर ॥
भूषन सबनि बिराजि। साजि सिंगार सैल तन ॥
मन अनंत उद्धरिय। करिय हरिहरि जु दान दिय ॥
जहाँ जुथान सुनि प्रिय गवन। न करि विरम सन धरि ध्रुअ ॥
धनि धन्य सद्द आयास हुअ। लषि कौतिग अनभूत भुअ ॥१४४॥

चंदन मंदिर दार। रचिय बर दिघ्घ लघ्घुदर ॥
विवह कुसुम वर रोहि। सोहि पट बसन सुरह बर ॥
जिय जंबू नद दान। रथ्थ हय गय मुगता मनि ॥
बिप्प बेद उच्चरहि। धेन सुरवर आयासनि ॥
किय लोक लोक अंजुलि कुसुम। सजि बिमान सुर सिर फिरहि ॥
संक्रमिथ लप्प साहागवनि। मंझि गवन हब्बिहि हरहि ॥१४५॥

गहि चहुआंन नरिंद। गयौ गज्जनै साहि घर ॥
दिल्लीय हम गय द्रब्य। ताहि तन इह सुअप्पिधर ॥
बरस अद्ध तस अद्ध। मुद्ध कीनौ नयन्न बिन ॥
जम्म जम्म जुग अवरु। जाय प्रथिराज इक्क षिन ॥
कह करै न्रपति समुझै मनह। अप उपाव सो बहु करय ॥
विधिना बिचित्र निरम्यौ पटल। निमष न इक लिष्षित टरय ॥१४६॥

तब सुसाहि गज्जनय। ग्रहिथं जगल पति तानह ॥
हथ्थ समप्पि हुजाब। सबिधि रष्यौ बल मानह ॥
मैंडिय कोट महल्ल। अप्पि दिसि दष्षिन धामह ॥
तहाँ रष्षिय प्रथिराज। सुबल रष्षक रुहमामह ॥

बिप्रह सुरष्षि पारस्स दस । बेनिय हत्त दबे मुमुष ॥
नन करय राज आहार कछु । कहिय तेज हुज्जाव रुष ॥१४७॥

बिरदावलि बिरदाय । पाय अंद् कर ढीले ॥
तामस बुझवन काज । बोलि मधु बचन रसीले ॥
गढ गिलोल गज बाग । लागि सक्कै न डरहि डर ॥
नीठ नीठ रष्षयौ । आनि उभ्भौ जल ऊपर ॥
नरबदा तट कज्जली सुबन । जूथ हस्तिनि संभरिय ॥
पीय न उदक कबि चंद कहि । मदसिंधुर जिम बलभरिय ॥१४८॥

तब चिंतिय हुज्जाब । गयौ अप्पन गोरिय प्रति ॥
किय सलाम तिथ वार । धरिय अंगुरी धनिय नति ॥
कीय अरज कर जोरि । सुनहु साहाब मन्नि धुअ ॥
बिन अहार चहुआंन । पष्ष सारद्ध तीन हुअ ॥
कसमलिय चित्त संभलि सुचिर । अप असुपति चहुआंन गय ॥
आरुह्यौ बिकट रस नृपति बर । दिट्ठो दिट्ठो करूर मय ॥१४९॥

चमकि चित्त साहाब । सुनय चहुआंन सु अथ्थह ॥
बोलि दुजाब सुआब । सेष कालंन समथ्थह ॥
तुम कढ्ढहु चहुआंन । नयन दिठ लंबन छंडय ॥
जौ बंधन बंधियौ । तौइ संमुष द्रिग मंडय ॥
सिर धारि बोल कानै फिरिय । सहस मीर मिलि अप्प वृग ॥
भ्रम प्रारि तेन चहुआंन गहि । बंधिय राजन कढ्ढि द्रिग ॥१५०॥

॥ भुजंगी ॥

परयौ बंधनं गज्जनै मेछ हथ्थं । बिचारै करी अप्प करतूति पिथ्थं ॥
हन्यौ दासि ये हेतु कैमास बानं । गजं षून चामंडबेरी भरानं ॥१५१॥
बंधे कन्ह काका चषं पट्ट गाढ़े । बिना दोस पुंडीर से भ्रत्त काढ़े ॥
वरज्जंत चदं चल्यौ हुँ कन्नौजं । तहाँ सूर सामंत कटि घट्टि फौजं ॥१५२॥
लियें राज लोक रमंतं सिकारं । भ्रमं केहरी कंदरा रिष्ष जारं ॥
रह्यौ गैर महलं लियै राजलोकं । कटे सूर सामंद कीयो न सोकं ॥१५३॥
भुलानौ सरूपं भयो काम अंधं । निसा बासरं चित्त जानीसंढं ॥
दरव्बार मेटी अदब्बं बड़ाई । छरी ऊपरीसीस हम्मीर राई ॥१५४॥
करन्नं पुजारं प्रथा पौरि आई । वरद्दाई प्रोहित्त सें बिस्सराई ॥
षड़े आय साहाय काजं षुमानं । गयो चूकि अवसान सनमुष्षजानं ॥१५५॥

भई बुद्धि विपरीत इक होनहारं । छलं पारि सुबिहानचष्षं विकारं ।।
षलट्यो सुदहि रही लग्गि तारी । भले राज गोविंद ग्रब्बा प्रहारी ।।१५६।।
सहौ फूल की फूलनी नाहि नाथं । तुरत्तं तरायौ जु मालीन हाथं ।।
नहीं सूर सामंत परिवार देसं । नहीं गज्ज बाजं भंडार दिलेसं ।।१५७।।
नहीं पंगजा ग्रान तें अत्ति प्यारी । नहीं गोष महिलां इतं चित्रसारी ।।
नहीं चिग्ग अग्गें सुनंषे परद्दा । नहीं झोक हम्माम गरमी सरद्दा ।।१५८।।
नहीं रेसमं के दुलीचे गिलम्मे । नहीं हिंगु बाटं सुवन्नं हिलम्मे ।।
नहीं सीरषं रूप रंके उसीसा । नहीं पस्समीतक्किपल्लिंगपोसा ।।१५६।।
नहीं गद्दियं सुथ्थरी भूपि छोरा । नहीं मेन बतीन के दीप जोरा ।।
नहीं डंमरी योंन आवै सुगंधा । नहीं चौसरं फूल बंधे अबंधा ।।१६०।।
नहीं मृग्ग नयनीचरन्नंतलासै । नहीं कूक कोका सबद्दं उलासै ।।
नहीं पातुरं चातुरं न्रत्यकारी । नहीं ताल संगीत आलापचारी ।।१६१।।
नहीं कथ्थकं सथ्थ जंपै कहानी । पयं सक्करं हूत लग्गै सुहानी ।।
नहीं पासवामं षबासं हजूरी । सबे मंडली मेछ लग्गे करूरी ।।१६२।।
नहीं रूपकं राग रंगं उचारं । सुनों कन्न सावद्द वंगं पुकारं ।।
नहीं चोम मौजंकरूं लष्षदानं । नहीं भट्ट चंदं बिरद्दं बषानं ।।१६३।।
चषं मंजरी के रहे चौगिरद्दं । दबं दंग ज्यों लग्गि देही दरद्दं ।।
कहा हाल रेनं कुमारं धरत्ती । कहौ कोन सोंकोनआनैंनिरत्ती ।।१६४ ।
निराधारआधारकरतारतूंही । बन्यौ संकटं आय मो लीव सोंही ।।
कलीक्रद्दमंगायवृन्दावनीकों । संभालौ नहींतौकहाऔधनी क्यों ।।१६५।।

बानबेध समय

॥ दूहा ॥

कबि आयौ दिल्ली पुरह । देष्यौ नयर बिरूप ॥
बिन आभ्रन नर नारि सब । बिना तेज ग्रह भूप ॥१॥
इम कवि आयौ जात करि । गृह सुपिष्षि द्रिग काज ॥
पुछ्यौ सुत्त सुतीय तिहि । कहा करै प्रथिराज ॥२॥
तब सुत्रिया उत्तर दियौ । बोलि सुहावने बैन ॥
गोरी दल नृप संग्रह्यौ । कियौ साह बिन नैन ॥३॥
सुनत श्रवन धरनिय परिग । हरि हरि हरि मुष जंपि ॥
उद्यौ मनह बिश्राम करि । भयौ बिव्रिन मन कंपि ॥४॥
आदि अंत लगि वृत्त मन । वृन्नि गुनी गुन राज ॥
पुस्तक जल्हन हथ्थ दै । चलि गज्जन न्रप काज ॥५॥

॥ पद्धरी ॥

सम चल्यौ भट्ट गज्जन सुराह । बन विषम सुषम उग्गाह गाह ॥
रह उंच नीच सम विषम थांन । गह बरन सैल रन जल थलान ॥६॥
द्रिग जोति लग्ग मन सबद भीन । भुल्यौ सरीर जिग मग्ग षीन ॥
रत्तौ सुजोग मग्गह सरूव । जगमगत जोति आयास भूव ॥७॥
गुंजरत दरिय सम्मीर सद्द । निझ्झरत झरत नद रोर नद्द ॥
बन बिकट रंध कीचक्क राह । सद्दहि सु ताम संमीर गाह ॥८॥

॥ दूहा ॥

इहि विधि पत्तौ गज्जनै । जहं गोरी सुरतान ॥
तपै मेछ इछ अप्पनी । मनों भान मध्यान ॥९॥

॥ कवित्त ॥

प्रथम मुक्कि दरबार । लज्ज संकर सुरतानी ॥
है गै नट नाटक्क । भ्रम्म दिष्षय परमानी ॥
एक कहै इह भट्ट । इक कहै सिद्ध प्रमानं ॥
एक कहै ठग ठोठ । एक बेताल सुजानं ॥

इक कहै जोग पाषंड इह । भ्रम लग्यौ रोकंन कवि ।।
तब लगि चंद वरदाय बर । गयौ थांन दरबार हवि ।।१०।।
देषि चंद मन मंद । साहि आनंद उपन्नौ ।।
निजरि अप्प सुबिहान । बोलि आलम अप लिन्नौ ।।
हथ्थ अप्पि दसतक्क । बत्त पुच्छी दुष सुष बर ।।
बिधि बिधान न्रिम्मयौ । करन उद्देस कबिय बर ।।
संग्राम स्वाम मयौं मुक्कयौ । क्यों कबिंद्र भारथ्थ तजि ।।
किहि थांन लोइ संभरि धनी । कहौ सुबत्त लज्जौ न लजि ।।११।।

।। पद्धरी ।।

घरि अद्ध रह्यौ तिन बार तब्ब । सुरतान बोलि वर कहिग सब्ब ।।
हम जाहि चंद षेलनह दप्प । दोय गल्हि करि चलहु तप्प ।।१२।।

।। दूहा ।।

जु कछु न्रम्मयौ भट्ट बर । तुम जानौ बहु बुद्धि ।।
सो न टरै बिधुना सुहथ । महत न दुप्ष अलुद्धि ।।१३।।

।। पद्धरी ।।

बुल्यौ सुबीर सुबिहान जान । हबसी सबोलि सुबिहान षान ।।१४।।
फिरि साहि ताहि फुरमान दीन । हम बहुत चंद महमान कीन ।।
हुज्जाब चंद दोउ एक सथ्थ । आए सुग्रेह पत्नीय तथ्थ ।।
बाल्यौ भीम हुज्जाब ताम । वे आम कब्बि रष्यौ सुमाम ।।१५।।
सुनि भीम अत्ति आनंद अप्प । लग्यौ सुपाइ षत्री सुतप्प ।।
हुज्जाब फिर्यौ कबि प्रेरि ताम । लै गयौ भीम क्रित मंनि काम ।।१६।।

।। दूहा ।।

हरफ हद्दकरि गिल्लयौ । घर आयौ सु बिहान ।।
झषत चंद मन मंझ निसि । नीठ सु भयौ बिहान ।।१७।।

।। चौपाई ।।

तब सहाब बोल्यो हुज्जाबह । अहो भट्ट आनो सित्तावह ।।
तब हुजाब आयौ कबि पासह । बोलि चल्यौ कबि अंदर तासह ।।१८।।

।। पद्धरी ।।

बुल्लाइ चंद हजूर साह । बूझै सुबत्त अप पातिसाह ।।
बेराग जिंद कहौ जोग गत्ति । जोगहि बिरुद्धहम बिलन मत्ति ।।१९।।

॥ दूहा ॥

हम अबुद्धि सुरतान इह। भट्ट भाष सुष काज ॥
नव रस में रस अप्परस। इहै जोग सुष काज ॥२०॥

जो कछु मंगहु भट्ट बर। करै बनै सुविहान ॥
भुम्मि लच्छि द्यौं चंद तुहि। नह अप्पौं चहुआंन ॥२१॥

नह मंगै कविचंद नृप। कहौ न रसना छंडि ॥
कथ्थ पुव्व आलम कहौ। छिनक श्रवन जो मंडि ॥२२॥

बालपनै ग्रथिराज सम। अति मित्रं तन कीन ॥
जु कछु स्वाद मन मैं भयौ। इच्छा रस मंगि लीन ॥२३॥

पुब्व पराक्रम राज किय। कछु जंपो तुछ ग्यान ॥
अरु जु कछू तुछ जपिहौं। सब जानौ सुबिहान ॥२४॥

इक्क सुदिन प्रथिराज रस। मुष कढ्ढी तिहि बार ॥
सिंगिन सरवर इच्छिविन। सत्त हनन घरियार ॥२५॥

बर सुनंत कंपै हियौ। दिल न रहै सुरतान ॥
सुद्धरोग भौ रोग मन। कढ्ढन कौं सुबिहान ॥२६॥

तो आयो तुहि आस करि। तो पासें चहुआंन ॥
सोद रोग दिल लग्गि मुझ। कढ्ढन को सुबिहान ॥२७॥

मैं जान्यो अचरिज्ज मन। नृपति संच की लीह ॥
तब लगि इहि बिधिना लषी। आय संपत्ते दीह ॥२८॥

सुनि सहाब गह हंस्यौ। बे बे भट्ट सुभट्ट ॥
अंषिहीन मति हीन भौ। कहा मग्गै मति नट्ठ ॥२९॥

सब बिधि घटी नरिंद की। हम जाचक नह पीर ॥
बचन परै सिर कट्टि दै। ते षित्री कुल धीर ॥३०॥

तब चिंतिय साहाब मन। हंसि बुल्यौ सम चंद ॥
जाय मंगि सम राज सौं। हम दिष्षहि आनंद ॥३१॥

तव गोरी हुज्जाब प्रति। कहै सुकबि लै जांहु ॥
अरस परम बिन दूरि तैं। लै आसीस कहाउ ॥३२॥

अग्या मन्नि हुजाब पहु। ले चल्लिय कबि सथ्थ ॥
प्रथम राज पासहु गयौ। तब रुक्क्यौ दह हथ्थ ॥३३॥

॥ पद्धरी ॥

तब गयौ चंद नृप तथ्थ थाह । जहां मित्र बयट्टो दिट्ट चाह ॥
दस हथ्थ रषि दिन्नी असीस । सिर नयौ नहीं मन करि रीस ॥३४॥

॥ दूहा ॥

चष्षहीन द्रुब्बल न्रपति । दस बंभन रहै पास ॥
रोस अगनि तन प्रज्जरै । चिन्ता अतिहि उदास ॥३५॥

॥ कवित्त ॥

निमिल जीय बर सिंघ । दई तन दुष्ट भाव करि ॥
रोस अगनि प्रजरंत । जाय आक्रित अग्गि झर ॥
भौक्रित तत्त निकाम । बीर तन छीन सु पंजर ॥
अरि तित्तै चित्यौ सुक्रन्न । संभरयौ चंद सूर ॥
घत सिंचि वीर पावक्क झर । रीस रवत तन प्रज्जर्यौ ॥
कहि भट्ट बीर बिरदावली । दूत राज रज संभर्यौ ॥३६॥

॥ पद्धरी ॥

पहिचानि चंद सिर धुन्यौ राय । संगह सरन्न बुल्यौ जुवाय ॥३७॥

॥ दूहा ॥

सुनि कबित्त चलि चित्त किय । अद्भुत भट्ट शरीर ॥
मोहि उलंध्यौ जानि कै । चितत प्रबुध्धुन धीर ॥३८॥
नेह नीर रुकि कंठ कबि । नेंन झलज्झल पानि ॥
बिन बोलत बोल्यौ नृपति । चंद चिंति बर बानि ॥३९॥
दै दान जनि संभरि धनी । उहि गड्डहितुहिजलहि हबि ॥
दित अदित हंस दोउ चड़हिचलि । इह उप्पर कह करहि कबि ॥४०॥
बेअंषिन हीनौ सु . हों । तूं तब अंषि न चूक ॥
असुर बधों किम बिन सुरह । उर सुर बध्यौं उलूक ॥४१॥
आनंदे प्रथिराज जिय । बंध कियौ कबि सथ्थ ॥
हनौ ताहि घरियार सौ । उभै इष्ष मिलि हथ्थ ॥४२॥
कबि बुझ्झवि प्रथिराज कौ । गह्यौ धाय हुज्जाब ॥
सबै रीति कहि राज कूं । जुगति सुवथ्थ जवाब ॥४३॥

॥ कवित्त ॥

तब सु चंद बरदाय । साहि अग्गे करि जोरे ॥
क्रपन गंठि जिमि साहि । राज गंठि न अब छोरे ॥
नट नकार नहि करहि । जांउ जिहि आस छंडि तब ॥
अद्भुत रस असमान । जाइ मुक्क्यौ न घनं अब ॥
छंड्यौ सुलोम जिय जंम कह । और अतिव अंतर रहै ॥
फुरमान साहि सत्तहि बंधौ । बिन फुरमान नासर गहै ॥४४॥

॥ दूहा ॥

जो फुरमान अप्प मुष । दै तिह बैर हमीर ॥
घर घरियारन बज्जिहै । सर सौ सद्द गंभीर ॥४५॥

॥ कवित्त ॥

मंगि साहि घरियार । दिसिन मंडे उत्तर दिसि ॥
सौ क्रम नृपति घरीव । क्रम्भ सत अद्धसाहि लिस ॥
सिंधु, राग सहनाइ । पंच सद्दावर बद्दं ॥
मेघ प्रज्ज आकूत । बीर नीसानति नद्दं ॥
प्रजापत्ति षां षुरसान षा । चाव दिसा निप बिंटियौ ॥
चहुआंन कलातक जग तपै । किहि लष्यौ बर मिट्यौ ॥४६॥

॥ पद्धरी ॥

प्रथिराज आनिमधिरंगभोम । साहाब उंच गहकंत व्यौम ॥
घरियार घात 'बंधे समुप्प । पठई कमान साहाब पुप्प ॥४७॥

॥ कवित्त ॥

प्रथम राज कम्मान । आनि दिन्ही हुज्जाबं ॥
महिय राज चहुआंन । तानि भंजी तर आबं ॥
अबर आनि कम्मान । सोन बलराज समानं ॥
इम भंजिय दइ पंच । अतिहि काठिन्य कमानं ॥
उच्चर्यौ षान मीरान इन । हयौ तात हम जेन रन ॥
अच्छै कमान हम ग्रह गरुअ । सोइ समप्यौ साहि इन ॥४८॥

॥ दूहा ॥

चवै चंद बरदाइ इम । सुनि मीरन सुरतान ॥
दै कमान चौहान कौं । साहि दियै कछु दान ॥४९॥

परिशिष्ट (क)

पृथ्वीराज रासो का परिचय

॥ पद्धरी ॥

संगहें पान कम्मान राज। उब्भरे अंग अंतर बिराज॥
आलिंग बुंबि उर चंपि अप्प। बद्धेव तेज तामंस दप्प॥५०॥
कर धरे से धनु आनंद चित्त। बिछुर्‍यै मिल्यौ चिरकाल मित्त॥
कम्मान राज मिलि तेज ताय। अरिमंझिबिटि मिलिमनुसहाय॥५१॥
उच्चर्‍यौ राज सम चंद ताम। मंगहु सु बान मम करि विराम॥
बरदाय साहि अरदास कीन। नप देहु बान कौतिग्ग चिन्ह॥५२॥
तब साहि नाम बच्चयौ अभीर। निसुरत्ति देहु तरकस्स तीर॥
निसुरत्तिआनि दिय साहि हथ्थ। नरकस्स तीर गोरी गरथ्थ॥५३॥क

॥कवित्त॥

ग्रहिय तीर गोरिस्स। कीन बिन इच्छ अप्प कर॥
काल अन्त पल प्रेम। बुद्धि भग्गिय समोह झर॥
दिषि नंष्यौ दिल्लीस। धरिय सज्जै सुसीस कबि॥
कर दीनौ चाहुआंन। प्रान बद्ध्यौ सुईस तब॥
तामंस रज्ज तन तामतन। धन बीरत्त उभार भर॥
सुरतान प्रान कारन प्रलय। जनु जम सज्ज्यौ दंड कर॥५४॥
भयौ एक फुरमान। बान जोगिनिपुर संध्यौ॥
सुइ सबद अरु बान। अग्र अबिचल कर बंध्यौ॥
भयौ वियौ फुरमान। ताँनि रष्यौ श्रवनंतरि॥
तियौ भयौ अनभयौ। हर्‍यौ पीतसाहि धरंतरि॥
लै दसन रसनतालु असघन। सीस फट्टि दह दिसि गवन॥
सुरतान पर्‍यौ षां पुक्करै। भयौ चंद राजन मरन॥५५॥
मरन चंद बरदाइ। राज पुनि सुनिग साहि हानि॥
पुहपंजलि असमान। सीस छोड़ी सुदेव तनि॥
मेछ अवद्धित धरनि। धरनि सब तीय सोह सिग॥
तिनहि तिनह संजोति। जोति जोतिह संपातिग॥
रासौ अलंभ नव रस सरस। चंद छंद किय अमिय सम॥
शृङ्गार बीर करुना बिभछ। भय अद्भुत हसंत सम॥५६॥

●

परिशिष्ट (क)

पृथ्वीराज रासो का परिचय

रासो काव्य की परंपरा

पृथ्वीराज रासो[1] के पीछे रासो-काव्यों की विशाल परंपरा है। इधर की खोजों में अपभ्रंश, गुजराती, डिंगल तथा पिंगल भाषाओं के अनेक रास और रासो काव्यों का पता चला है। इनमें से कुछ तो पुस्तकाकार प्रकाशित हो चुके हैं और शेष का विस्तृत परिचय शोध-पत्रिकाओं ने कराया है। इस नवीन सामग्री के अध्ययन से 'रासो' शब्द के अर्थ सम्बन्धी उन सभी अनुमानों का समाधान मिल जाता है जिन्हें यथेष्ठ सामग्री के अभाव में पूर्ववर्ती पंडितों ने समय-समय पर प्रस्तुत किया था।[2] जैसा कि डा० दशरथ शर्मा ने ठोस प्रमाणों और युक्तियों के द्वारा दिखलाया है, 'रासो' मूलतः गान-युक्त नृत्य-विशेष से क्रमशः विकसित होते उपरूपक और फिर उपरूपक से वीर रस के पद्यात्मक प्रबन्धों में परिणत हो गया।[3]

गीत-नृत्य के लिए रास का प्रयोग श्रीमद्भागवत में तो हुआ ही है, आज भी उत्तर भारत में राधा-कृष्ण की गानमय लीलाओं का अभिनय करने वाली रास-मंडलियाँ प्रचलित हैं। भागवत ने महारास में नृत्य के साथ गीत के संयोग का स्पष्ट उल्लेख किया है —

पादन्यासैर्भुजविधुतिभिः सस्मितैर्भ्रूविलासैं —
भज्यन्मध्यैश्चलकुचपटैः कुण्डलैर्गण्डलोलैः

---

१. प्रचीन प्रतियों में प्रायः 'प्रिथीराज रासउ' नाम मिलता है।

२. फ्रांसीसी विद्वान् गार्सां द तासी ने 'राजसूय', पं० रामचन्द्र शुक्ल ने 'रसायण' (हि० सा० इ०) और म० म० हरप्रसाद शास्त्री के अनुसार (प्रिलिमिनरी रिपोर्ट ऑन द आपरेशन इन सर्च ऑव बार्डिक क्रानिकिल्स पृ० २५-२६), पं० विंध्येश्वरी प्रसाद पाठक ने 'राज यज्ञ' तथा डा० काशीप्रसाद जयसवाल ने 'रहस्य' शब्द से 'रासो' को व्युत्पन्न बताया है। 'कविराज श्यामलदास' जी भी 'रहस्य' के ही पक्ष में थे; इसकी साक्षी है उनकी पुस्तिका 'पृथ्वीराज रहस्य की नवीनता'।

३. रासो के अर्थ का क्रमिक विकास : साहित्य सन्देश, जुलाई १९५१ ई०

स्विद्यन्मुख्यः कबररशनाग्रन्थयः कृष्णवध्वो
गायन्त्यस्तडित इव ता मेघचक्रे विरेजुः ॥१०।३३।८

और उसमें ध्रुपद अनेक रागों का प्रयोग था इसकी पुष्टि आगे आने वाले छंदों में 'तदेव ध्रुवमुन्निन्ये' आदि से हो जाती है। १२वीं सदी विक्रमीय के जैन ग्रंथ[1] 'लगुडरास' और 'तालारास' के प्रचलन की सूचना देते हैं—

लउडरासु जहिं पुरिस वि दिंतिउ वारियइ। छं० १६ चर्चरी
तालारासु विदिंति न रयणिहिं

दिवसि वि लाउडरासु सहुँ पुरसिहिं ॥ छं० ३६, उपदेश रसायन रास

इनसे पता चलता है कि ये गीतनृत्य शृंगार-रसपरक थे। इनमें अभिनेय गुण देखकर ही संभवतः तत्कालीन आचार्यों ने इन्हें 'पाठ्य नाटक' से भिन्न 'गेयनाटय' की श्रेणी में सम्मिलित कर लिया था। हेमचन्द्र ने अपने काव्यानुशासन (८।४) में तथा वाग्भट ने भी अपने इसी नाम वाले ग्रंथ के पहले ही अध्याय में डोम्बिका भाण, प्रस्थान शिगक, भाणिका प्रेरण, रामाक्रीड,हल्लीसक; श्रीगदित गोष्ठी राग काव्य आदि के साथ 'रासक' नामक गेयनाट्य का उल्लेख किया है। बहुत संभव है इन कि गेयनाट्यों का गीत-भाग क्रमशः स्वतंत्र श्रव्य अथवा पाठ्य काव्य हो गया हो और फिर इनके चरितनायकों के अनुरूप इनमें युद्ध वर्णन का भी समावेश हुआ हो।[2]

पं० नरोत्तमदास स्वामी के अनुसार 'रास' और 'रासो' का यह अंतर अंत तक बना रहा। वे 'रास' काव्यों को मूलतः प्रेम-काव्य मानते हैं तथा 'रासो' काव्यों को वीर-काव्य। 'रास' के उदाहरण के लिए 'संनेस रास' तथा 'बीसलदेव रास' का नाम लिया जा सकता है तो 'रासो' के लिए 'पृथ्वीराज रासो' या 'करहिया कौ रायसौ'। परंतु

१. अपभ्रंश-काव्यत्रयीः गा० ओ० सी० संख्या ३७, संपादक श्री लालचन्द्र गांधी, १९२७ ई०।

२. काव्य रूप 'रासक' की विस्तृत चर्चा के लिए देखिए 'हिन्दी साहित्य का आदिकाल' पृ० ५९—६१।

इसके अपवाद स्वरूप 'भरतेश्वर बाहुबलि रास' का नाम लिया जा सकता है जो 'रास' होते हुए भी वीर काव्य है अथवा 'उपदेश रसायन रास' जो मुख्यतः नीति काव्य है। वस्तुतः यह विभाजन केवल सुविधा के लिए स्वीकृत प्रतीत होता है। 'रास' शब्द से मूलतः संवद्ध होते हुए भी पीछे रास और रासो नाम से विविध विषय, भाव तथा रस वाले काव्य लिखे गए जिन्हें जैन कवियों ने और रूप दिया तो चारण तथा भाटों ने और। इन 'रास' तथा 'रासो' ग्रंथों के अध्ययन का महत्त्व केवल 'रासो' शब्द की व्युत्पत्ति अथवा इतिहास जानने में ही सहायक नहीं है, बल्कि 'पृथ्वीराज रासो' की अनेक कथानक-रूढ़ियों, काव्य-रूढ़ियों, रूप-विन्यास आदि सम्बन्धी विशेषताओं के विश्लेषण में भी उपादेय हो सकता है।

राजस्थान में रासो या रास काव्यों की परंपरा डिंगल और पिंगल दोनों में मध्य-युग के आरंभ से लेकर आधुनिक-युग तक प्रचलित रही और इस दौरान में ही पृथ्वीराज रासो' में प्रक्षेप होता रहा है। अपभ्रंश के संनेस रास' और उपदेश रसायन रास' को छोड़-कर परवर्ती काल के प्रायः सभी डिंगल-पिंगल रास और रासो ग्रंथ चरित-काव्य हैं और ऐतिहासिकता के साथ अनैतिहासिकता का सम्मिश्रण थोड़ा-बहुत सब में है। ईसा। की १२वीं से १५ वीं शताब्दी के बीच लिखे हुए रास ग्रंथों में भरतेश्वर बाहुवलि रास, जम्बुस्वामि रास, रेवतंगिरि रास, कछूली रास, गोतम रास, दशाणभद्र रास, वस्तुपाल-तेजपाल रास, श्रेणिक रास, पेथड़ रास, समर-सिंघ रास, के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। इनमें भाषा तथा काव्य की दृष्टि से 'भरतेश्वर बाहुबलि रास' बहुत महत्त्वपूर्ण है। पं० मोती-लाल मेनारिया, श्री अगरचन्द नाहटा, श्री नरोत्तमदास स्वामी तथा डा० दशरथ शर्मा के विवरणों से राजस्थानी के जिन रासो काव्यों का पता चला है उनमें से अधिकांश १७वीं शताब्दी तथा उसके बाद के हैं। जैसे माधौदास चारण-कृत 'राम रासो' जिनमें राम-कथा का वर्णन है सं० १६१० से १६६० के बीच रचा हुआ बताया जाता है, डूंगर सी कृत-छत्रसाल रासौ' मेनारिया जी के अनुसार सं० १७१० के आस-पास का काव्य है; गिरिधर चारण-कृत संगत सिंघ रासौ, भी इसी के आस-पास का कहा जाता है। जैन साधु दौलत विजय

(गृहस्थाश्रम का नाम दलपति) कृत 'खुम्भाण रासो' की भी जो दो प्रतियाँ प्राप्त हैं उनमें से एक का लिपिकाल सं० १७३३ है और दूसरी का सं० १७५६ ।

पिंगल यानी पुरानी ब्रजभाषा के प्राप्त रासो काव्यों के विजैपाल रासो (रचनाकाल : मिश्रबंधु के अनुसार सं० १३५५, नाहटा जी के अनुसार १८वीं या १९वीं शताब्दी और मेनारिया जी के अनुसार सं० १९००), जान कवि-कृत कायम रासो (सं० १६९१), कुम्भकरण कृत रतन रासो (सं०१७३२); दयाल कृत राणा रासो (सं० १६७५), जोधराज कृत हम्मीर रासो (सं० १७८५), गुलाब कवि कृत करहिया कौ रायसौ (सं० १९वीं सदी) के नाम उल्लेखनीय हैं। इन चरित काव्यों से भिन्न पिंगल में ही जल्ह कवि कृति (बुद्धि रासौ है) मेनारिया जी के अनुसार रचनाकाल सं० १६२५)[1] जो मुख्यतः प्रेमाख्यानक काव्य है। प्राकृतपैंगलम् के हम्मीर छंद को यदि किसी 'हम्मीर रासो' के ही हैं तो उसे भी इसी परंपरा के अंतर्गत समझना चाहिए। 'रासो' नाम से मिलने वाले ये काव्य प्रायः बहुत छोटे-छोटे हैं, केवल कुछ एक की छंद संख्या एक हजार के आस-पास है। अन्यथा अधिकांश सौ के आस-पास या उससे भी कम छंदों में समाप्त हो जाते हैं। काव्य-सौष्ठव की दृष्टि से इनमें से कोई ग्रंथ पृथ्वीराज रासो से तुलनीय नहीं हो सकता। इनका महत्त्व केवल पृथ्वीराज रासो के परिदृश्य को स्पष्ट करने में है।

पृथ्वीराज रासो की प्रतियां तथा रूपान्तर

अब तक पृथ्वीराज रासो की जितनी हस्तलिखित प्रतियाँ प्राप्त हुई हैं, वे प्रायः चार प्रकार की हैं। विद्वानों ने आकार के अनुसार उनका वर्गीकरण वृहद्, मध्यम, लघु और लघुतम चार प्रकार

[1]राजस्थान में हिन्दी के हस्तलिखित ग्रन्थों की खोज (प्रथम भाग) पृ० ७६-७७।

[2]विशेष विवरण के लिए देखिए श्री अगरचन्द नाहटा लिखित 'पृथ्वी राज रासो और उसकी हस्तलिखित प्रतियाँ' निबन्ध : 'राजस्थानी सं० १ तथा नरोत्तमदास स्वामी' लिखित 'पृथ्वीराज रासो' शीर्षक निबन्ध-राजस्थान भारती भाग १ अंक १, १९४६ ई०।

के रूपान्तरों में किया है। हस्तलिखित प्रतियों के विवरणों से पता चला है कि लघुतम रूपान्तर की दो, लघु रूपान्तर की पाँच, मध्यम रूपान्तर की ग्यारह तथा बृहद् रूपान्तर की तेंतीस प्रतियाँ उपलब्ध हैं। श्री नानूराम भट्ट और मुनि कान्तिसागर की प्रतियाँ किसी ने देखी नहीं है, इसलिए कहना कठिन है कि वे किस रूपान्तर की हैं। वैसे तो ये प्रतियाँ उत्तर भारत के अनेक संग्रहालयों में बिखरी पड़ी हैं। पड़ी हैं, परन्तु मोटे तौर से यह कहा जा सकता है कि बृहद् रूपान्तर की प्रतियाँ प्रधानतः उदयपुर में मिली हैं, मध्यम रूपान्तर की मुख्यतः जैन भांडारों में, लघु रूपान्तर की बीकानेर तथा शेखावटी (जयपुर) में और लघुतम की प्रति एक प्रति गुजरात के धारणोज गाँव से प्राप्त हुई है, किन्तु दूसरी का विस्तृत विवरण अभी प्राप्त नहीं है[1]। इससे इन विभिन्न रूपान्तरों की परंपरा पर प्रकाश पड़ता है। किसी रूपान्तर में कितना प्रक्षेप हुआ, उस प्रक्षेप के कारण क्या हैं और इस तरह प्रामाणिक अंश और रूपान्तर का पता लगाने में लिपि-पद्धति की ये स्थानगत परंपराएँ बड़ी सहायक हो सकती हैं।

इन हस्तलिखित प्रतियों को चार रूपान्तरों में विभाजित करने का ठोस आधार है। इन्हें रूपान्तर इसलिए कहा जाता है कि सभी प्रतियों के तुलनात्मक अध्ययन से कुछ ऐसे सामान्य प्रसंग मिलते हैं जो सब में लिपिबद्ध हैं और इस तरह एक क्रम दिखायी पड़ता है। लघुतम रूपान्तर के प्रायः सभी छंद तथा कथा-प्रसंग थोड़े से हेर-फेर के साथ लघु रूपान्तर में मिल जाते हैं और इसी तरह लघु से मध्यम में तथा मध्यम के बृहद् में। मोटे हिसाब से विस्तार में बृहद् रूपान्तर मध्यम का तिगुना है तथा मध्मय रूपान्तर लघु का तिगुना और लघु लघुतम का तिगुना प्रतीत होता है। बीकानेर के विद्वानों का अनुमान है कि मूल रासो लघुतम रूपान्तर है और उसी में क्रमशः प्रक्षेप होता गया है, किन्तु उदयपुर के राव मोहन सिंह आदि बृहद् रूपान्तर को ही मूल रासो मानते हैं और शेष रूपान्तर को उसका संक्षेप समझते हैं।

काशी नागरी प्रचारिणी सभा से पृथ्वीराज रासो का जो मुद्रित

---

१. यह प्रति मुनि जिन विजय जी के पास है तथा आरंभ में खंडित है। लेखक ने इसे नाहटा जी के संग्रहालय में देखा है।

संस्करण निकला है वह बृहद् रूपान्तर की ही प्रतियों पर आधारित है और बंगाल की रॉयल एशियाटिक सोसायटी से उसका जितना अंश प्रकाशित हुआ है वह भी बृहद् रूपान्तर के ही अनुकूल है। ना० प्र० सभा ने अपनी आधारभूत प्रति का लिपिकाल सं० १३४० या १६४२ बताया है। परंतु आगे चलकर पता चला है कि उसे भ्रम से १६४० या ४२ पढ़ लिया गया था। नाहटाजी के अनुसार उसे सं० १७४० होना चाहिए। लेकिन मेनारिया जी उस प्रति को १८७८ की बतलाते हैं। मेरे देखने में वे संस्थाएँ १७६७ प्रतीत होती हैं। सभा द्वारा मुद्रित प्रति में कुल ६८ प्रस्ताव हैं, परिशिष्ट रूप में छपा हुआ ६९ वाँ समय 'महोबा समय' बृहद् रूपान्तर की किसी प्राचीन प्रति में नहीं मिलता। बहुत संभव है, यह कोई स्वतंत्र ग्रंथ रहा हो। उदयपुर में इस बृहद् रूपान्तर की प्रामाणिक प्रति महाराणा अमर सिंह (द्वितीय) वाली वर्तमान है जिसका लिपिकाल माघ कृष्ण ६ सोमवार सं० १७६० वि० है।

रासो के लघुतम रूपान्तर की जो पूर्ण प्रति प्राप्त हुई है उसका लिपिकाल आषाढ़ शुक्ल पंचमी सं० १६६७ वि० है। इसकी पुष्पिका में दिन का उल्लेख नहीं है। यह प्रति यदि प्रामाणिक है तो निश्चय ही पृथ्वीराज रासो की प्राप्त प्रतियों में सबसे प्राचीन है। बीकानेर से श्री नरोत्तमदास स्वामी इसका संपादन करके शीघ्र ही प्रकाशित करवाने जा रहे हैं।

पृथ्वीराज रासो की प्रामाणिकता

जब से बंगाल की रॉयल एशियाटिक सोसायटी ने पृथ्वीराज रासो का प्रकाशन (सन १८८३ ई०) आरंभ किया, उसके थोड़े दिन बाद से ही उसकी प्रामाणिकता को लेकर विवाद आरंभ हो गया। डा० बूलर ने इस विवाद को आरंभ किया और उनकी मुख्य आपत्ति यही थी कि यह ग्रंथ अनैतिहासिक है। डा० बूलर इतिहास के विद्वान् थे और उनके लिए किसी काव्य-ग्रंथ की ऐतिहासिक उपयोगिता ही सबसे बड़ी थी। पृथ्वीराज रासो उनकी यह आवश्यकता पूरी करता न दिखा, इसलिए उन्होंने उस अनावश्यक ग्रंथ का प्रकाशन बंद करवा दिया। काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा ने उसको पूर्ण रूप से प्रकाशित कर विचार करने के लिए सामग्री प्रस्तुत कर दी। कुछ तो इसके संपादकों ने इसकी

ऐतिहासिकता का पल्ला पकड़ा और कुछ उस युग में ऐतिहासिक दृष्टि के ही साहित्य की सामग्री के अध्ययन का जोर था, पृथ्वीराज रासो की ऐतिहासिक चीर-फाड़ चल पड़ी। अनेक दशकों तक यही चर्चा रही। उसे अप्रामाणिक ही नहीं जाली तक कहा गया। इधर दस बारह वर्षों से जब पृथ्वीराज रासो के अन्य रूपान्तर प्राप्त हुए हैं तो रासो की प्रामाणिकता-सम्बन्धी वाद-विवाद ने नया मोड़ लिया है। जब तक उसका एक रूप प्राप्त था केवल उसी की घटनाओं की ऐतिहासिक सचाई परखी जाती थी, लेकिन इन नये रूपों अथवा रूपान्तरों ने यह सवाल उठा दिया है कि पृथ्वीराज रासो का कौन-सा रूप प्रामाणिक है।

अस्तु, पृथ्वीराज रासो की प्रामाणिकता की समस्या में प्रवेश करने से पूर्व यह स्पष्ट कर लेना चाहिए कि प्रामाणिकता के नाम पर हम चाहते क्या हैं ?

मोटे रूप में प्रामाणिकता के अंतर्गत निम्नलिखित प्रश्न उठते हैं---

१ पृथ्वीराज रासो का मूल रूप क्या है ?
२. मूल पृथ्वीराज रासो का रचनाकाल क्या है ?
३. क्या इसके मूल अंश का रचयिता चंद बरदायी है ?
४ क्या वह चंद बरदायी इतिहास-प्रसिद्ध पृथ्वीराज चौहान का समकालीन है ?

पृथ्वीराज रासो का मूल रूप

चारों रूपान्तरों की प्राप्त प्रतियों के तुलनात्मक अध्ययन से जो प्रसंग सामान्य रूप से मिलते हैं वे इस प्रकार हैं :—

१ आदि पर्व	६. कैमास वध
२. दिल्ली किल्ली कथा	७. षटरितु वर्णन
३. अनंगपाल दिल्ली दान	८ कनवज कथा
४. पंग यज्ञ विध्वंस	९. बड़ी लड़ाई
५. संयोगिता नेम आचरण	१०. बान-बेध

इन सामान्य कथा-प्रसंगों के वर्णन विस्तार को लेकर सभी रूपान्तरों में काफी अंतर हैं। बड़े रूपान्तरों में यही प्रसंग विस्तृत ढंग से अनेक छंदों में वर्णित हैं जब कि छोटे रूपान्तरों में अपेक्षाकृत वे अल्पविस्तृत हैं। इस दृष्टि से लघुतम रूपान्तर में स्वभावतः ही ये

प्रसंग सर्वाधिक संक्षिप्त हैं। कथा प्रसंगों की दृष्टि से लघु और लघुतम रूपान्तर में बड़ी समानता है। इन दोनों रूपान्तरों में प्राय. वर्णन-विस्तार सम्बन्धी अन्तर है। भाषा में भी विशेश असमानता नहीं।

दूसरी और मध्यम ओर बृहद रूपान्तरों ने जो विराट रूप ग्रहण कर लिया है अनेक नये इतिवृत्तों, कथाओं तथा प्रसंगों की सृष्टि का फल है। बृहद् रूपान्तर के लगभग ५४ तथा मध्यम रूपान्तर के १६ खंडों की कथाएँ छोटे रूपान्तरों से अधिक हैं और ध्यान देने की बात यह है कि इनकी पुष्टि इतिहास से नहीं होती। इन प्रसंगों की वृद्धि भी मनोरंजक ढंग से हुई है। कहीं होली और दिवाली की कथा छेड़ दी गई है, तो कहीं विवाहों की संख्या बढ़ा दी गई है। जहाँ छोटे रूपान्तरों में पृथ्वीराज दो विवाह करता है, बृहद् तक जाते-जाते पूरे तेरह व्याह कर डालता है। इसी तरह युद्धों की संख्या भी बढ़ायी गई है। छोटे रूपान्तरों तक राजा केवल ५ युद्ध करता है तो मध्यम रूपातर तक ४३ और बृहद् तक ५५ युद्धों का गौरव प्राप्त करता है। शाहाबुद्दीन गोरी को पकड़ने तथा हराने को लेकर भी प्रसगों की उद्भावना हुई है। बारी-बारी से हर सामंत को शहाबुद्दीन गोरी को पकड़ने का अवसर दिया जाता है। ऐसे कल्पनाशील तथा प्रसंग-रचना-पटु जाति की मौखिक परंपरा में प्रवाहित काव्य के मूलरूप का पता लगाना कितना कठिन कार्य है, इसे सहज ही समझा जा सकता है।

ऊपर सभी रूपान्तरों में समान रूप से पाये जाने वाले जिन प्रसंगों की सूची दी गई है वह भी कहाँ तक मूल पृथ्वीराज रासो है, नहीं कहा जा सकता। यदि इतिहास-समर्थित घटनाओं के ही आधार पर 'मूल पृथ्वीराज रासो' का निर्णय करें तो एक कैमासवध को छोड़कर और कोई घटना मूल पृथ्वीराज रासो की नहीं हो सकती। यह 'कैमासवध' भी केवल पृथ्वीराज-विजय' में पृथ्वीराज के मंत्री कदंबवास के उल्लेख तथा 'पुरातन-प्रबंध संग्रह' में प्राप्त कैमासवध-सम्बन्धी छप्पयों से ही समर्थित है।

इसलिए लघुतम रूपान्तर को 'मूल पृथ्वीराज रासो' तो नहीं लेकिन हस्तलिखित प्रतियों में प्राचीनतम रूप अवश्य कहा जा सकता है। इसकी पुष्टि पुष्पिका में दिये हुए लिपिकाल से तो होती ही है, भाषाशास्त्रीय दृष्टि से भी होती है। बड़े रूपान्तरों के प्रक्षिप्त कथा-प्रसंगों

की भाषा निश्चय ही परवर्ती है और इस तरह लघुतम रूपान्तर के पद-प्रयोग अपेक्षाकृत प्राचीन ब्रजभाषा के प्रतीत होते हैं।

कुछ विद्वानों ने 'पुरातन प्रबंध संग्रह' के पृथ्वीराज सम्बन्धी अपभ्रंश छप्पयों के आधार पर अनुमान किया है कि मूल पृथ्वीराज रासो भ्रंश काव्य था[1]। इस मत के विरुद्ध यह भी तो कहा जा सकता है कि पुरातन प्रबंध संग्रह में मूल पृथ्वीराज रासो के छंदों का अपभ्रंश रूपान्तर सुरक्षित है। ठोस प्रमाणों के अभाव में इस मत को मानने में अनेक बाधाएँ हैं।

इस प्रकार यदि पृथ्वीराज रासो का रचयिता चंद पृथ्वीराज का समकालीन था तो प्राप्त प्रतियों में से कोई भी उसकी कृति नहीं है।

पृथ्वीराज रासो का रचनाकाल

ग्रन्थ में रचनाकाल का उल्लेख न होने से उसके रचयिता के जीवन-काल के आधार पर ही उसका रचनाकाल निश्चित किया जा सकता है। अधिक से अधिक मौखिक परंपरा से आये हुए पृथ्वीराज रासो के लिपिकाल अथवा संग्रहकाल का ही निश्चय संभव है। सर्व प्रथम 'पृथ्वीराज रासो' का उल्लेख सं० १७०७ में दलपति मिश्र रचित 'जसवंत उद्योत' में मिलता है। सं० १६३५ में चौहान वंशी बूँदीनरेश सुरजन तथा उसके पुत्र भोज के आश्रित कवि चन्द्रशेखर रचित 'सुरजन चरित' नामक संस्कृत काव्य में जहाँ पृथ्वीराज के लिए पूरा सर्ग दिया गया है और पृथ्वीराज के साथ चंद का भी उल्लेख है, परन्तु चंद को रासोकार नहीं कहा गया है। उससे स्पष्ट है कि सं० १६३५ तक स्वयं पृथ्वीराज के वंशजों को भी पृथ्वीराज रासो का पता न था। श्री मोहनलाल विष्णु पंड्या ने गंगा भाट-रचित जिस 'चन्द छन्द बरनन की महिमा' ग्रन्थ की प्रति का पता दिया है और उसके अनुसार सिद्ध करना चाहा है कि सं० १६२७ तक 'पृथ्वीराज रासो' का उल्लेख मिलता है, वह 'खोज रिपोर्ट के ही अनुसार फुलस्केप कागज पर लिखी हुई बिल्कुल आधु-

---

[1] इस मत की विस्तृत जानकारी के लिए देखिये 'राजस्थान भारती', भाग १ अंक १ में डा० दशरथ शर्मा और मीनाराय रंगा का निबंध 'द ऑरिजिनल रासो; ऐन अपभ्रंश वर्क'।

निक रचना है। इस प्रकार अकबर के शासन काल से पहले पृथ्वीराज रासो के अस्तित्व का पता नहीं चलता। जैसा कि श्री नरोत्तमदास स्वामी का अनुमान है, अकबर की अधीनता स्वीकार करते समय मेवाड़ के राजघराने ने अपना गौरव बढ़ाने के लिए पृथ्वीराज चौहान से अपना सम्बन्ध स्थापित किया और इसके लिए पृथ्वीराज की पृथा नामक बहिन की कल्पना की। अंत में उन्होंने इन सबको काव्य रूप देकर परंपरागत 'पृथ्वीराज रासो' में मिलाकर सम्पूर्ण काव्य को लिपिबद्ध रूप में संग्रह करवाया। रासो-संग्रह का यह क्रम अनेक पीढ़ियों तक चला जिसकी चरम परिणति अमर सिंह द्वितीय राज्य काल (सं० १७५५-६७ वि०) में हुई।

पृथ्वीराज रासो का रचयिता चंद

सुदृढ़ अनुश्रुति के बावजूद अकबर के शासन काल से प्राचीन कोई ठोस प्रमाण नहीं मिलता जिसमें पृथ्वीराज रासो के रचयिता के रूप में चंद कवि का उल्लेख हो। पुरातन प्रबंध संग्रह (लिपिकाल सं० १५२८) के पृथ्वीराज प्रबंध से अवश्य ही चंद बलद्दियकृत पृथ्वी-राज सम्बन्धी दो छंदों का पता चलता है[1], किन्तु इनके आधार पर यह कहना कठिन है कि ये किसी प्रबन्ध काव्य के अंश हैं। इन प्रबन्धों के रचनाकाल का भी ठीक-ठीक पता नहीं है, परन्तु सं० १२६० से १५२८ के बीच में कभी न कभी इनकी रचना हुई होगी। फिर भी इनसे इतना तो निश्चित है कि चंद बलद्दिय नामक एक कवि अवश्य था जिसने पृथ्वीराज के विषय में कुछ काव्य-रचना की थी। वह प्रबन्ध काव्य था या नहीं और प्रबन्ध काव्य में भी 'रासो' नाम से अभिहित किया गया था या नहीं इसके लिए कोई ठोस प्रमाण भले न हो, परन्तु चंद और उसकी पृथ्वीराज-विषयक काव्य-रचना असन्दिग्ध है।

विद्वानों ने चंद के वास्तविक नाम को लेकर भी काफी ऊहापोह प्रकट किया है। कुछ लोगों ने उसके चंद्रक और पृथ्वीभट्ट नामों की

---

[1] **णं जाणउं चंद बलद्दिउ कि नवि छुट्ट हह फलह। १**
जंपइ चंद बलिद्दु मज्झु परमक्खर सुज्झइ॥ २
(पु० प्र० संग्रह, पृ० ८६)

भी कल्पना की है। किन्तु जिन्होंने चंद बलद्दिय नाम को स्वीकार कर लिया है उन्होंने भी बलद्दिय को शुद्ध करके 'वरदायी' कर दिया है जिसका अर्थ उनके अनुसार, 'वर देने वाला' अथवा 'जिसे दुर्गा ने वर दिया हो' होता है। वस्तुत: वह 'बलीवर्द' का ही तद्भव रूप है जो 'नर वृषभ' की तरह आदरार्थ विरुद की तरह जोड़ा जाता है। इसकी पुष्टि उस प्रसग से भी होती है जिसमें जयचन्द चन्द के बलद्द' विरुद पर व्यंग करते हुए पूछता है—'क्यों दूबरो बरद्द ?'

चन्द और पृथ्वीराज

पृथ्वीराज रासो के बृहद् और मध्य रूपान्तरों के अनुसार चन्द पृथ्वीराज के जन्म-मरण का अनन्य साथी था।[1] दोनों का जन्म एक ही दिन हुआ था और मरण भी एक दिन। गजनी में एक दूसरे को कटार मार कर मर जाने का उल्लेख रासो के सभी रूपान्तर एक स्वर से करते हैं। इतिहास से इन घटनाओं की पुष्टि नहीं होती। दो व्यक्तियों की जन्म कुंडलियों का इस तरह मिलना कोई आश्चर्य की बात नहीं है। परन्तु पृथ्वीराज और चन्द का सम्बन्ध भी ऐसा ही था इसकी पुष्टि रासो के अतिरिक्त किसी अन्य प्रमाण से नहीं होती। इस हिसाब-किताब का यही मतलब है कि पृथ्वीराज से चन्द का बहुत घनिष्ठ सम्बन्ध था और राजा उसे प्राय: महत्त्वपूर्ण अवसरों पर साथ रखता था।

इन सब बातों से यही निष्कर्ष निकलता है कि पृथ्वीराज के दरबारी कवि रूप में चन्द बलिद्दअ का होना असंभव नहीं है और उसकी पृथ्वीराज-विषयक काव्य रचना के उदाहरण प्राप्त हैं। परन्तु पृथ्वीराज रासो नाम से प्राप्त परवर्ती रूपान्तरों में कितना अंश चंद कृत है अथवा चंद से उसका क्या सम्बन्ध है इसका निर्णय करना इस समय असंभव है। संभावना यही है कि चंद की पृथ्वीराज विषयक

---

[1]इक थान मरत जनमह सु इक, चलहि कित्त ससि लग्गि रवि।
(ना० प्र० सभा संस्करण, ७६० वाँ पद्य)
इक्क दीह उत्पन्न, इक्क दीहै समाय क्रम।
(वही, ६२ वाँ पद्य)

कविताएँ उसके वंशजों तथा लोक-कंठों की मौखिक परम्परा द्वारा क्रमशः स्फीत होती गईं। जहाँ तक ऐतिहासिक सामग्री के आधार पर पृथ्वीराज रासो की प्रामाणिकता परखने का प्रश्न है उसके विषय में इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि केवल अनैतिहासिक घटनाओं के समावेश से ही पृथ्वीराज रासो चन्द की कृति होने के गौरव से वंचित नहीं हो सकता। 'पृथ्वीराज रासो' की प्रामाणिकता पर विचार करते समय यह न भूलना चाहिये कि वह काव्य ग्रंथ है, इतिहास नहीं। यदि जायसी के 'पद्मावत' की अनैतिहासिक घटनाओं को लेकर इतना शोर-गुल नहीं हुआ तो कोई आवश्यक नहीं कि पृथ्वीराज रासो पर ऐसा कोप किया जाय। पृथ्वीराज रासो में कितना अंश अनैतिहासिक है इसकी चर्चा यहाँ प्रासंगिक नहीं है। इतिहास में रुचि रखने वाले लोग ओझा जी, मु० देवीप्रसाद तथा डा० दशरथ शर्मा के शोधपूर्ण प्रयत्नों से अच्छी तरह परिचित होंगे।

पृथ्वीराज रासो का काव्य-सौष्ठव

कथा-प्रवाह—पृथ्वीराज रासो रासक शैली में लिखा हुआ एक चरित काव्य है जिसका चरितनायक पृथ्वीराज चौहान है। इसके वृहद् रूप में अनेक आनुषंगिक कथा-प्रसंगों के बावजूद आधिकारिक कथा पृथ्वीराज से ही किसी न किसी प्रकार सम्बद्ध है। आरम्भ में मंगलाचरण, पूर्ववर्ती कवियों के प्रति कृतज्ञता-ज्ञापन, आत्म नम्रता, दुर्जन-निन्दा, सज्जन-प्रशंसा तथा ग्रन्थ-रचना का उद्देश्य निवेदन करने के बाद कवि ने पृथ्वीराज के जन्म और शिशु-क्रीड़ा के साथ मुख्य कथा का वीजारोपण किया है। संक्षेप में चरितनायक के विद्याभ्यास की चर्चा करते हुए कवि उसे राजकीय कर्म-क्षेत्र में प्रवेश कराता है। यहाँ एक दिन उसके सामंतों में प्रमुख कन्ह गुर्जरेश भीमदेव चालुक्य के एक भाई का वध कर देता है जो भीमदेव से असन्तुष्ट रहने के कारण पृथ्वीराज के ही दरबार में रहने लगा था। उस दुर्घटना का कारण केवल यही था कि कन्ह के सम्मुख उसने अपनी मुछों पर हाथ रख दिया था और कन्ह के लिए यह असह्य था। ज्यादती तो कन्ह की थी ही लेकिन इसकी क्षतिपूर्ति क्या हो सकती थी। पृथ्वीराज ने कन्ह से आँखों पर पट्टी बाँधे रखने का अनुरोध किया। लेकिन भीमदेव

चालुक्य को तो इतने से शान्ति मिल नहीं सकती थी। उसने पृथ्वीराज से वैर ठान लिया। इस वैर का विस्फोट आगे चलकर सलष की पुत्री इंछिनी के विवाह के अवसर पर हुआ। भीमदेव इंछिनी की बड़ी बहिन मन्दोदरी से शादी कर चुका था, फिर भी उसने द्वितीय पत्नी के रूप में इंछिनी की माँग की। यह सम्बन्ध इंछिनी के पिता और भाई किसी को पसन्द न था। उन्होंने पृथ्वीराज के पास विवाह का प्रस्ताव भेजा। पृथ्वीराज उस निवेदन को स्वीकार कर सदल-बल चढ़ आया। उधर भीमदेव की भी सेना आ रही थी। जमकर लड़ाई हुई। पृथ्वीराज विजयी हुआ। विधिवत् पृथ्वीराज और इंछिनी का विवाह-कार्य सम्पन्न हुआ।

कुछ दिनों बाद पृथ्वीराज एक नट तथा हंस से शशिव्रता का गुण-श्रवण कर उस पर अनुरक्त हो गया। उधर शशिव्रता की शादी पृथ्वीराज के प्रतिद्वंद्वी कान्यकुब्जेश्वर जयचंद गाहड़वाल के भतीजे से होने वाली थी, परन्तु उसके अल्पायु होने की भविष्यवाणी सुनकर शशिव्रता का मन उधर से उचट गया। इसी बीच हंस ने शशिव्रता से पृथ्वीराज का बखान किया। इधर भी अनुराग अंकुरित हुआ। फलतः पृथ्वीराज सदल-बल चढ़ आया और शिवपूजन को जाती हुई शशिव्रता का हरण कर जयचंद की सेना को हराता हुआ अपने राज्य में वापस लौट आया।

दिन मृगयादि में सुख से बीत ही रहे थे कि पृथ्वीराज को अपने मंत्री कैमास (कदम्बवास) की दासी-अनुरक्ति का पता चला। यह बात यशस्वी राजा के लिए इतनी अपमानजनक लगी कि उसने एक रात छिपकर मंत्री पर प्रहार किया और इस तरह उसे मार डाला। पीछे कविचन्द ने तनिक से अपराध पर इतना कड़ा दण्ड देने तथा ऐसे योग्य मंत्री को खो देने के लिए राजा को बुरी तरह धिक्कारा।

युद्धों और विवाह से तो पृथ्वीराज की तृप्ति थी नहीं। थोड़े दिनों बाद उसे जयचन्द की पुत्री संयोगिता के नेम-आचरण की सूचना मिली। क्षत्रिय राजा के लिए यह असम्भव था कि संयोगिता का व्रत निष्फल जाने दे। फलतः उसने अनेक सामन्तों, शुभचिन्तकों तथा ज्योतिषियों के मना करने पर भी कन्नौज जाने का निश्चय किया।

कविताएँ उसके वंशजों तथा लोक-कंठों की मौखिक परम्परा द्वारा क्रमशः स्फीत होती गईं। जहाँ तक ऐतिहासिक सामग्री के आधार पर पृथ्वीराज रासो की प्रामाणिकता परखने का प्रश्न है उसके विषय में इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि केवल अनैतिहासिक घटनाओं के समावेश से ही पृथ्वीराज रासो चन्द की कृति होने के गौरव से वंचित नहीं हो सकता। 'पृथ्वीराज रासो' की प्रामाणिकता पर विचार करते समय यह न भूलना चाहिये कि वह काव्य ग्रंथ है, इतिहास नहीं। यदि जायसी के 'पद्मावत' की अनैतिहासिक घटनाओं को लेकर इतना शोर-गुल नहीं हुआ तो कोई आवश्यक नहीं कि पृथ्वीराज रासो पर ऐसा कोप किया जाय। पृथ्वीराज रासो में कितना अंश अनैतिहासिक है इसकी चर्चा यहाँ प्रासंगिक नहीं है। इतिहास में रुचि रखने वाले लोग ओझा जी, मु० देवीप्रसाद तथा डा० दशरथ शर्मा के शोधपूर्ण प्रयत्नों से अच्छी तरह परिचित होंगे।

पृथ्वीराज रासो का काव्य-सौष्ठव

कथा-प्रवाह—पृथ्वीराज रासो रासक शैली में लिखा हुआ एक चरित काव्य है जिसका चरितनायक पृथ्वीराज चौहान है। इसके वृहद् रूप में अनेक आनुषंगिक कथा-प्रसंगों के बावजूद आधिकारिक कथा पृथ्वीराज से ही किसी न किसी प्रकार सम्बद्ध है। आरम्भ में मंगलाचरण, पूर्ववर्ती कवियों के प्रति कृतज्ञता-ज्ञापन, आत्म नम्रता, दुर्जन-निन्दा, सज्जन-प्रशंसा तथा ग्रन्थ-रचना का उद्देश्य निवेदन करने के बाद कवि ने पृथ्वीराज के जन्म और शिशु-क्रीड़ा के साथ मुख्य कथा का वीजारोपण किया है। संक्षेप में चरितनायक के विद्याभ्यास की चर्चा करते हुए कवि उसे राजकीय कर्म-क्षेत्र में प्रवेश कराता है। यहाँ एक दिन उसके सामंतों में प्रमुख कन्ह गुर्जरेश भीमदेव चालुक्य के एक भाई का वध कर देता है जो भीमदेव से असन्तुष्ट रहने के कारण पृथ्वीराज के ही दरबार में रहने लगा था। उस दुर्घटना का कारण केवल यही था कि कन्ह के सम्मुख उसने अपनी मुछों पर हाथ रख दिया था और कन्ह के लिए यह असह्य था। ज्यादती तो कन्ह की थी ही लेकिन इसकी क्षतिपूर्ति क्या हो सकती थी। पृथ्वीराज ने कन्ह से आँखों पर पट्टी बाँधे रखने का अनुरोध किया। लेकिन भीमदेव

चालुक्य को तो इतने से शान्ति मिल नहीं सकती थी। उसने पृथ्वीराज से वैर ठान लिया। इस वैर का विस्फोट आगे चलकर सलष की पुत्री इंछिनी के विवाह के अवसर पर हुआ। भीमदेव इंछिनी की बड़ी बहिन मन्दोदरी से शादी कर चुका था, फिर भी उसने द्वितीय पत्नी के रूप में इंछिनी की माँग की। यह सम्बन्ध इंछिनी के पिता और भाई किसी को पसन्द न था। उन्होंने पृथ्वीराज के पास विवाह का प्रस्ताव भेजा। पृथ्वीराज उस निवेदन को स्वीकार कर सदल-बल चढ़ आया। उधर भीमदेव की भी सेना आ रही थी। जमकर लड़ाई हुई। पृथ्वीराज विजयी हुआ। विधिवत् पृथ्वीराज और इंछिनी का विवाह-कार्य सम्पन्न हुआ।

कुछ दिनों बाद पृथ्वीराज एक नट तथा हंस से शशिव्रता का गुण-श्रवण कर उस पर अनुरक्त हो गया। उधर शशिव्रता की शादी पृथ्वीराज के प्रतिद्वंद्वी कान्यकुब्जेश्वर जयचंद गाहड़वाल के भतीजे से होने वाली थी, परन्तु उसके अल्पायु होने की भविष्यवाणी सुनकर शशिव्रता का मन उधर से उचट गया। इसी बीच हंस ने शशिव्रता से पृथ्वीराज का बखान किया। इधर भी अनुराग अंकुरित हुआ। फलतः पृथ्वीराज सदल-बल चढ़ आया और शिवपूजन को जाती हुई शशिव्रता का हरण कर जयचंद की सेना को हराता हुआ अपने राज्य में वापस लौट आया।

दिन मृगयादि में सुख से बीत ही रहे थे कि पृथ्वीराज को अपने मंत्री कैमास (कदम्बवास) की दासी-अनुरक्ति का पता चला। यह बात यशस्वी राजा के लिए इतनी अपमानजनक लगी कि उसने एक रात छिपकर मंत्री पर प्रहार किया और इस तरह उसे मार डाला। पीछे कविचन्द ने तनिक से अपराध पर इतना कड़ा दण्ड देने तथा ऐसे योग्य मंत्री को खो देने के लिए राजा को बुरी तरह धिक्कारा।

युद्धों और विवाह से तो पृथ्वीराज की तृप्ति थी नहीं। थोड़े दिनों बाद उसे जयचन्द की पुत्री संयोगिता के नेम-आचरण की सूचना मिली। क्षत्रिय राजा के लिए यह असम्भव था कि संयोगिता का व्रत निष्फल जाने दे। फलतः उसने अनेक सामन्तों, शुभचिन्तकों तथा ज्योतिषियों के मना करने पर भी कन्नौज जाने का निश्चय किया।

लेकिन नगर छोड़ने के पूर्व इस बार रनिवास से अनुमति लेना आवश्यक प्रतीत हुआ। राजा सर्वप्रथम बड़ी रानी इंछिनी के मन्दिर में गया। बसन्त ऋतु थी। ऐसे समय रानी भला कब छोड़ने वाली थी। सारी ऋतु राजा वहीं बन्दी रहे। वहाँ से मुक्त होने पर दूसरी रानियों के यहाँ भी जाना कर्तव्य था। शेष पाँचों रानियों ने भी क्रमशः ग्रीष्म, पावस, शरत्, हेमंत और शिशिर ऋतु में राजा को अपने-अपने यहाँ रोक रखा। अंत में जब फिर बसन्त आया तो राजा ने चन्द कवि की शरण ली और मुक्ति का उपाय पूछा कि कौन-सी ऋतु है जिसमें स्त्री को पति नहीं रुचता। चतुर कवि ने 'ऋतु' शब्द पर दूर की उड़ान ली और राजा मुक्त हुए। फलतः चंद को साथ लेकर ससैन्य राजा कन्नौज की ओर चल पड़े। वहाँ जयचन्द के दरबार में पृथ्वीराज ने छद्म रूप में चंद का सेवक बनकर प्रवेश किया किन्तु अंत में पहचान लिए गये। जयचन्द ने इस पर पहरा डलवा दिया, किन्तु एक दिन पृथ्वीराज ने गंगा के किनारे स्थित संयोगिता से भेंटकर उसे घोड़े पर चढ़ा दिल्ली की राह ली। राह में अवरोध हुआ, किन्तु संयोगिता को साथ लिए शत्रु-सैन्य को काटता हुआ पृथ्वीराज निकल गया। इस युद्ध में पृथ्वीराज के कन्ह आदि अनेक महान सामंत योद्धा काम आए। थोड़े दिनों तक रुष्ट रहने के बाद जयचन्द ने विवश होकर पृथ्वीराज के पास कन्या के विधिवत् ब्याह के लिए पुरोहित भेजा साथ ही पर्याप्त दहेज भी।

पट्टरानी के रूप में संयोगिता के आने पर बड़ी रानी इंछिनी के मान को धक्का लगा। इधर पृथ्वीराज भी नयी रानी को ही अपना सारा समय देने लगे। सौतियाडाह स्वाभाविक था। इंछिनी ने अपने पाले हुए शुक के द्वारा राजा तक अपनी विरह-दशा की सूचना पहुँचायी। सहृदय पति पिघला। दोनों रानियों में समझौता हुआ। यह चरितनायक के सुखोपभोग की पराकाष्ठा है। यहीं से उसके दुःखद दिनों का आरम्भ होता है।

राजा इधर रतिरंग में लीन था, उधर शाहीबुद्दीन गोरी के हमले की खबर आई। प्रजा घबड़ा उठी। नगर सेठ तथा गुरुराम के द्वारा राजा तक सूचना पहुँचाई गई। सहसा वे नींद से जागे। संयोगिता के

विरह-निवेदन के रहते उन्होंने गोरी का सामना करने के लिए प्रस्थान लिया। युद्ध में राजा गोरी के हाथों पकड़े गए। इधर यह समाचार पाते ही रानियों सहित संयोगिता सती हो गई। उधर पृथ्वीराज गजनी ले जाया गया और वहाँ उसकी आँखें फोड़कर उसे कैदखाने में डाल दिया गया और कैद में पड़े-पड़े वह अपने विगत वैभव तथा पूर्वकृत कुकर्मों पर पश्चाताप करता रहा। कुछ दिनों के बाद एक दिन कवि चंद उससे मिलने आया और उसने संकेत से गोरी को शब्दवेधी वाण द्वारा मारने की सलाह दी। दूसरी ओर चंद ने अपनी कवित्व प्रतिभा से गोरी को प्रभावित करके पृथ्वीराज के शब्दवेधी लक्ष्य के प्रदर्शन की व्यवस्था करायी। योजनानुसार पृथ्वीराज द्वारा गोरी का बध हुआ और अन्त में चन्द तथा पृथ्वीराज कटार से एक दूसरे को मार मरे।

संक्षेप में पृथ्वीराज रासो की यही मुख्य कथा है। इसके अतिरिक्त जो आनुषंगिक कथा अथवा कथाएँ हैं उनमें अधिकांश विवाह वर्णन, युद्ध वर्णन तथा अनेकानेक सामंतों द्वारा गोरी के पकड़े जाने का विस्तार है। बीच-बीच में कुछ अतिमानवीय उपाख्यानों तथा होली-दिवाली-सम्बन्धी किंवदंतियों का भी समावेश हो गया है।

रासो की यह कथा प्रधानत शुक और शुकी के संवाद द्वारा कहलाई गई है। भारतीय साहित्य के लिए यह कोई सर्वथा नया प्रयोग नहीं है। एक प्रकार से यह कथोपकथन की पौराणिक शैली है।[१]

संपूर्ण कथा चंद कृत नहीं है, यह तो इतने से ही स्पष्ट है कि बाणवेध प्रसंग लिखने के लिए कवि के पास समय कहाँ था? इसके अतिरिक्त गजनी-प्रसंग के आरम्भ में ही रासो स्पष्ट कर देता है कि 'पुस्तक जल्लहन हत्थ दै चलि गज्जन नृप काज!' इस पर अनुमान लगाया गया है कि चंद कृत रासो संयोगिता विवाह के बाद ही समाप्त हो जाता है। जो हो, वर्तमान रासो अपने पूर्वार्द्ध और उत्तरार्द्ध दोनों रूपों में हमारे सामने हैं और इसीलिए अपने संपूर्ण रूप में विचारणीय भी।

कथा के मार्मिक प्रसंग तथा कवि की विशेषता—मध्ययुग के अन्य

---

१. विशेष विस्तार के लिये देखिये 'हिन्दी साहित्य का आदिकाल', पृ० ७५-७६।

चरित काव्यों की भाँति रासो में भी कथा-बंध के उतार-चढ़ाव तथा चमत्कारपूर्ण मोड़-सम्बन्धी कोई विशेषता दृष्टिगोचर नहीं होती, क्योंकि उस युग के प्रायः सभी चरितनायक आधुनिक उपन्यासों की भाँति व्यक्ति विशिष्ट चरित्र न होकर इनके विपरीत वे 'टाइप' मात्र हैं। इसलिए घटनाओं की नवीनता के अभाव में प्राचीन चरित काव्यों के कथा-बंध का सौन्दर्य केवल दो बातों में देखा जाता है—या तो उसमें मार्मिक प्रसंगों की सृष्टि की गई हो अथवा कम-से-कम कवि ने कथा-प्रवाह में उसकी संभावना को पहचाना हो। ऐसे प्रसंगों के वर्णन में ही कवि-दृष्टि तथा कवित्व-शक्ति का पता चलता है।

सर्वप्रथम रासोकार ने माँ की कोख में पृथ्वीराज के गर्भाधान का प्रभाव परखा है और उसे इन शब्दों में काव्यात्मक रूप दिया है :

कितिक दिवस अन्तरह रहिय आधान रानि उर।
दिन दिन कला बढ़त मेघ ज्यों बढ़त भद्द धुर।
चन्द्रकला सित पष्ष जेम बाढ़ंत दिनं दिन।
मुगवा जीवन चढ़त मिलत भरतार षिनं षिन।
उद्दित अधान सुभ गातनह, जेम जलधि पुन्निम बढ़हि।
हुलसंत हीय जे प्रीय त्रिय जिम सु जोति जनिता चढ़हि॥

गर्भस्थ शिशु की निरन्तर बढ़ती हुई कला तथा माँ के रूप पर पड़ने वाले उसके अन्तः प्रभाव का चित्रण यहाँ देखने योग्य है।

पर्यवेक्षण का दूसरा स्थल है शिशु-क्रीड़ा। बाल-लीला के सिद्ध कवि सूर के आगे तो सभी कवि फीके हैं फिर चंद की कहाँ गिनती! फिर भी कुछ चित्र द्रष्टव्य हैं—

नह तलप इक्क थह षिन रहत, हुलसि-हुलसि उठि-उठि गिरत।

शय्या छोड़कर जमीन पर लोटने की बाल-प्रकृति तथा इस उल्लास में बार-बार उठने का असफल प्रयत्न करना अत्यन्त स्वाभाविक है और सम्भवतः सूर के यहाँ भी इसका चित्रण नहीं हुआ है। माँ या बाप की अँगुली पकड़कर चलने का वर्णन तो सूर ने भी किया है किन्तु उस पर उपमा की अनूठी उड़ान चंद के यहाँ ही देखी जा सकती है—

अंगुरिन लग्गि रागि चलत लाल। सरमद्धि उठत गज हंस बाल॥

और आगे बालकों के बीच—

मिलि बाल जाल कवि रहि केलि । बढ़ि रही दूंद जनु बीज बेलि ।।

युवक पृथ्वीराज के जीवन के मधुर प्रसंगों में विवाहों का स्थान अन्यतम है। अनेक विवाह-वृत्तान्तों के बीच कवि का मन केवल तीन-विवाहों में विशेष रमा है। ये हैं इंछिनी, शशिव्रता तथा संयोगिता-विवाह। इन विवाहों के वर्णन में कवि की सबसे बड़ी विशेषता है पुनरावृत्ति को बचा जाना। प्रायः एक प्रकार की घटनाओं के वर्णन में पुनरावृत्तियों की आशंका बनी रहती है किन्तु ऐसे ही स्थलों पर विशिष्ट कवि की पहचान होती है। हर्ष की बात है कि चंद ने इन प्रसंगों में अपनी विशिष्टता प्रमाणित कर दी है। तीनों विवाह तीन प्रकार से होते हैं। इंछिनी-विवाह हिंदू-विवाह प्रणाली का पूरा प्रतिनिधित्व करता है जिसमें ब्राह्मण द्वारा लग्न भेजने से लेकर बारात का सजना, अगवानी, तोरण-कलश-द्वारचार विधान, जनवासा, मण्डप-निर्माण, कन्यादान, गठबन्धन, भाँवरी, गणेश-नवग्रह कुलदेवता पूजन, गारी, शाखोच्चार, ज्योनार, दान-दहेज, विदाई आदि का सुन्दर वर्णन है। शशिव्रता-विवाह में ये बातें नहीं दुहरायी जातीं। इसमें कवि काव्यों में वर्णित पूर्वानुराग की प्रसंगोद्भावना करके हंस और गंधर्व द्वारा दोनों पक्षों को पहले से ही परस्पर अनुरक्त बनाता है। पश्चात् पृथ्वीराज शशिव्रता का हरण करता है। संयोगिता विवाह में ये दोनों बातें नहीं होतीं। यहाँ पूर्वानुराग केवल एक ओर से आरंभ होता है। वस्तुतः संयोगिता पृथ्वीराज का स्वयंवर करती है और समय पाते ही पृथ्वीराज उसके पास जाकर सखियों के बीच विवाह कर लेता है। हरण तो यहाँ भी होता है, पर विषम परिस्थिति के कारण हरण का रूप यहाँ कुछ भिन्न है।

अब इनमें से एक-एक विवाह का सौन्दर्य अंकन देखें—

नारी की वयःसंधि शोभा कवियों के लिए सदैव आकर्षण की वस्तु रही है। इसके लिए नाना उपमाओं का जमघट लगाया गया है। रासो में इंछिनी और शशिव्रता की वयः संधि-का वर्णन तुलनीय है। इंछिनी—

वाले तन्वय मुग्ध मध्यत इमं स्वपनाय वै संधयं ।
मुग्धे मध्यम स्वांगंम वामंति इमं मध्यान्ह छाया पगं ।।

बालप्पन तन मध्य जीवन इमं सरसी अवग्गी जलं।
अंगं मद्धि सुनीरजे मल ससी सुम्भै सुसैसव इमं ॥

शशिव्रता—

राका अरु सूरज्ज बिच, उदै अस्त दुँहुँ बेर।
बर शशिवृत्ता सोभई, मनौ श्रृंगार सुमेर ॥

वस्तुतः शशिव्रता का रूप और शील इंछिनी से कहीं अधिक आकर्षक था। इसीलिए कवि ने शशिव्रता के रूप-वर्णन में अधिक ध्यान दिया है। ऊपर के उदात्त वर्णन से संतुष्ट न होकर चंद ने शशिव्रता के यौवनागम को बसंत से उपमित किया—

पत्त पुरातन झरिग पत्त अंकुरिय उट्ठ तुछ।
ज्यौं सैसव उत्तरिय चढ़िय बैसब किसोर कुछ ॥
शीतल मन्द सुगंध आइ रितिराग अचानं।
रोमराइ संग कुच नितंब तुच्छ सरनानं ॥
बढ़ढै न सीत कटि छीन ह्वै लज्ज मांग ढंकनि फिरै।
ढंकै न पत्त ढंकै कहै, बन बसंत मंत जु करै ॥

प्रायः कवियों ने युवती नायिका के रूप को विभिन्न स्थितियों, तथा वातावरणों की मनोरम पटभूमि में रखकर नया-नया चित्र उतारा है। सद्यः स्नाता का चित्र भी इन्हीं में से एक है। रासो में सद्यःस्नाता इंछिनी की यह उपमा रूढ़ियों से अलग नयी सूझ प्रकट करती है—

करि मंजन अंगाछि तन, धूप वासि बहु रंग।
मनो देह जनु नेह फुलि, हेम भोज जन गंग ॥

इसी प्रकार सौन्दर्यद्रष्टा कवि ने प्रिय के सम्मुख जाने से पूर्व डरती हुई नववधू इंछिनी से बाह्य रूप-वर्णन से सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक रेखाओं को उभार कर चित्र में नयी ओप ला दी है—

हलहलै लता कछु मंद वाय। नव बधु केलि भय कंप पाय ॥
उपमां उर कहीय तांम। चुम्बन तरंग अंगि-अंगि कांम ॥

नारी सौन्दर्य की चरम परिणति है उसकी सौभाग्य-तिलकित दशा। सौभाग्यवती इंछिनी के नख-शिख का परिपाटी-विहित लम्बा वर्णन करने के बाद अंत में कवि उसकी मंगल मूर्ति का परिचय देता है—

जरकस घुघर घमंड जानु रवि क्रिन्न कदल ग्राह
कुसंभ लरे नीसार, रंग छवि छंड हुंड हर
पीत कञ्चुकी संचि षंडि कस अंग उपट्टिय
कङ्कन कर वर बरत गंग हरदीय उपट्टिय

आलोल नैन गति बचन बहु, सषिन सोभ मंडिय तनह।
फुल्ली सु सांझ कवि चंद कहि, मनहु बीजु थरकी घनह ॥

शशिव्रता-विवाह में पूर्वराग के लिए रूप-गुण वर्णन को विस्तार देने के बाद कवि ने जिस प्रियदर्शन प्रसंग पर ध्यान केन्द्रित किया है, वह है शशिव्रता और पृथ्वीराज का प्रथम साक्षात्कार। इंछिनी विवाह में इस प्रसंग की सृष्टि उतनी मनोरम नहीं हो सकती थी, क्योंकि वहाँ पूर्वराग का अस्तित्व ही नदारद था। बहुत दिनों से जिसका गुण-श्रवण करते-करते मानस-प्रतिमा निर्मित होती रहती है उसके प्रथम साक्षात्कार के समय की मानसिक स्थिति कितनी रूमानी हो सकती है इसे चंद के शब्दों में देखिये—

यों करंत दुत्तिय बियौ, कथा श्रवन सुनि मंत।
जाकौ तें पतिवृत्त लिय, सो आयौ अलि कंत ॥
श्रवन नयन को मेल कै, भय चंचल चल चित्त।
श्रोतानं दिष्टान अरु, मिलि पुच्छै दोइ मित्त॥

कर्न प्रयंत कटाछ सुरंग विराजही।
कछु पुच्छन को जाहि पै पुच्छत लाजही ॥
नैन सैन के बात जु स्रवनन सों कहै।
काम किधों प्रथिराज भेदि करि नालहै ॥

प्रायः दीर्घ दृगों के लिए कवियों ने 'कानन चारी नयन मृग नागर नरनु सिकार' जैसा चमत्कार दिखाया है। परन्तु 'कान तक खिंचे नयनों' को देखकर उनके मधुर वार्तालाप में नहीं, बल्कि 'कछु पुच्छन को जाहि पै पुच्छन लाजही' में है, क्योंकि श्रवण-नयन की बातचीत वास्तविक नहीं है। इस उत्प्रेक्षा का सौन्दर्य इससे अधिक प्रासंगिकता में है। बात यह है कि अब तक श्रवणों ने ही प्रिय का रूप-गुण सुन रखा था, नयनों को तो आज पहले-पहल देखने का अवसर मिला

है। इसलिए नयनों का श्रवणों के पास पूछने के लिए जाना स्वाभाविक ही है कि क्या जिनके विषय में सुन रखा था वे यही हैं ? क्या ऐसा तो नहीं है कि जो मैं देख रहा हूँ वह सुने हुए रूप-गुण से कहीं अधिक है ? ये तमाम बातें तथा इससे भी अधिक 'पुच्छत लाजहीं' द्वारा संकेतित हैं। तुलसीदास ने तो इतना ही कहा कि 'गिरा अनयन नयन बिनु बानी' लेकिन चंद ने इस तथ्यपरक कथन में अपनी सूझ से मधुर विशेषता ला दी।

इस प्रथम दर्शन से भी अधिक मार्मिक है प्रथम स्पर्श। सहसा पृथ्वीराज जन-समूह के बीच शशिव्रता को हाथ से पकड़कर अपनी ओर खींचता है और तुरन्त चन्द की फड़कती उपमा निकलती है 'मानो कि लता कंचन लहरि मत्तबीर गजराज गहि' ! पूरी पदावली जैसे स्नेह-उमंगित बाहु की तरह लहरा उठी है।

इस पर लज्जाशीला शशिव्रता की भावसबलता देखने योग्य है—

गहत बाल पिय पानि सु गुरुजन संभरे।
लोचन मोचि सुरंग सु अंसु बहे ढरे॥
अपमंगल जिय जानि सु नैनन मुष बही।
मनो षंजन मुष मुत्ति मरक्कत नंषही॥

हुए आगे बढ़ता है तो कवि की उत्प्रेक्षा-शक्ति फिर मुखर हो उठती है—

'कोमलता कल्हरी प्रेम मारुत झकझोरी।'

इसके बाद ही भीषण युद्ध की पटभूमि आती है और उसी के बीच पृथ्वीराज तथा शशिव्रता की प्रथम मधुयामिनी व्यतीत होती है—

कुमुद उघरि मूंदिय सु बंधि सत पत्र प्रकारय।
चकिय चक्क विच्छरहि, चक्कि ससिवृत्त निहारय॥
जुवती जन चढ़ि काम, जांह कोतर तर पंषी।
आवृत्त वृत्त सुंदरिय, काम बढ्ढिय बर अंषी॥
नव निद्धि हंसह मिलै, विमल चंद उग्यौ सु नभ।
सामंत सूर न्रप रष्षिकै, करहि बीर बीश्राम सभ॥

संयोगिता-विवाह की विशेषता उसकी मार्मिक प्राकृतिक पृष्ठभूमि में हैं। वैसे तो शशिव्रता विवाह के आरम्भ में भी थोड़ा-सा उद्दीपक ऋतु

वर्णन है, किन्तु संयोगिता विवाह से पूर्व के षट् ऋतु वर्णन की सी स्वाभाविक प्रसंगिता तथा अनुभूति की तीव्रता उसमें कहाँ ? इससे पूर्व किसी नई विवाह-यात्रा के लिए प्रस्थान करते समय पृथ्वीराज अपनी रानियों से अनुमति लेने नहीं जाता । किन्तु इस बार बहुत बड़े शत्रु का सामना है । पता नहीं लौटना संभव हो सकेगा या नहीं । फलतः पृथ्वीराज अनुमति के लिए सर्वप्रथम बड़ी रानी इंछिनी के पास जाता है । संयोग ऐसा कि वह ऋतुराज का शासन काल था । आखिर पटरानी का मिलना कवि ऋतुराज में न कराये तो कब कराये । रानी के मुख से यह निकलना स्वाभाविक था—

मवरि अंब फुल्लिग कदंब रयनी दिघ दीसं ।
भवर भाव भुल्लें भ्रमंत मकरंदव सीसं ।।
बहत बात प्रज्जलति मौर अति विरह अगिन किय ।
कुह कुहंत कल कंठ पत्र राषस रति अग्गि ।।
पय लग्ग प्रान पति बीनवों, नाह नेह मुझ चित धरहु ।
दिन दिन अवद्धिजुव्वन घटय, कंत वसंत गम करहु ।।

राजा उस ऋतु में वहीं रुक जाता है । ग्रीष्म ऋतु के आरम्भ होते ही दूसरी रानी के मन्दिर में जाता है और वहाँ भी ग्रीष्म का भीष्म रूप दिखलाकर रानी रोकती है—

दीरघ दिन निस हीन छीन उलधर वैसंनर ।
चक्रवाक चित मुदित उदित रवि थकित पंथनर ।।
चलत पवन पावक समान परसत सु ताप मन ।
सुकत सरोवर मचत कीच तलफंत मीन तन ।।
दीसंत दिगंबर सम शरत, तरु लतान गय पत्त झरि ।
अक्कुलं दीह संपति, विपित्त कंत गमन ग्रीषम न करि ।।

इसी तरह ग्रीष्म भी बीत जाता है और पावस ऋतु में तीसरी रानी इन्द्रावती नाना प्रकार से राजा को रोकती है। एक ओर तो 'जल वद्दल बरषंत प्रेम पल्हरै निरंतर' और दूसरी ओर 'सजल सरोवर पिष्षि हियौ तत छिन घन फट्टै' इसलिए वह निवेदन करती है—

घुमड़ि घोर घन गरजि करत आडंबर अंबर ।
पूरत जलधर धसत धार पथ थकित दिगंबर ।।

झंझकित द्रिग शिशुमृग समान दमकत दामिन द्रिस ।
बिहरत चात्रक चुवत पीय दुपंत समं निसि ।।
ग्रीषम बिरह द्रुम लता तन, परिरंभन क्रत सेन हरि ।
सज्जत काम निसि पंचसर, पावस पिय न प्रवास करि ।।

शरत् का आकर्षण पावस से कम नहीं है। यदि पावस इंद्रावती के यहाँ बीता तो शरत् को हंसावती के यहाँ बीतना चाहिए था—

द्रप्पन सम आकास स्रवत जल अमृत हिमकर ।
उज्जल जम सलिता यु सिद्धि सुंदर सरोज सर ।।
प्रफुलित ललिता करत गुंजारन अंबर ।
उदत्ति सित्त निसि नूर अंग अति उमंगि अंग बर ।।
तलफत प्रान निसि भवन तन, देषत दुति रिति मुष जरद ।।
नन करहु गवनन भवन तजि, कंत दुसह दारुन सरद ।।

हंसावती का अंतिम तीर है 'सरद दरद करि मति चलौ !' राजा इतना कठोर थोड़े हो सकता है ! इसके बाद हेमंत का कठिन शीत यों ही रोकने के लिए काफी था, फिर उसके साथ रानी का मृदुल निवेदन भी नत्थी हो तो क्या कहना—

न चलि कंत सुभचित धनी वहुवित्त प्रगासौ ।
गहगहि ऐसी प्रेम सौज आनंद उहासौ ।।
दीरघ निसि दिस तुच्छ सीत संतावै अंग ।
अंधर दसन धरहरै प्रात परजवै अनंग ।।
जा ऐनि रैन हर हर जपत, चक्क सह चक्की कियौ ।
हियवंत कंत सुग्रह ग्रहत्ति, हहकरंत फुट्टैं हियौ ।।

इसी तरह रुकते-रुकाते वर्ष की अंतिम ऋतु शिशिर आ धमकती है, तब जैसे पाँच ऋतुएँ गईं वैसे छठी भी जाय तो क्या हर्ज है। लेकिन शिशिर का अपना आग्रह भी है—

आगम फाग अवंत कंत सुनि मित्त सनेही ।
सीत अंत तप तुच्छ होइ आनंद सब ग्रेही ।।
नर नारी दिन रैनि मैन-मदमाते डुल्लैं ।
सकुच न हिय छिन एक बचन मनमाने बुल्लैं ।।
सुनो कंते सुभ चित करि, रयनि गवन किम कीजियइ ।
कहि नारि पीय बिन कामिनी, रिति स सिहर किम जीजियइ ।।

ध्यान देने की बात है कि शरीर की प्राकृतिक शोभा में विशेषता न होने के कारण कवि ने उधर से दृष्टि हटाकर मानवीय क्रियाओं का प्रलोभन दिखाया है।

स्पष्ट है कि रानियों के आग्रह और ऋतुओं के उद्दीपन के अतिरिक्त राजा का अपना प्रणय-लुब्ध मन भी था जो उसने साल भर के लिए कनवज्ज गमन का कार्यक्रम रद्द कर दिया। किन्तु दूसरा ऋतु-चक्र आरंभ होते ही राजा की परेशानी के साथ पाठक की उत्सुकता भी लगी हुई है कि देखें कवि इसी तरह कथा-प्रसंग को ऋतु वर्णन के आवर्त में ही घुमाते-घुमाते डुबा देता है अथवा राजा के साथ ही कथा-प्रवाह को मुक्ति के लिए कोई युक्ति-संगत प्रसंग की उद्भावना करता है। यहीं कवि-प्रतिभा की परीक्षा है। इतने सुन्दर ऋतु-वर्णन का समापन भी मधुर ढंग से ही होना चाहिए अन्यथा अब तक की सारी कारीगरी गुड़-गोबर हो सकती है। ऐसे महत्त्वपूर्ण प्रसंग पर चंद स्वयं उपस्थित होता है। ज्यों ही दूसरा बसंत आता है कि पृथ्वीराज चंद के पास परामर्श के लिए जाते हैं। लेकिन वे ठहरे राजाधिराज। सीधे-सीधे मुक्ति का उपाय पूछने से हेठी हो सकती थी। इसीलिए वे कवि को भी तोलते हुए से पूछते हैं—

षट रिति बारह मास गय, फिरि आयौरु बसंत।
सो रिति चंद बताउ मुहि, तिया न भावै कंत॥

और चंद जैसे पहले ही से इस सवाल के लिए तैयार बैठा हो, वह तुरंत 'ऋतु' शब्द पर श्लेष करता है—

रोष भरै उर कामिनी, होइ मलिन सिर अंग।
उहि रिति त्रिया न मानई, सुनि चुहान चतुरंग॥

इस प्रकार यह मधुर प्रसंग समाप्त होता है। निस्सन्देह 'कनवज्ज समय' समय का षट्-ऋतु वर्णन रासो के दो-तीन मार्मिक तथा सुन्दर प्रसंगों में से एक तो है ही, हिन्दी काव्य-परंपरा के षट्-ऋतु वर्णनों में भी ऊँचा स्थान रखता है। ऊपर से देखने पर इसमें परिपाटी-विहित बातें पर्याप्त मिलेंगी और उद्दीपन के ही रूप में प्राकृतिक सुषमा का प्रयोग दिखेगा, किन्तु यह उस ह्रासयुग के दृष्टिकोण की सीमा है। रासो के षट्-ऋतु वर्णन की विशेषता इस बात में है कि वह आरोपित न होकर मानवीय क्रियाकलाप का अभिन्न अंग बनकर आया है और

इस प्रकार कथाप्रवाह को गति देता है। उसकी क्रियाशीलता में ही शोभा है।

इसके बाद भी कवि चंद ने वर्णन-कौशल दिखाने का अवसर निकाल लिया है। उस युग की सबसे समृद्ध नगरी कान्यकुब्ज की शोभा का वर्णन न करना कवि की अरसिकता ही होती। इसलिए रसिक कवि ने कान्यकुब्ज के प्रथम दर्शन-जनित प्रभाव में नाम परि-गणन ही नहीं, बल्कि दृश्य-चयन और उपमा-उत्प्रेक्षा-मंडन का खूब परिचय दिया है। गंगा के तीर पर बसे हुए विशाल भवनों वाले नगर के नागरिकों के क्रियाकलापों को भी कवि ने शब्दों में चित्रित किया है।

आगे कान्यकुब्जेश्वर के दरबार में चंद के उपस्थित होने का प्रसंग आता है। राजाओं के यहाँ मानसिक थकान मिटाने अथवा मनोरंजन के निमित्त कुछ नोक-झोंक अक्सर होती ही रहती थी और उसमें रसिक राजा भी भाग लिया करते थे। कवियों के साथ राजा के कलात्मक विनोद की अनेक कहानियाँ आज तक प्रचलित हैं। चंद दरबार की एक झलक देने के लिए आत्मघटित-सा प्रसंग छेड़ देता है। राजा जयचन्द्र चंद बलिद्द के नाम अथवा 'बलिद्द' विरुद' को ही लेकर मजाक करते हैं—

मुह दरिद्र पसु तन चरन, जंगल हाव सुहद्द।
बन उजार पसु तन चरन, क्यों दूबरो बरद्द॥

इस पर चंद कब चूकने वाला है। धाराप्रवाह पाँच छप्पयों में वह खरी स्पष्टोक्ति द्वारा राजा को निरुत्तर कर देता है। एक बानगी देखिए—

हंस न्याय दुब्बरौ मुत्ति लब्भै न चुनंतह।
सिंघ न्याय दुब्बरौ करी चंपे स कंठ कह॥
म्रग्ग न्याय दुब्बरौ नाद बंधियै सुबंधन।
छल छक्क दुब्बरौ त्रिया दुब्बरी मीत मन॥
आसाढ़ गाढ़ बंधन धुरा, एक्कहि गहि हहरद्दिया।
जंगर जुरारि उज्जर घर न, यौ दुब्बरौ बरद्दिया॥

इसके बाद संयोगिता और पृथ्वीराज के साक्षात्कार, गंधर्व विवाह तथा संयोगिता-हरण प्रकरण में कवि की सरस्वती पूर्णरूप से मुखरित हुई है। शशिव्रता की तरह संयोगिता का साक्षात्कार मंदिर में नहीं

बल्कि गंगा के किनारे होता है जब पृथ्वीराज अनमने भाव से मछलियों को मोती चुगा रहा था। देखा पहले संयोगिता ने और थोड़ा संदेह हुआ। उसने तुरन्त चित्रशाला में रखे हुए चित्र से मिलान किया और फिर लौट आई। पृथ्वीराज की भी आँखें उठीं। सहसा उसने उस रूप में जानु, कटि, कुच, कुचकोर, मुख, नासिका, दृग, भौंह, वेणी आदि न देखकर आश्चर्यचकित क्या देखा कि—

कुंजर उप्पर सिंघ सिंघ उप्पर दो पव्वय।
पव्वय उप्पर भृंग भृंग उप्पर ससि सुभ्भय॥
ससि उप्पर इक कीर कीर उप्पर मृग दिट्ठौ।
मृग उप्पर कोवंड संध कन्द्रप्प वयट्ठौ॥
अहि मयूर महि उप्परह हीर सरस हेमन जर्यो।
सुर भुवन छंडि कविचंद कहि तिहि धोषै राजन पर्यो॥

शिकारी राजा आखिर यह सब न देखता तो क्या देखता!

प्रथम दर्शन में ही दोनों सुध-बुध खो बैठते हैं। समझ में नहीं आता कि बात क्या करें। संयोगिता सोचती है—

जो जंपौ तौ चित हर अनजंपे विहरंत।
अहि उड्डे छच्छुन्दरी हियै विलग्गी वंति॥

दूसरा प्रसंग वह है जब पृथ्वीराज संयोगिता को घोड़े पर चढ़ाने का आग्रह करता है और वह लजा उठती है। आगे चलकर घोर संग्राम में लड़ते हुए अश्वारोही दम्पति की शोभा मन को रोमांचित कर देती है। दाम्पत्य प्रणय का प्रस्फुटन कर्मक्षेत्र में ही होता है, जहाँ युगल हृदय एक दूसरे को सहयोग देते हुए परस्पर श्रमसिक्त मुख देखते चलते हैं। होता यह है कि कोई योद्धा पृथ्वीराज के गले में कमान डालकर खींच लेना चाहता है कि—

गुन कट्टिय रमनिय सुबर, डसनह पंग कुंआरि।
असि बर झर प्रथिराज हनि, सूर हत्थ तरवारि॥

इसके बाद—

देख संजोगिय पिय सुबल, श्रम जल बूंद बदन्न।
रतिपति अहित पवित्र सुष जालि प्रजालि भरन्न॥

इन सुखमय प्रसंगों के बाद रासो में दुःखमय स्थल आते हैं। इतने सुख और विलास के बाद करुण प्रसंगों का आगमन उनको और

भी मार्मिक बना देता है। पृथ्वीराज गोरी से लोहा लेने के लिए प्रस्थान करता है। यों तो गोरी के पहले भी उसकी कई बार मुठभेड़ हो चुकी है, परन्तु इस बार ऐसा प्रतीत हुआ जैसे अब फिर मिलना न होगा। अभी किसी रानी के सामने पृथ्वीराज के दीर्घ वियोग का अवसर आया ही न था। यह वियोग वर्णन का पहला अवसर है और यहाँ रासोकार की सहृदयता देखने योग्य है—

वही रत्ति पावस्स वही मघवान धनुब्बं।
वही चपल चमकंत वही बगपंत निरब्बं॥
वही घटा घन घोर वही पप्पीह मोर सुर।
वही जमीं असमान, वही रवि ससि निसि वासुर॥
वेई आवास जुग्गनि पुरह, वेई सहचरि मंडलिय।
संजोगि पयंपति कंत बिन, मुहि न कछू लागत रलिय॥

भावों के आवेग में सभी अलंकार बह जाते हैं और भाषा ही भावों का साक्षात् रूप धारण कर लेती है। इन पंक्तियों को देखकर सहसा विश्वास नहीं होता कि इनका रचयिता पूर्व प्रसंगों में उपमा-उत्प्रेक्षा आदि की राशि उड़ेलने वाला कविचन्द ही है। इसी प्रकार पृथ्वीराज के बन्दी बनाये जाने का समाचार मिलने पर सहगामिनी संयोगिता का आर्त्त क्रन्दन तथा वैधव्य रूप हृदयविदारक है।

उधर गजनी के कैदखाने में पड़े हुए अन्धे महाराज पृथ्वीराज का पश्चाताप और भी करुण है। राजा अपने इस पतन के कारणों का मन-ही-मन विश्लेषण करता है और पाता है कि यह सब उसके कुकृत्यों और अत्याचारों का परिणाम है। उसकी आँखों के सामने एक-एक कर सभी अत्याचार साकार हो उठते हैं। फिर उसे अपने अतीत वैभव तथा सुखोपभोग का स्मरण हो आता है। अभाव की पटभूमि में वे सुखमय दिन बड़े मोहक प्रतीत होते हैं, फिर उस मोहक पटभूमि के विरोध में कैद की दारुण दशा और भी मार्मिक हो उठी है। रासोकार ने महाराज के इस मानसिक द्वन्द्व का अत्यन्त सफल अंकन किया है—

राजा सोचता है—

सही फूल की फूलनी नांहि नाथं। तुरत्तं तराओं जु मालीन हाथं॥
नहीं सूर सामंत परिवार देसं। नहीं गज्ज बाजं भडारं निलेसं॥

नहीं पंगजा प्रान ते अत्ति प्यारी। नहीं गोष महिला इत चित्रसारी ।।
नहीं मृगनयनी चरन्नं तलासै। नहीं कूक कोका सबद्दं उलासै ।।
नहीं पातुरं चातुरं नृत्यकारी। नहीं ताल संगीत आलापचारी ।।

और अंत में—

नहीं चोम मौजं करूं लख्य दानं। नहीं भट्ट चंदं विरद्दं बषानं ।।

उस समय तो नहीं, लेकिन कुछ दिनों बाद चंद अवश्य उसके पास आ पहुँचता है और फिर एक बार विरुदावली सुनाता है। लेकिन इस बार की विरुदावली कुछ और है। वह अंधे तथा हताश योद्धा के हृदय में नयी आशा का संचार करती है; वह मुक्ति का संदेश देती है; वह कार्य-विशेष के लिए तैयार करती है। लेकिन वह प्रसंग कितना मार्मिक है, जब अंधा नरेश अपने प्रिय सहचर चंद का स्वर सुनता है। पहले वह पहचान नहीं पाता। फिर थोड़ी देर बाद स्वर के सहारे पहचान लेता है। उल्लास होता है, लेकिन फिर न जाने कितने भाव मन में उठते हैं। शायद यह कि आज इस विरुद के उपलक्ष में पहले की तरह पुरस्कार देने के लिये मेरे पास कुछ नहीं है; शायद यह कि आज यह विरुद व्यंग की तरह चुभता है; शायद यह कि अपना यह विपन्न रूप चंद को दिखाने के लिए मैं क्यों जीवित हूँ; शायद यह कि डूबते को तिनके का सहारा मिला और बहुत दिनों के बाद परदेश में स्वजन का स्वर सुनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। पृथ्वीराज कुछ नहीं बोलता केवल—

नेह नीर रुकि कंक कवि, नैन झलझल पानि।
बिन बोलत बोल्यो नृपति, चंद चिति बर बानि ।।

ऐसे शोकपर्यवसायी महाकाव्य का अंत भी भारतीय कवि ने सुखांत से उद्भासित कर दिया, क्योंकि धरणी का म्लेच्छ से उद्धार होना राजशोक से अधिक आनंदप्रद है।

मरन चंद बर दाई, राज पुनि सुनिग साहि हनि।
पुहपंजलि असमान, सीस छोड़ी सुदेव तनि ।।

मेछ अवद्धित धरिन, धरिन, सब तीय सोह सिग।
तिनहि तिनहि संजोति, जोति जोतिह संपामिग ।।

रासो अलंभ नव रस सरस, चंद छंद किय अमिय सम।
शृङ्गार बीर करुना बिभछ, भय अद्भुत हसंत सम ।।

ऐसे चरित-काव्य के विषय में इस अन्तिम उल्लाला की गर्वोक्ति उचित ही है। युद्ध प्रसंगों को उदाहृत करना उतना आवश्यक नहीं, क्योंकि वीर काव्य के रूप में तो इसकी ख्याति है ही।

ऐसे काव्य में, यदि यदा-कदा ऐतिहासिक तथ्यों का उल्लंघन हो गया हो तो उससे कुछ नहीं बिगड़ता; क्योंकि इसमें तथ्यों से भी बड़े मानवीय सत्यों की अवहेलना नहीं की गई; बल्कि सच तो यह है कि कवि ने मानवीय सत्य की रक्षा के लिए ही सुविधानुसार ऐतिहासिक तथ्यों से इधर-उधर हटकर अपनी कल्पना-शक्ति का जौहर दिखाया है।

अभिव्यक्ति-कौशल—ऐसी भाव-प्रगल्भता कुशल कवि से ही संभव है। रासो के शिल्प-सौन्दर्य पर विचार करते हुए सबसे पहले जिस बात की ओर ध्यान जाता है, वह यह है कि इसके कवि को काव्य की पूर्व परंपरा का अद्भुत ज्ञान था और साथ ही भावावेग के अभिनव उत्थान में पूर्ववर्ती काव्य-परंपरा को ढालने की क्षमता भी थी। ह्रास-युग की उस कृति में इससे अधिक शिल्प-सौन्दर्य की शक्ति संभव भी न थी। उस युग के अन्य कुशल कवियों की भाँति रासोकार ने भी पूर्व कवियों की कही हुई उक्तियों में अपनी सूझ के अनुसार थोड़ी-बहुत विशेषता झलकाने में प्रायः जौहर दिखाया है और यही उस युग का सबसे बड़ा बहुप्रशंसित काव्य कौशल था। शशिव्रता की 'नयन-श्रवण वार्ता' में चंद की यह प्रवृत्ति देखी जा सकती है। इसी प्रकार नख-शिख वर्णन में भी काव्य-रूढ़ियों का पुनर्मार्जन लक्षित होता है। इस प्रवृत्ति से जायसी, सूर और तुलसी जैसे रससिद्ध कवि भी मुक्त न थे। प्रायः उन कवियों की विशेषता मानवीय मनोभावों की सहज परख में लक्षित हुई है और ऐसे प्रसंगों में रासोकार भी ऊंचे उठ जाता है।

रासो के कवि की अभिव्यक्ति-क्षमता सबसे अधिक भाषा पर अधिकार के रूप में देखी जा सकती है। कवि जैसे चाहता है शब्दों का प्रवाह मोड़ देता है; हर शब्द जैसे उसके इशारे पर नाचता चलता है और भावावेग में धारा-प्रवाह शब्दों को देखकर ऐसा प्रतीत होता है जैसे इस कवि को शब्द की कमी खटकती ही नहीं। निश्चय ही, चंद बिहारी की भाँति एक-एक शब्द बहुत तराश-खरादकर, बहुत

सोच-विचार के साथ प्रयोग करने वाले जड़ाऊ या शिल्पियों में से न थे। वे मस्तमौला की तरह शब्दों का बेलाग प्रयोग करते थे। इसलिए जो विद्वान् 'नपा-तुलापन', 'अत्यन्त व्यवस्था' आदि के अनुसार कवि की भाषा-शक्ति परखते हैं वे चंद को पसंद नहीं कर सकते; वे तो बिहारी पर ही बलिहारी होते हैं। किन्तु जिन्हें भावानुकूल भाषा मंद और तीव्र सौन्दर्य की चाट है वे चंद के पास बार-बार मँडरायेंगे।

छंद भाषा की गति तथा भंगिमा है। इसलिए चंद जैसे भाषा पर अचूक अधिकार रखने वाले कवि की छंद-भंगी स्वाभाविक है। वस्तुतः हिन्दी में चंद को छंदों का राजा कहा जा सकता है। भाव-भंगिमा के साथ-साथ दनादन भाषा नये-नये छंदों की गति धारण करती चलती है और विशेषता यह है कि इस बलखाती हुई नदी में बहते हुए चित्त को कोई मोड़ नहीं खटकता। छंद परिवर्तन के प्रवाह में सहज आत्मविस्मृति का ऐसा सुख अन्यत्र कहीं नहीं मिलता। रासो एक ही साथ संस्कृत, प्राकृत तथा अपभ्रंश की प्राचीन छन्द परंपरा के पुनरुज्जीवन तथा हिन्दी के नूतन छंद-संगीत के सूत्रपात की संधि बेला हैं। इस तमाम छंद-संघटन में भी रासो का अपना हिन्दी काव्योचित संगीत सर्वोपरि है। इसलिए तो 'सरोज' के रचयिता श्री शिवसिंह सेंगर ने चंद को छप्पयों का राजा कहा है। विभिन्न यतियों के छप्पय की जो सुकर भंगिमा चंद ने दिखलायी है वह दुर्लभ है।

इस प्रकार चंद ने अनूठे अभिव्यक्ति-कौशल का परिचय दिया।

रासो और युग की वास्तविकता—चाहे पृथ्वीराज रासो की रचना आठ-दस वर्षों में एक कवि द्वारा हुई हो चाहे शताब्दियों में अनेक कवियों द्वारा, उसमें प्रतिबिम्बित वास्तविकता में कोई महत्त्व-पूर्ण स्तर-भेद लक्षित नहीं होता। जिस प्रकार कबीर, जायसी सूर, तुलसीदास आदि की रचनाओं में चौदहवीं से सोलहवीं शताब्दी का सांस्कृतिक पुनर्जागरण प्रतिबिम्बित हुआ है और सामान्य जन समूह की आशाओं-आकांक्षाओं का उभार लक्षित होता है, उस तरह पृथ्वीराज रासो में नहीं मिलता। वस्तुतः वह पृथ्वीराज तथा उससे सम्बम्द्ध राजाओं और सामंतों के प्रणय तथा युद्ध विषयक सम्बन्धों के माध्यम से उस युग के ह्रासोन्मुख उपरले समुदाय की वास्तविकता प्रकट करता है। निस्सन्देह चंद अपने चरित नायक पृथ्वीराज का

सखा था और पृथ्वीराज के प्रति उसका पक्षपात भी स्वाभाविक था। इस सहानुभूति के बावजूद उसके अनजाने पृथ्वीराज तथा उसके समाज की कमजोरियाँ उभर गई हैं। संभवतः इस सहानुभूति के कारण रासो में युग की सचाई अपने नग्न रूप में व्यक्त हो सकी है।

जब गोरी के हमले की खबर पृथ्वीराज की प्रजा में पहुँचती है तो वह अपने को अरक्षित तथा असहाय अनुभव करती हुई अंत में रनिवास-लुब्ध राजा की शरण जाने की मंत्रणा करती है। उस समय चंद की इन पंक्तियों 'रतिवंतौ राजन' का संकेत ध्यान देने योग्य है।

मिलियं सकल एकान्त महाजन। किम बुज्झैं रतिवंतौ राजन।

मृगया-रत और केलि-विलासी राजा के जीवन का उद्‌घाटन करने के साथ ही परम्परा-घातक राजपूती शान की ओर भी कन्ह के चषबंधन कथानक में संकेत किया गया है। चंद ने इस सचाई का यथातथ्य अंकन ही नहीं किया है, बल्कि पृथ्वीराज के पराभव तथा कैद वाले पश्चाताप के द्वारा अनजाने ही उस ह्रासयुगीन भावना के घातक परिणाम की ओर भी ध्यान दिलाया है।

इस प्रकार पृथ्वीराज रासो संत-भक्ति काव्य की भाँति सामान्य जन-जागरण की उत्थानशील भावना का प्रतिबिम्ब न होते हुए भी ह्रासोन्मुखी सामन्ती शक्तियों के अंतर्विरोध का चित्रण करने वाला महाकाव्य है। इसलिए इसकी वीर भावना में न तो महाभारत सा उदात्त शौर्य और पराक्रम है और न इसकी शृङ्गार भावना में कालिदास की सी मुग्ध तन्मय भावाकुलता। ह्रासयुग का प्रभाव रासो की वीरता और शृङ्गार दोनों भावनाओं पर पड़ा।

इसलिए रासो की महिमा वीरता और शृंगार के उदात्त तथा उज्ज्वल चित्रण में उतनी नहीं जितनी अपने युग की वास्तविक वीरता तथा प्रेम-भावना को प्रतिबिम्बित करने में है। कहना न होगा कि इस कार्य में चंद ने जितने व्यापक क्षेत्र को समेटा है वह संत-भक्ति काव्य को छोड़कर अन्यत्र कहीं नहीं मिलता। रासो मानव जीवन की विविध परिस्थितियों और भावदशाओं का महासागर है। यही वह विशेषता है जिससे ह्रास युग के सभी काव्यों में रासो को सर्वोपरि स्थान दिया

है। निश्चय ही यह उस युग की सांस्कृतिक परिस्थितियों तथा पूर्व परंपराओं का बृहद् कोश और मध्ययुगीन भारतीय समाज का एक काव्यात्मक इतिहास है।

पृथ्वीराज रासो की भाषा

राजस्थान की अनुश्रुति या परंपरा के अनुसार पृथ्वीराज रासो की रचना पिंगल (ब्रज भाषा) में हुई। डॉ० उदय नारायण तिवारी के अनुसार लंदन की रॉयल एशियाटिक सोसायटी में सुरक्षित पृथ्वी-राज रासो की एक हस्तलिखित प्रति के ऊपर फ़ारसी में लिखा है कि 'चंदरवरदायी लिखित पिंगल भाषा में पृथूराज का इतिहास।'[१] यद्यपि तिवारी जी ने उस प्रति के लिपि-काल आदि के विषय में कोई सूचना नहीं दी, फिर भी वहां की प्रतियों के बारे में जो विवरण प्राप्त हैं उनको देखते हुए कहा जा सकता है कि यह अनुश्रुति १७ वीं १८वीं शताब्दी से पूर्व की ही है। इस अनुश्रुति की पुष्टि आधुनिक युग के फ्रांसीसी विद्वान् तासी ने १८३९ ई० में की और डॉ० तिवारी के अनुसार उसने लिखा है कि रासो की रचना कन्नौजी बोली ब्रज के अन्तर्गत हुई है।[२] कुछ दिनों बाद बीम्स ने पृथ्वीराज रासो की भाषा का विस्तृत अध्ययन बंगाल की रा० ए० सो० जर्नल (जिल्द ४२, खण्ड १, सन् १८७६ ई०) में प्रकाशित करवाया जिसका संभवतः सारांश देते हुए डॉ० धीरेन्द्र वर्मा ने लिखा है "ग्रउज्ज (?) की दी हुई रासो के व्याकरण की रूपरेखा से यह स्पष्ट हो जाता है कि जहाँ तक व्याकरण के ढाँचे का प्रश्न है, रासो की भाषा प्रधानतया १६ वीं शताब्दी में साहित्य के क्षेत्र में प्रयुक्त ब्रजभाषा है, न डिंगल अथवा प्राचीन साहित्यिक मारवाड़ी और न अपभ्रंश है, किन्तु शब्द-समूह में अपभ्रंशाभास और डिंगल रूपों का प्रयोग रासो में बहुत हुआ है। यह एक शैलीमात्र थी जिसका प्रयोग वीर रस सम्बन्धी स्थलों पर अनेक समकालीन कवियों ने किया है, जैसे केशव, तुलसी, भूषण, चन्द्रशेखर आदि। अन्तर इतना ही है कि युद्ध-प्रधान ग्रन्थ होने के कारण ही रासो में इनका प्रयोग आद्योपान्त और अधिक मात्रा में

१. वीर काव्य, सं० २००५, पृ० ६२.

२. वही, पृ० १५४

मिलता है। इस शब्दावली के कारण ही रासो की भाषा के डिंगल अथवा अपभ्रंश होने का संदेह पाठकों को होने लगता है।"[1] ग्राउज और बीम्स के साथ जब पृथ्वीराज रासो विषयक विवाद आरम्भ हो गया तो उस दौरान में भी तेसीतोरी और ग्रियर्सन ने रासो को पश्चिमी हिन्दी (ब्रज) की रचना बताया।

इसके विपरीत डॉ० दशरथ शर्मा तथा मीनाराम रंगा की राय में 'परंपरानुसार रासो प्राचीन राजस्थानी रचना है।'[2] किन्तु रासो को राजस्थानी रचना कहने वाली वह कौन-सी परंपरा है इसका उल्लेख उन्होंने नहीं किया है। 'पुरातन प्रबन्ध संग्रह' के पृथ्वीराज सम्बन्धी अपभ्रंश छंदों के प्राप्त हो जाने से उनकी राय रासो को 'अपभ्रंश या पुरानी राजस्थानी' रचना कहने के पक्ष में हो गई।[3] वहीं अपने मत की पुष्टि के लिये उन्होंने पृथ्वीराज रासो के 'यज्ञ विध्वंस' प्रकरण के कुछ छंदों का अपभ्रंश रूपान्तर भी किया है।

आये दिन पृथ्वीराज रासो की भाषा पर अक्सर निबन्ध निकलते रहते हैं लेकिन जैसा कि नरोत्तमदास स्वामी ने लिखा है इन विद्वानों ने न तो डिंगल की रचनाओं को देखा न पिंगल की इन रचनाओं का ही अध्ययन किया और डिंगल क्या है इससे अपरिचित होने के कारण इन पिंगल रचनाओं को डिंगल कह डाला—केवल इसलिये कि इनकी रचना राजस्थान में हुई।[4] कुछ लोगों की तो भाषा परख-शक्ति ऐसी है कि जहाँ किसी छंद में कुछ व्यंजनद्वित्व देखा, चट 'डिंगल' कह उठे। ये भाषा शास्त्री केवल शब्द को भाषा समझते हैं।

वस्तुत: अपभ्रंश के बाद प्राय: पश्चिमी भारत में दो मुख्य भाषाएँ उत्पन्न हुईं—दक्षिणी-पश्चिमी राजस्थान में डिंगल तथा पूर्वी राजस्थान और ब्रजमंडल में पिंगल। काव्य-परंपरा की दृष्टि से डिंगल में रचना करने वाले प्राय: चारण हुए और पिंगल कृति के कवि प्राय: भाट। पृथ्वीराज रासो पूर्वी राजस्थान में मूलत: चंद बलिद्द भट्ट

---

१. काशी विद्यापीठ रजत, जयंती अभिनंदन ग्रन्थ, पृ० १७७-७८

२. राजस्थान भारती, भाग १ सं० १, सन् १९४६ पृ० १०१

३. वही

४. वही भा० १, सं० १, सन् ११४६ पृ० १०.

द्वारा अपभ्रंशोत्तर युग में रचा गया और अनेक प्रक्षेपों के साथ अपने विभिन्न रूपान्तरों में भी वह पिंगल की ही रचना है। निस्संदेह प्रक्षेपों के साथ भाषा के परवर्ती रूपों का भी समावेश होता गया है, किन्तु आद्योपान्त वृहद् रूपान्तर (जिसे प्रायः सबसे परवर्ती कहा जाता है) की भी भाषा का आधार एक ही ब्रज भाषा अथवा पिंगल है। पृथ्वीराज रासो का वर्तमान रूप व्यक्ति विशेष की कृति न होकर अनेक पीढ़ियों का संकलन है, इसलिए उसमें भाषा के स्तर-भेद स्वभावतः आ गए हैं, लेकिन यह भाषा-भेद उस प्रकार का नहीं है जिसे कुछ समन्वयवाद प्रेमी विद्वान् पंचमेल या खिचड़ी भाषा कहते हैं। विद्वान् पृथ्वीराज रासो के इस अंतःसाक्ष्य 'षट्भाषा पुरानं च कुरानं कथितं मया' के सहारे उसमें षट्भाषा तथा अरबी-फ़ारसी के तत्त्व खोजना अधिक प्रामाणिक समझते हैं। बात यह है कि रासो की भाषा को अपभ्रंश या डिंगल कहकर एकांगी अथवा पक्षधर कहलाने से तो कहीं अधिक सुरक्षित है इन सबका (तथा कुछ और भाषाओं का भी) सम्मिश्रण कहना। बीच का रास्ता निकालने वाली यह पंचऊ प्रवृत्ति मीठी भले हो, लेकिन वैज्ञानिक नहीं कही जा सकती।

'षट्भाषा' वाला पद्य निश्चय ही किसी-न-किसी रूप में सभी प्रकार के रूपान्तरों में प्राप्त होता है, लेकिन मध्ययुग में संस्कृत आलंकारिकों, प्राकृत वैयाकरणों तथा कवियों में 'षट्भाषा' शब्द रूढ़ हो चला था। इसके अतिरिक्त रासो के उक्त छंद में भाषावैविध्य की ओर संकेत नहीं है, बल्कि षट्भाषा में रचित साहित्य के सार ग्रहण करने की घोषणा है। 'कुरान' के उल्लेख का भी यही प्रयोजन है। यों भी यह बड़ी मोटी बात है कि कोई काव्य एक निश्चित भाषा में लिखा जाता है, उसे दुनिया भर की भाषाओं का अजायबघर नहीं बनाया जाता। वस्तुतः पृथ्वीराज रासो में शैली-भेद है, भाषा-भेद नहीं।

लेकिन पृथ्वीराज रासो को एक भाषा—पिंगल की कृति मानते हुए भी पंडितों का यह आरोप आड़े आता है कि 'उसमें व्याकरण आदि की कोई व्यवस्था नही है' और उसकी भाषा 'बिलकुल बे-ठिकाने है।' आचार्य रामचन्द्र शुक्ल जैसे विद्वानों ने झुँझला कर कहा है कि 'न तो यह भाषा के इतिहास के और न साहित्य के जिज्ञासुओं के ही काम का है।' इस झुँझलाहट में इतना तथ्य तो है ही

कि वैज्ञानिक ढंग से संपादित न होने के कारण लिपिकार की प्रमाद-जनित अनेक त्रुटियाँ रासो के पाठक को कदम-कदम पर परेशानी में डालती हैं। लेकिन जहाँ तक 'व्याकरण की व्यवस्था' का प्रश्न है, ध्यान से देखने पर वह मिलेगी। हाँ, इतना तो ध्यान रखना ही चाहिए कि यह काव्य है, व्याकरण ग्रंथ नहीं। जब रससिद्ध कवि गो० तुलसीदास के धर्मग्रन्थ की तरह पूज्य तथा सुरक्षित 'रामचरित मानस' में भी एक ही शब्द के अनेक रूप मिलते हैं, तो चंद बलद्दिय भाट कृत तथा मौखिक परंपरा में रूपान्तरित इस राज प्रशस्ति में शब्द रूपों की किंचित् अव्यवस्था स्वाभाविक ही है। इतने पर भी वह 'भाषा के इतिहास के .काम का' है या नहीं, यह तो अध्ययन के बाद ही कहा जा सकता है।

रासो में एक ही शब्द के विभिन्न रूपों को देखकर बीम्स ने दो प्रकार की व्याख्याएँ प्रस्तुत की हैं। एक तो छन्दोऽनुरोध और दूसरी भाषा संक्रमणशीलता। निःसन्देह ऐतिहासिक दृष्टि से पृथ्वी-राज रासो ऐसे युग की भाषा का प्रतिनिधित्व करता है जिसमें तद्भव शब्दों का रूप स्थिर नहीं हो सका था; फलतः एक शब्द के अनेक रूप प्रचलित थे। इस दृष्टि से रासो के तद्भव शब्दों में होने वाले ध्वनि-विकारों के सम्बन्ध में कुछ निम्नलिखित सामान्य नियमों की ओर संकेत किया जा सकता है :—

१. छंद के अनुरोध से लघु अक्षर को गुरु बनाने के लिए कहीं (क) स्वर का दीर्घीकरण, जैसे—**कमलनु > कमलानु महिलनु > महिलानु**; कहीं (ख) समास-रचना अथवा वीप्सा में व्यंजनद्वित्व जैसे—**दह दिसि > दहद्दिसि, मद गज > मदग्गज, गहगह > गहग्गह, खरखर > खरक्खर**; और कहीं (ग) शब्दान्त में अनुस्वार; जैसे—**कामं कला**।

२. छंद के अनुरोध से गुरु अक्षर को लघु बनाने के लिए कहीं (क) ह्रस्वीकरण, जैसे—**अपूर्व > अपुव, काया > कया**; कहीं (ख) व्यंजन द्वित्व का **सरलीकरण**, जैसे—**अप्पनो > अपने, चालुक्क > चालुक**; और कहीं (ग) अनुस्वार का अनु-नासिकीकरण, जैसे— **कंपइ > कँपे, गयंद > गयँद**।

३. छंद के अनुरोध से संयुक्त रेफ का स्थान-विपर्यय, जैसे—

धर्म > ध्रम्म, > मर्यादा मज्जाद इत्यादि ।

छंद से इतर ध्वनि-परिवर्तनों में अपभ्रंशोत्तर युग की दो विशेषताएँ (क) उद्वृत्त स्वर का संकोचन और (ख) व्यंजन द्वित्व का सरलीकरण रासो में व्यापक रूप से दिखाई पड़ती हैं; जैसे नगर > नअर > नयर > नेर और किज्जइ > कीजइ अथवा चडिढउ > चढिउ ।

५. घोषीकरण के कुछ विशिष्ट उदाहरण अधिकांशतः क के अनेग (अनेक), चातग (चातक) और कोतिग (कौतुक) ।

६. कुछ विशिष्ट व्यंजन विकार; जैसे क > ह, ज > ग, ट > र और र > ल । उदाहरण—चिहुर, कनवग, भर, सलिता ।

व्याकरण की दृष्टि से संज्ञा शब्दों की कारक-रचना में निर्विभक्तिक रूप, सविभक्तिक विकारी रूप तथा स-परसर्ग रूप तीनों ही विधियाँ दिखायी पड़ती हैं । जैसे चंद, चंदु, चंदहि, चंदह, मनितु, मीननु सुगंधनि इत्यादि । परसर्गों में ने को छोड़कर कहुँ, कूँ; सो, सं, सहु; तनु, तन, लागि ; ते, तें, हुँति, का, की, के, कों, कउ, मधि, महिं, महं, परसर्ग मिलते हैं ।

सर्वनामों में उत्तम पुरुष हूँ, मैं, मों मोहि, मोहम; मध्यम पुरुष तुम, तुम्ह, तुम्हइ, तै तुज्झ, तोहि; दूरवर्ती निश्चयवाचक वह, उह; निकटवर्ती निश्चयवाचक इह, इहु, यह, इनि; सम्बन्धवाचक जु, जो, जासु, जिह, जिन, जिने; सो, तासु, तिहि; तिते, तिन, तिनै, प्रश्नावाचक को, कौन, किनहि इत्यादि दृष्टिगोचर होते हैं ।

क्रियापद सामान्यतः प्राचीन ब्रजभाषा के हैं; किन्तु भूतकाल में करिग, चलिग जैसे विशिष्ट रूप भी मिलते हैं ।

शब्द-समूह की दृष्टि से वृहद् रूपान्तर में अरबी-फारसी के शब्दों की बहुलता दिखायी पड़ती है जो अनुपात में लगभग प्रतिशत होंगे । किन्तु लघुतर रूपान्तरों में इनका अनुपात अत्यन्त न्यून है । शब्दसमूह का अधिकांश तद्भव शब्दों से समृद्ध है; तत्सम शब्द भी पन्द्रह प्रतिशत से अधिक नहीं हैं ।

नामवर सिंह

परिशिष्ट (ख)

शब्दार्थ

शब्दार्थ

अंकूर=(सं०) अंकुर

अंषि / अंछि (सं०) अक्षि—आँख

अंच=(पृ० ६६—रोमयंअंच) रोमाञ्च हुआ

अंछनि=(सं० अक्षि) आँखों में

अंजर (सं०=उज्जवल) उज्जवल

अंदू=(पृ० १४३) बंधन

अंब=आम

अंबंबरं=सुवस्त्र

अंप्य=(सं० आत्मन्), प्रा० अप्पां-आप (स्वयं)

अंबजा=(सं० अंबुज)—कमल

अंबाह्=आम का

अंभ=(सं०) जल

अंमर=अम्बर

अंमि=(१) अमृत (२) आम का छोटा फल

अंसपति=(१) सं० अंशपति अंशावतार (२) अश्वपति

अकस=(१) ऐंठ के साथ (२) ईर्ष्या (३) अकस्मात्

अकित्तौ=(१) अकीर्ति (२) अकृत

अष्षि=कहकर, कहा

अष्षिय (१) आँखों से (अप अष्षिय =अपनी आँखों से (२) कहा

अष्षीय=(१) कहा, (२) आँख

अषार्‌यौ=ललकारा, अखाड़ने लगा, क्रोधपूर्वक कहने लगा

अगनिता=अगणित

अगाद=अगाध

अगिवान=अगुवान

अग्ग=अग्र

अग्गर=अधिक, अग्रणी (तु० अग्गलौ रा० रू० १६)

अग्गसारि=आगे के अनुसार

अग्यौ=अगुवान

अचानं=एकाएक, अचानक

अचिज्ज=आश्चर्य

अच्छरि=अप्सरा

अच्छरिअं=आश्चर्य

अछग=(१) अतृप्त, (२) हुए, थे

अच्छ=(१) अच्छा, (२)अक्षि, आँख

अच्छिय=(१) हुआ सं० अस्-प्रा० अच्छा) (२) अच्छा

अच्छिर=अक्षर

अजपह्=व्याकुलतापूर्वक (संभवतः अलपह=थोड़ा पृ० १०६) अच्छा पाठ है

अज्ज=>अद्य=आज

अज्जान=>आजानु=जंघे तक

अठार=अट्ठारह

अठी=सैनिक

अडंड=अदंड्य

अणछेह=अपार

अत्त>आप्त, प्राप्त

अथार > अस्तार = सिमटा हुआ, न फैला हुआ

अदब्ब > आदाब

अद्ध = अर्ध

अद्धइय = अध्ययन किया, पढ़ा

अद्धारित = आधार पर स्थित

अधारी = धारण किया

अन्येंन = अध्ययन

अनि (१) सेना, अन्या, दूसरी

अनेही > अस्नेही

अनोट = अनवट, पैर के अंगूठे में पहना जाने वाला आभूषण

अनीह = निठुर, निर्दय

अपअषिष्ष = अपनी आँखों से ?

अपकानन = अपने कानों से

अपछरी = अप्सरा

अपमंग = अमंगल

अपूब्ब = अपूर्व

अप्परस < आत्मरस

अप्प = (१) आप ही (सं० आत्मन्)

(२) < अल्प

अप्पन (१) अर्पण = देना;

(२) < आत्मन = अपना

अप्पान = अपनापन

अप्पी = अर्पित किया

अपुठठी < आपृष्ठ = वापस, पीछे

अप्पों = अर्पण करूँ

अबधारी = तेज धारण करने वाला ? आबू को ग्रहण करने वाला ?

अबर = अपर, दूसरा

अब्दे = वर्षाकाल में

अबास = आवास

अब्बूधनी = आबू का राजा

अब्बवै = (सं० अर्बुदपति) आब्बू का राजा

अब्धा = अविधा = नियमों से स्वतंत्र

अबीह = निर्दय (तुल० राज रूपक पृ० ३९, २४६

अम्भ > अभ्र = बादल

अभ्र पटी = आकाश

अभंग = भंगिमा से, ढंग से

अभानं = आकाश से

अभिग्गिय = अमग्न रूप से

अमग्गी < अमार्गी टेढ़ी

अमंत < अमंत्र < राय या आज्ञा न मानने वाला

अमग्ग = < अमार्ग

अमीवर = अमृत

अमुझझे = अंबुधि में, समुद्र

अमुंद्ध = < मुग्ध = मूर्ख, मुग्धा

अयान = अज्ञानी

अर = शीघ्रता

अरक = (सं० अर्क) सूर्य,

अरषि < हर्षित = रोमांचित

अरदास < अर्जदाश्त (फा०) प्रार्थना, अनुरोध

अराबें = छोटी तोपें

अरितं = अड़ गया है

अरि-सीम = शत्रु की मर्यादा, सीमा

अरुट्ठ = रुष्ट

अरेस, अरेह = न दबने वाला (दे० राजरूपक, पृ० ३१)

लपहर्ति=अत्यल्प, अल्प
अलंकिय=अलंकृत
अलल्ल=घोड़ा
अलीन=भौंरों में
अलियल=अलिकुल, भ्रमरगण
अलुद्ध=अलुब्ध
अल्लोल=लोल, चंचल
अवग्गी=< अवलिगत=बात न
मानने वाला
अवर=अपर, और
अबाह=अप्रहरणीय
अवन्निय=अवनी में, पृथ्वी में
अवरिय=आवृत्त
अवास=आवास
अविधानं=< अभिधान, कोश
असदग्गा=असवार
असपति=अश्वपति ?
असहां=शत्रुओं पर (तु० राज रूपक,
पृ० ३८१)
असंधं=संधिहीन होकर, टूट-टूट कर
असार< अश्ववार=असवार
असुत्त (१) शुक्ति ? (२) असुप्त
अस्स< अश्व
अहप्पति=अहिपति, शेषनाग
अहुट्टिय=लोटने लगे
आएति< आयत्ति
आक्रित=आकृत्ति
आकूत< आकूति=उत्साह
आषेवनं< आवेसनं=सेवन
आगर< आकर=खान
आरब=अपराध

असिष्य=आशीष, आशीर्वाद
आहंन=दिन में
इंषी= } इंछिनी रानी
इंछी= }
इंद=(१) इंद्र, (२) इंदु, चंद्रमा
इंदुव रंग=इंदीवर (नील कमल)
का रंग
इषष< इषु=बाण
इष्यौ=देखा
इछ=इच्छा
इछु=इच्छुक
इम=इस प्रकार
इला=पृथ्वी
इश्व=ईश्वर, शिव
उअर=उर, हृदय
उकिर=अंकुरित हुआ
उकती=उक्ति
उग्रंत=उग्र
उर्ग्ग=उरग, साँप
उग्गार< उद्गार=उगलना
उचिष्टी< उच्छिष्ट
उछद्दंत=उछलता हुआ
उछार=उछाल
उच्छाह< उत्साह
उझार< उत्+ज्वाला=जलती हुई
ज्वाला
उट्टे< उत्ते=वहाँ ।
उडंदं=उड़न्त=उड़ते हुए
उतर्क< अतर्क
उतथ्य=उतंथ=जवान
उतंगं=उत्तुंग, ऊँचा

उत्तंकिय < उत् + तंकित = आतंकित

उत्तमंग = सिर

उद्दयौ = उदित हुआ

उद्दार, उद्दारयं = उदार

उदिग = उदय हुआ

उद्धरौ = उद्धार किया

उद्यौ = उदय हुआ

उधतदि = उधर (परलोक) गए ?

उनमानिय < अनुमानित

उनंगी = (१) झुकी हुई, (२) नंगी बनी

उपट्टिय = उभर गई

उपसम्म < उपशमन

उप्पन्न < उत्पन्न

उप्पम = उपमा

उपाइयं = (सं०) उत्पादित

उपाउ = उपाय करो

उब्भरे = उभड़े

उब्भै = खड़े हुए

उब्भौ = उभय, दोनों

उमद्दयं = उन्मद हुआ

उमन्नै = उन्मन भाव से

उमहीय = उमाह (उमंग—) प्राप्त

उम्मे = उमड़े

उरद्धर = हृदय को धारण करने वाले या ऊर्ध्व से आये हुये

उरह = उर का, हृदय का

उलाली = (१) उत् = लालित = उल्लालित किया, पाला-पोसा (२) उल्लालावृत्त में लिखा (?) हेमचंद (८-४-४६) के अनुसार उत् पूर्वक नमधातु से जो 'उन्नम्' बनता है उसका एक आदेश 'उल्लाल' होता है अर्थात् उल्लालित का अर्थ हुआ उन्नमित, उन्नत किया हुआ।

उवद्द = बोलता था

उष्षया < उत्क्षिप्त

उस्ससे = उच्छ्वास

ऊक = ऊंकड़ू, मुँह के बल (सं० उत्क)

ऊमंती = उमड़ती हुई

एकत्तौ = एकत्र

एकथ्थोय, एकत्थौ } एकस्थ, एक ही जगह स्थित होकर

एम = इस प्रकार

ऐराक = घोड़ा

ओड़न = ढाल जिससे कोई चीज ओड़ या थाम ली जाय

ओपम < उपमा

ओप = शोभा, कान्ति

औडन = (१) ढाल (२) आर्द्रीभूत

कंक = (१) कंक पक्षी के परवाला बाण (२) < कंकट = कवच (पृ० १३४) (३) मृत्यु, काल (पृ० १२२)

कंषिय < कांक्षित आकांक्षा की, ताक; सिर कंषिय = सिर को देखा

कंतार < कान्तार = बन

कंति < कान्ता

कंद्रप < कंदर्प = कामदेव

कंदांई = कंधे पर

कंत < कान्ता = प्रिय

कंपी = कल्पित किया, रखा [कंप < कल्प] (२) कांपी [कंप < कम्प्]

कंपेश=पृथ्वीराज ?

कंमर=कमर

कंशुभ=कुसुंभी रङ्ग का

कंदे=उन्मूलन कारिणी? (अघकंदे=पाप विनाशिनी)

कक्का=काका, पिता, गुरुजन

कष्षिक=कांक्षित

कष्षंतर=कक्षान्तर=काँख में

कग्ग=काग

कग्गाद, कग्गर <कागद, कागज, चिट्ठी

कच्छी=कच्छ देश का घोड़ा

कज्जइ=के लिए

कज्जं<कार्यं

कट्टिय=काट दिया

कटाष्षय<कटाक्षित=कटाक्ष किया

कटी=लज्जिता, हतभाग्या

कठलोनि=कठरे, कठोते

कट्ठौ=छोड़ दो

कट्ठ<काष्ठ=चंदन काष्ठ

काठ्ठयां=काष्ठा, सीमा

कढ्ढ<कट्ठ<काष्ठ=चंदन काष्ठ

कढ्ढाइ=कढ़ाया जायगा [चच्छ, कड्ढाई=आँखें काढ़ ली जायँगी]

कढ्यौ=कढ़ा, निकला

कत्तरी<कर्तरी=कैंची, छुरा

दुख: की कर्तरी=दुख का कर्तन करनेवाला)

कथ्य<कथा

कद्दव<कर्दम=कीचड़

क्रन्न<कर्ण (पृ० ४६)

कनय<कणिक=कनिक, गेहूँ का आटा या गेहूँ

कनवज्ज<कन्नौज, कान्यकुब्ज

कनव्रत<कण चुनने का व्रत

कन्ना=(कुछ+ना ?) कुछ नहीं ?

कन्ह=सरदार कन्ह

कन्हह=कन्ह का

कप्परिय=कापड़िये

कमध<कबंध

कमधज्ज, कमध्धुज्जा, कमधपुंज=जयचंद

कमंध, कमद्धं (१) कबंध=बिना सिर का धड़ (२) <कमंद (फा०)=फंदा

कमांमय=कमान युक्त

कमोदिन=कुमुदिनी

कंमोद=कुमुद

करक्कै=कड़कता है।

करिकरस्तुद्दीर उद्दारयं=हाथी का सूंड, उदर तुद्दीर (मोटी तोंद)

करकंसी=कण

करंम=कामं

करार=कगार

करिग=किया

करह=ऊँट

करूर=क्रूर, निर्दय

कलपंत=कल्पान्त

कलम=हाथी का बच्चा, ऊँट

कल्हार=कमल

कलिये=कलित करना चाहिए, गिनना चाहिए (बल कालियै अघान)
कलै=कलित करता है
कुसुंभ=कुसुंभी रङ्ग
कसाये=कषायित
कहर<कह्ल=बला, आफत, पराक्रम [केहरि-कहर=सिंह-पराक्रम]
कहल=दे० कहर [कद्दव कहल=कर्दम का प्राबल्य]
काइथ<कायस्थ
कागार=(१) कागज, पत्र (२) पंखा
कांन=कृष्ण, कन्ह, कान्ह
कायक्क<कायिक=शरीर सम्बन्धी
कल्लिय=कली (अंबुज-कल्लिय=कमल की कली)
कालंकनिय=(पं० पृ० २२) कालं या कालन से कालिंजर देश का मतलब जान पड़ता है। कनिय 'क्रन्दित' का रूप। इस प्रकार 'कनवज्ज' देश, गज्जन, पटन और कलिंजर जो किलकिला रहे थे वे पृथ्वीराज के जन्म से रो उठे—ऐसा अर्थ जान पड़ता है। परवर्ती पद्य से भी यही बात समर्थित होती है।
कासु<कस्य किसका
कांसौ=कांसा
कित्ति<कीर्ति
किंनकही=हिनहिनाते हैं
किमति=कीमत
किलकिलंत=किलकिलाते हुए, प्रसन्न होते हुए
किलाब<कलप, कंचन-किलाव=सुवर्ण कलाप)
किलोर=किलोल, कल्लोल
किवारं
किवाट } <कपाट
क्रीलइ=क्रीड़ा करता है
क्रीला=क्रीड़ा
कुटवाल<कोट्टपाल=कोतवाल
कुठ्ठे=कुंठित हुए
कुप्पौ=कुपित हुए
कुंभह=कुंभ के
कुरषि=कुरोष होकर, चिढ़कर
कुलह=कुलही, आँख का ढक्कन
कुलंगन=एक प्रकार के लड़के पक्षी लड़ने वाले मुर्गे
कुलाह=(१) टोप, (२) एक जाति का घोड़ा
कुहु=कुही, एक तरह का घोड़ा (पृ० ३६)
कुहु=अमावश्या
कुहौकुहु=कोकिल की कुहू-कुहू आवाज
कूइकालं=कौन काल वश है
कूष<कुक्षि, कोख
कूरंभ=एक सरदार
कूह<(१) क्रोध, (२) चीख, चिंघाड़ (३) कोलाहल
केनं=क्यों
कैथल=एक सरदार का नाम
कैमास<कदम्बरस=कैमास मन्त्री

कोइक=कुछ
कोकहर=चन्द्रमा
कोटकं<कोटिकं, करोड़ों
कोतर<कोटर
कोदह=और, कोना
कोर=किनारा
कोवडं<कोदंड=धनुष
कोहं=क्रोध
कौतिग } <कौतुक
कौतिग्ग }
क्रक<कर्क, चौथी राशि
क्रत (१)<कृत=किया हुआ
(२)क्रतु=यज्ञ
क्रन्न (१)<कर्ण=कान (२) करण
क्रत्य<कृत्य
क्रद्दम<कर्दम=कीचड़ (२) संकट
क्रमनारिय<कर्म+नारिय, नारी का कर्म
क्रयन=क्रय करना
कम्यौ=आक्रमण किया
षंग<षड्ग
षंड<खंड, नौ खंड
षंडल=खंड धारण करने वाला या खंडित
षंचौ=खचित किया गया
षग्ग<खड्ग
खग्ग पानं=खड्ग का (किसी रक्त का) पी जाना
षत्तै=खिचे
षठै=उलझता है (१)
षज्जुरी=बिच्छू (१) [पृ० ४५ पर षज्जुरी के स्थान पर बिज्जुरी पाठ उत्तम होता]
षटंग=पिल पड़े (?) खटखटाने लगे, तलवार से युद्ध करने लगे।
षढय (पृ० २१ पर षढग्र अशुद्ध छपा है) 'पढय' होना चाहिए। पढय-पढ़ें।
षत्ती<क्षत्रिय
खनिय=पृ० १३३ पर 'खनिय' छप गया है जो 'रवनिय' होता तो अच्छा होता। रवनिय अर्थात् रमण कीजिए। वस्तुतः रासो में 'ख' के स्थान पर सर्वत्र 'ष' दिया गया है। यहाँ का 'ख' वस्तुतः 'रव' होना चाहिए।
खनै<खण्डे ?
षब्बरि<खबर
षयकार<क्षयकार=क्षय करनेवाला
षयकाल<क्षय काल=प्रलय काल
षरह=पूरा-पूरा
षरादि=खराद कर
षरिग<खटक गया
षल<खल, (१) दुष्ट (२) खलिहान
षलक<खलक=जीवसमष्टि, संसार, लोक समूह
षल—हलिय=खरभर पड़ गया
षवास<खवास (अ०) खास खिदमतगार, नाई
षह } खेह=धूल
षहं }
षांनं=खान
षावास=खवास=खास खिदमत-

गार, साधारणतः नाई
षयाल < ख्याल
षिड़ुरी = खाँड़ा
षिजी, षिझयौ = खीझे
षित्तह < क्षिप्त = मत्त व्यक्ति
षिनंषिन, षिन्नषिन क्षण-क्षण
षिभिर = खरभराए
षिभ्यौ = क्षुब्ध हुआ
षिरक्की = खिड़की
षित्र < क्षेत्र
षित्रिवट < क्षत्रिय वर्त्म ? क्षत्रियों का मार्ग, क्षत्रियोचित
षुट्टी = खुटक गया
षुप्परी = खोपड़ी
षुभीय = क्षुब्ध हुई
षुर = खुर (घोड़ों के खुर)
षरसान, षरासांन = एक देश (ईसान देश का पूर्वी हिस्सा)
षेव = खूब
षेलहन = खेलने के लिए, क्रीड़ा का
षेह = खेह, धूल
षेहति = धूल
षेत = खेत, संग्राम भूमि, रणक्षेत्र
षोटं = खोटा
गंजि = नष्ट करके
गंजे = नष्ट किया
गठ्ठिया < ग्रंथित = गाँठ देना, गाँठ बाँधना
गंसि = ग्रास करके, चारों ओर से घेर के, कसके
गच्छि = सम्हाल कर ?
गज्जन < ग़ज़नी
गड्डहि = ढेर में ?
गडुंवा = गडुंआ, टोंटीदार लोटा
गढौह = गढ़ा
गत्यै = गति (तृ०)
गभार = गहरा
गद्दरी = गदर मचानेवाली
गर्दन = गर्द से
गर = गला
गरसी = गर्म पानी का
गरिष्ट = गरिष्ठ, भारी
गरुआयं = गुरुत्व प्राप्त होता है
गुरुअत्त = महान्
गलती = गले से, सिर पर से
गल्ल = हल्ला, गाल बजाना
गल्ह < (१) जल्ह, जल्हण, (२) गल्भ = प्रगल्भ, धृष्ट
गवष, गवष्ष < गवाक्ष, खिड़की
गवरि < गौरि, गौरी
गस्सि = ग्रसित करके
गस्त < गश्त, घूम-घूम कर दिया जाने वाला पहरा या ऐसे पहरेदार
गहकि = ललक कर, उल्लसित होकर
गहर (१) दुर्गम, भयंकर, (२) देर
गहरगूल = अत्यन्त गहिरा
गहिलौत = एक राजपूत वंश
गहंगह = गहगहाते हैं
गाज < गर्ज (१) गर्जन (२) वज्र

गदीय=गद्दी, गद्दा

गांन<गान

गाह्नं-गहन=गहन (कार्य भार) को ग्रहण करने वाला

गिरद<गिर्द ? सब ओर

गिरन=गिरि का बहुव०

गिलण=निगलना, निगलने वाला

गिलम्मे=ऊनी कालीन, गिलम

गिलोल=गुलेल

गुंड=चूर्ण, पुष्प-पराग

गुंडीर=चूर्ण विचूर्ण करने वाला

गुडंदति=गुड़ के बने भोज्यान्न

गुर्ज (फा०)=गदा या गदाधारी सैनिक

गुज्जर=गुर्जर-गुजराज, का राजा

गुज्जरवै<गुर्जरपति

गुनेयं=गुणों का

गुपंति=गुप्त

गुफंति=गुम्फित करता है, गूँथता है

गुरथ्थ<गुर्वर्थ (?) भारी या बड़ा अर्थ

गुरयं<गुरु

गुराइ, गुराउ, गुराव=तोप लादने की गाड़ी

गुरदाही=छोटी तोपों की

गुरिग, गुरिय=गोरी (मुहम्मद)

गुरज=गुर्ज, गदा

गूल<गुल्म=सेना का एक विभाग

गेंबर<गजवर, हाथी

गै<गय, गज

गैर<गै

गैति=गजसमूह

गैन<गगन, आकाश

गोष<गवाक्ष=खिड़की

गोठ, गोठि<गोष्ठी

गोमग्ग<गोमार्ग

गोनं<गमन

गोमगांम<धूल (?)

गोस=<गोश (फा०) कमान, कोना

गोदर=गदराया हुआ, यौवनागमन से भरता हुआ

गौ=(१) गाय (२) गया

गौषी, गौष<गवाक्ष

ग्रध्रन्न=गृद्ध गण

ग्रब्ब<गर्व

ग्रब्बहन<गर्वघ्न, गर्व को नष्ट करने वाला

ग्रब्बा प्रहारी<गर्वापहारिन्, गर्व को अपहरण करने वाला

ग्रम्भ=गर्भ

गमारि=गँवार स्त्री

ग्रीषमं=ग्रीष्म

ग्रह, ग्रेह=गेह, गृह

घट्टाइ=घटाता है

घट्ट<गोष्ठ=सलाह

घडन<घटन=गढ़ना

घननंत=घनघनाते हुए

घरघयार=घड़घड़ा कर

घरियार=घड़ियाल, समय बताने के लिए बजाया जाने वाला घंटा

घरीव=घड़ी

घहई=घहराया

घाई < घात
घायां = चोट पड़ने पर
घार < घात = चोट ।

घुंटित = घुटा हुआ
घुमंर = घुमड़
घुरि = चारों ओर से घूमकर, घुड़ककर
घूठन = घुटनों के बल
घूंमरि = घुमड़कर
घोड़ानभंति = कई प्रकार के घोड़े रासो में देश भेद से सिंधी, कच्छी, पहाड़ी, अरबी, ताजी आदि तथा लक्षण और गुण भेद से लक्खी, कुल्ला, कुम्मेत सिरगा, सुरंग, गुलाब, हरिया, समद, स्याह, हंसी आदि कई प्रकार के घोड़ों का उल्लेख है ।
घैंसाहट = फौज (डिंगल-कोश)
चंपाई = प्राप्त हुआ
चंपि — दबाकर
चंप = दबाना, चढ़ बैठना
चकि = चकित होकर
चक्क < चक्र
चष < चक्षु
चषहीन = अंधा
चच्चरं = चाँचर, होली में गाया जाने वाला प्रमोदगान
चच्छ } < चक्षु
चच्छि }
चव = (१) (क्रि०) कहना (२) चार

चवं = चतुर्थ
चयं = मिले
चवथ्थ = वचन
चवदसु = चौदह
चारतारी = चारुतड़ित सुन्दर विद्युत
चालुक्कां = चालुक्य
चावंडु = चामुंड
चिग्ग = चिक, परदा
चिंघाई = चिंघाड़ते
चिहलै = आनंद
चिहारं = चिंघाड़
चिल्ही = चील्ह, चील (पक्षी)
चिहु = चहु, चहुँ
चिहुरार < चिकुभार = केशराजि
चीकट = मैल से चिकना बना, मलीन
चीस = चीख
चुंगल = चंगुल
चुटक्के = चुटकी बजाते-बजाते
चूरि = चोरी से
चौम < जोम (अ०) = गर्व, घमंड
चौरं < चमार
चौज < चोज, चमत्कारी उक्ति
चौडोल = पालकी
छँड = छोड़ना
छक्क = छका हुआ, तृप्त
छग्गर = शकट = सग्गड़
छग्यौ < छक्यौ
छत्ती = छत्रिय
छयल्ल = रसिक; विदग्ध
छिछ = छूंछा
छित < सित

छिनकुरहि=क्षण भर रहो, थोड़ी देर रुको
छिपौ=छुपा
छौनी=क्षोणी
छोह<क्षोभ (स्नेह)
जंषी=झंखी
जंजर<जर्जर
जंजं=जो, जो
जंप<जल्प=बोलना
जंबूनद=सोना
जंम<(१) यम (२)<जन्म
जष्षि<यक्षिणी
जग्ग<(१) यज्ञ, (२) पृ० ४६ पर 'जंग' के अर्थ में व्यवहृत जान पड़ता है।
जत्तौ=गया
जथ्थ=जाओ
जद्दनं, जद्दौ=यादव वंशी राजा
जदौवै=यादव देश का राजा
जनेउ=जनेव
जम<यम,=यमधार, दुधारी तलवार
जर<जर (स्वर्ण)
जरकस<जरकश (फा०) जरी या कलाबत्तू का काम किया हुआ।
जरकि=झरक, झलक
जरजर्‍यौ=जर्जर हो गया।
जराव=जड़ाव
जरे=जल रहा है, चमक रहा है
जाजुलित=जाज्वलित
जाँवि=जामकर, जन्म लेकर
जीमूत=बादल
जकत्तिय<युक्ति
जुग्ग<युग, दो
जुग्गिनि=योगिनीपुर (दिल्ली)
जुग्गिनवै=योगिनीपुर का राजा पृथ्वीराज
जुज्झ<युद्ध
जुलियं=जुड़े
जूना<जीर्ण
जूपी=यूपबद्ध पशु, बलि के लिए निर्मित खंभे से बँधा पशु।
जूव<युवती
जूह<यूथ
जेब, जेम, जेमं=जैसे
जेहरि=पाजेब
जैत=जैतकुमार
जोगिंद<योगीन्द्र
झंकि=झाँक कर
झंझलियं<जाज्वलित
झंझा पया<झंझापगा
झुमझहुति=जूझ हुई
जरिप्पय=झड़पा
झलहल=झलाझल, चमकदार
झल्लरी<वाद्यविशेष, हुड़ुक, झाँझ
झार<ज्वाला=ज्वाला, लौ
झराहर<ज्वालाधर-सूर्य
झुझ, झुंझ<जुज्झ<युद्ध
झुझ्झि=जूझकर

झौर=(१)झुंड(२)झुरमुट(३)झब्बा
ठई=स्थापित की, स्थिर की
ठठ्ठा=ठठेर (?)
ठट्टनवै=ठट्टनों (?) का राजा
ठढ्यो=डट गए
ठाम=ठाँव, स्थान
ठिल्ला=ठेल दिया
ठोठ=ठूँठा, निरा
डंकित=झंकृत
डंडइय=दंडित कीजिए
डंडमाली=दंडी कवि ?
डंडूरिय=धुँधुरित होना, हवा का धूल से भर जाना
डंडूर=रक्त (?)
डंवर / **डंमर** / **डम्मर** =डंबर, आडंबर, मेघडंबर
डंमरी<(१) डंबरी=मेघडंबर से युक्त [डंबरी बाल, मेघडंबर से घिरा बाल सूर्य] (२) एक प्रकार का चँदोवा
डड्ढ<दग्ध
डब्बे=ढब से, ढंग से
डहक्क=चिंघाड़ता हुआ
डांम=<दाम, रस्सी
डिंभ=(१) बच्चा, (२) अंकुर, (३) दंभ
डुक्कर<दुक्कट<दुष्कृत=कठिन कार्य
डोहं<द्रोह
ढिग=समीप
ढिल्ली=दिल्ली
ढरिग=ढर गया
ढिल्लीवै<दिल्लीपति
ढिल्लेसं<दिल्लीश
ढुरहि=? ढरकते हैं, फिसलते हैं
ढोहू=ढोए
तंत / **तंत** =(१) तंत्र, (२) तांतु
तंभोर / **तंभोर** =<तांबूल
तकसीर=कसूर, दोष
तष्षि=(१) नागिन ? (२) तीक्ष्ण
तष्पी=तीक्ष्ण ? तेज
तच्छयं<तक्षक-नाग
तत<तत्व
ततविन=उनके बिना ?
तत्त<तत्त्व
तथ्थ=(१) तत्र (वहाँ) (२) तथ्य
तथ्थु=तो भी
तद्दिन=उस दिन
तत्ती=(१) तज (घोड़ा) (२) उतने
तप्पनह=तपने के लिए, तप करने के
तबल=डग्गा ?
तमि=तमककर
तमी=अंधकार
तरक्कंत=तड़कत हैं, तड़तड़ा कर गिरते हैं
तलपह<तल्प=बिछौने पर
तवल्लह=तबले का
तवीयन<तबीब (अ) चिकित्सक
तांम=(१) उनका (२) लाल, गोरा

तामंस
तामस्स } < तामस-तमोगुणी

तासंत=(त्रासन्त) त्रास पाते हुए

तित्तह=वह, वहाँ

तित्थ=वहाँ

तिनष्षी=तिनककर, बिगड़कर

तिरिगत्त<त्रिगर्त—एक देश, वर्तमान जालंधर और कांगड़ा प्रदेश

तिष्ट<तिष्ठ(ति) (सं), रहता है

तिस्न=(मृग तिष्न=मृग तृष्ण)

तिह=उसे

तुट्टिट=टूटा

तुण्ड=मुख का अग्रभाग, चोंच

तुछ=छोटा, कोमल, सूक्ष्म

तुबक=तुपक

तुरय=तुरंग, घोड़ा

तुररा<(१) तुर्रा (फा०) अनोखा (२) (अ०) पगड़ी की या किसी पक्षी की शिखा

तुल्य<तुल्य

तेम=उस प्रकार

तेह=उसे

तोअर<तोमर

तोन<तूण, तूणीर

थट्ट, थाट=ठाट

थपी=स्थापित कर

थपे=स्थापित किया

थवा=थपा

थार=थाली

थान<स्थान

थावें=स्थापित करै

थी<स्थित

थुत<स्तुत

थोभ<स्तोभ=रुकावट

दंगह<दंग करने वाला, अद्भुत

दंगे=दंग करनेवाली

दंद=द्वन्द्व

दष्षी=देखी

दझ्झै=दग्ध होता है

दढ्ढ<(१) दग्ध (२) जमदड्ढ<यमद्रष्टा

दत्ती=दत्त (दत्तात्रेय) मत के मानने वाले योगी

दप्प<दर्प

दव्बू<द्रव्य ?

दहं=दिया (संभवतः पृ० ३० पर 'दीह' पाठ है)

दरहं<दर्द

दरिय<(१) दलिय<दलित, दलन क्रिया, (२) दरी, गुफा

दवानं<दुवानं=दोनों का

दसियं<दर्शित

दाग<दाघ=दाह

दातार<दातृ=दाता

दावब=द्रव्यों के(द्रव्य<दव्ब<दाव

दाव=दो

दिछ्घ<दीर्घ

दिट्ट<दृष्ट=देखा

दिट्टि<दृष्टि

दिढंबर<दृढबिर ?

दिद्यौ
दिद्ध
दिध्व
दिद्धिय } दिया
दिन्ने
दिन्नेव

दिपन्नौ = दीप्त हुआ
दिलेसं = दिलीश
दिष्ट < दृष्ट
दिष्टानं = दृष्टि
दीलीय = दिल्ली में
दीसत = दीखते हैं
दीह = (१) देह (२) < दीर्घ
दुअ < द्रुत
दुअध = दो खंड, दो टुकड़े
दुकर्म < दुष्कर्म्य, जिस पर आक्रमण करना कठिन हो
दुक्कति < दुष्यति, दोष देती
दुक्रित < दुष्कृत
दुज
तुज } < द्विज-(१) ी, (२) ब्राह्मण
दुझारय = झटकार रहे हैं, झाड़ रहे हैं
दुत्तर < दुस्तर
दुती < द्वितीय
दुत्तिय = दूती ने
दुषंत = दुःखी का अन्त (पृ० १०६ पर 'दुषंत' के स्थान पर 'दुष्यन्त' पाठ अच्छा होता)
दुदर < द्विरद
दुलीचे
दुल्लीच } दुलीचा
दुहथ्थ < दोहा

दूंद < द्वन्द्व
देव बंडी = देवता ने क्रोधपूर्वक कहा ?
देवस = देवता
दोत < दूत ? [दलदोत्त = यमदूतों का दल ? अशुभ चिह्न]
द्रग
द्रग्ग } दृग, दृष्टि
द्रप्पन < दर्पण
द्रह = ह्रद
द्रिगयं = दृष्टि
द्रुग्ग < दुर्ग
धंषि = धर्षण करके
धंधो < द्वन्द्व
धत्ता = धत कह कर ?
धन्नि < धन्या
धप्पि धाय = दौड़कर
धय्यौ = दौड़ा
धर = धरा
धरद्धर = धड़ाधड़
धांम < धर्म [तु० वीरधाम धुज्जिय धरा; काम-धाम < कर्म-धर्म]
धाराहर < धाराधार, बादल
धिषन < धिषण = वृहस्पति
धीग (१) धींगा, दुष्ट, (२) धक्कामुक्की
धुअ < ध्रुव
धुज्जिय = छिन्न-विच्छिन्न हो गई
धुनक (१) < धनुष, (२) धानुक धनुर्धर
धुनयं < ध्वनित
धुम्मर < धूम्र

रघु=मध्य
धूत=(१) धौत, (२) धूर्त
धूंम=धुआँ
धूंमरी<धूम्र
धोमय<धूम, धूममय, धूसर
धृग=धिक्
धम्म
धंम } <धर्म
धंमन
धम्महं=धर्म का
धम्मायन=धर्मायन कायस्थ
नंषि=डालकर, गिराकर, रोककर
नंषिय
नंषियं } <डाला, गिराया, रोका
नष्यौ
नंचि=नाचकर
नंजन<नर्तन, नाचना
नंतयौ=निमंत्रित किया
नंधि<नद्ध—बाँधकर ?
नक=नाक (नभ)
नषिष=डालकर
नछत्त=नक्षत्र
नछित्तनह=नक्षत्र (बहुव०)
नटकीयनहन्न=नट गई और नहीं नहीं किया (नहन्नह=)
नट्ठिग=नष्ट हुआ
नठ्ठेय<नष्ट
नथि<नास्ति
नथ्य<अनर्थ
नद्द=नाद, नदि

नंद्द<नाद
नफ्फेरी=नफीरी, शहनाई
नभ्यसी<नभस् (१) आकाश (२) सावन का महीना
नय=नदी, नद
नयर<नगर
नरम्भरं<नर भट, मर्दाने सैनिक
नरषै<नरपति
नलवाही=बंदूक धारण करने वाले
नह=नहीं, नहीं, हो तो
नहन्नह<नहीं, नहीं
नाल=पास, साथ, को, से
नालं=नाल, बंदूक ?
नालकेर<नारिकेल
निकरिग्ग=निकला
निग्राहनुग्राहिनी=निग्रह और अनुग्रह करनेवाली, कृपा-कोप में समर्थ
निषत्तन=नक्षत्रों (का)
निष=तनिक, थोड़ा
निघोर=घोर
निजरि=नजर ? सामने
निज्जरिय=निज का, अपना
निज्जै=स्वयं
निठ्ठत<निठिष्त
नघातिय=मारा
निनायकं=नायक हीन
निनारे=न्यारे, अलग
निय<निज
निघोसौ=निघोष [(१) युद्धनिघोष (२) कामकेलि]
निवत्त=निवृत्त

निसुरत्ति=बिना शर्त (?)
निहाइ=दबाकर, नष्ट करके
नीठ=अनिच्छापूर्वक
नीप=कदंब
नीरद्<नीरद, बादल
नीसा=निसान, निशान
नीसार<नीशर=आवरण, पर्दा
नृध्वति=नृपधति
नेजे=भाले
नेत=चानर, चुनरी
नै<नद, नदी
नैपथ<नेपथ्य
नैर<नयर<नगर
न्रप, न्रपति } नृप, नृपति
निमंयौ=निर्मित किया
न्रिम्मल<निर्मल
न्रिम्मान<निर्माण
पंषी<पक्षी
पंषीय<पक्षी
पंग<कन्नौज का राजा, जयचंद
पंगजा=संयोगिता
पंगानि, पंगानिय } =पंग की स्त्री, पंग के देश की स्त्री
पंगानी=पंग राज को
पंगुरा, पंगुरै } =जयचंद
पंचास=पचास
पंषनिय=अपनी (आँखों की)

पंमार=पँवार वंशी राजा या क्षत्रिय, तोमर पवार
पंषारि=पंवार जाति की स्त्री
पष्य=पक्ष
पष्षर=लड़ाई के समय हाथी-घोड़ों को पहनाया जानेवाला लोहे का झूल
पज्जाई=प्रजा भाव
पटन=पत्तन, पट्टन
पटनेर<पट्टनगर=श्रेष्ठ नगर, राजधानी
पटा=पाट पर=विवाह-वेदिका पर
पट्टन<पत्तन
पट्टय=पाटी, केश-विन्यास
पट्ठाई=पठाई
पडिहाय<प्रतिघात, धँसकना
पढ्ढी=पढ़ी
पत्त<(१) प्राप्त, (२) पात्र (३) लाज
पत्ति=पति
पत्तौ=प्राप्त हुआ, पहुँचा
पत्थार<प्रस्तर
पद्ध हारं=पद्धारीछंद, पद्धडिया बंध
पद्धरि=पगडंडी
पप्पील<पिप्पीलिका, चींटी
पब्बय, पव्वय } पर्वत
पयं<पदं
पयल्ल=पहला ?
पयसा=दूध से
पयानह=प्रयाण का

परट्ठयौ=भेजा, पहुँचाया
परठ्ठिय=(१)भेजा(२) बने, बनाए
(तु० ढोला, दोहा ३३६)
परतष्षि>प्रत्यक्ष
परत्तर=श्रेष्ठ
परद्दा>पर्दा
परनेवा<परिणेया
पराक्रत=पराक्रम
परिगह, परिग्गह < परिग्रह
परेवं=हरेवा, पारावत
पलचर=मास पर से चलने वाली
पल्लांन=पल्लों में (साड़ी के)
पलान्यौ=भागा
पवंत=प्राप्त होते ही
पसम<पशम, पश्मीना वस्त्र
पस्समी=पशमी
पसाइ<प्रसाद, से
पसाब<प्रसाद प्रसन्न होना
पसौ<पशु
पहक फट्ठी=?
पहारति=प्रहार करता है
पहु<प्रभु
पहोतै=पहुँचे
पाइक्क<पायक=सेवक(२) पदातिक
पाज=(१) वज्र, बाज (२) पांजर
पाजं<पाद्य, पूजोपहार
पाट=पट्ट वस्त्र, रेशम
पटनारी=पट्ट वस्त्र या रेशम की कढ़ाई
पाटीन=पाटियां, वेणी

पातुर=नर्तकी, पतुरिया
पाघ<पाग
पामर=पाजी, कायर
पारन=पार करने वाला
पारस्स<पार्श्व ? पार्श्वघर=मुसाहिब
पांवांरी=पांवर कन्या, इंछिनी
पावस्स<प्रावृष, पावस वर्ण
पाँवारी=पँवार वंशीया
पासह=पास
पासंग=पाप
पाहन<पाषण
पिष्षत<देखता हुआ
पिषाही=देखा
पिष्षि=देखकर
पिथ, पिथ्थं =पृथ्वीराज
पिम<प्रेम
पिलप्पित<पीलपति=हाथीवान
पीजंत=(१) पी जाते हैं, घुनते हैं, (२) पीते हैं
पीठी=पृष्ठ
पुंषे=पूंछता है
पुज्जति<पूजती है, पूर्ण होती है
पुठ्ठ, पुठ्ठि <पृष्ठ
पुडंदं=पूड़ी
पुत्तारी=पुत्र
पुत्ति<पुत्री
पुन्न<पुण्य
पुंन्निम<पूर्णिमा
पुप्फ=पुष्प

पुब्ब<पूर्व

पुब्बय=पुराना (पूर्विल)

पुरिष=पुरुष

पुहप=पुष्प

पुह्य=पोहा

पुहचि<पहुँचा

पुहष्प<पुष्प

पुहवै<प्रभु

पृषनि=पोषण करने वाली

पूजारा=पुजारी

पृच्छि=पूछा

पैंज=प्रतिज्ञा

पेलै=वेगपूर्वक चलता है

पै=से

पैरंग=पैर

पैसंगी<पेशीनगोई=भविष्य-वाणी

पोमिनि=पद्मिनी

पोस<पोश (फा०) [बालपोश, ओवरकोट जैसा पहनावा।]

प्रंगं=प्रकार

प्रछन<प्रच्छन्न

प्रछेद=प्रस्वेद, पसीना

प्रजरंत=प्रज्वलित

प्रतछि<प्रत्यक्ष

प्रथ्थ=पृथ्वीराज

प्रपील<पिप्पीलिका, चींटी

प्रब्ब<पर्व

प्रब्बत<पर्वत

प्रयतं<पर्यन्त

प्रष्ण<प्रश्न

प्रसद्दं=जोर से शब्द करता हुआ

प्रपन<प्रसन्न

प्रस्स=स्पर्श करके

प्रह<प्रभा, प्रकाश

प्रोढह<प्रौढा

प्रोहित्त<पुरोहित

फरस<परशु

फरहारि=फरहरा कर

फोरिक्क=तेज चलनेवाला (अ०फरक)

फारि=(१) फाड़कर, (२) प्रहार कर

फीफुनि=पुनः पुनः

फुठ्ठि=फूटकर

फुनि=पुनः

फुरमान<फरमान

बंक<वक्र

बंछि=वाञ्छा की, चाहा

बंध=वटक्षा, विवाह की स्वीकृति

बंद<बिन्दु

बंब=आवाज, भंम

बंभ<ब्रह्म

बंभान<ब्राह्मण

बबत्त<वक्त

बग्ग, बग्गु<वल्गा, बाग, लगाम

बज्जुन<वाद्य=बाजा

बट्ट<वर्त्म=वाज, राह

बड्डं<बड़ा

बढ़=मूर्ख

बत्त, बतं=बात, वार्ता

बत्तरो, बत्तरीय

बत्तरीय<वार्ता

बथ्थ<वस्तु

बद्दिय, बद्धेवबधारं = बद्ध, बँधा हुआ, बाँधा

बनराइ = वनराजि

बब्बूर = बबूल का पेड़

बर = (१) <वर (२) <भट

बरणी = वरणीया, कन्या

बरद्ठयो = भेजा

बरद्दिया } (१) चंदकवि (२) बैल
बरद्द }

बरन्न = (१) वरों की (२) वर्ण

बरहा = वही मोर

बरिग = (१) वरण किया (२) जलउठा

बवन = (१) वयन, (२) वपन, बोना

बसीठ <विसृष्ट, दूत

बहुतरि = बहुत

बागुरि = जाल

बाज <वज्र

वाजित्र = बाजे

बाद <वाद्य

बानिक्क <वणिक

बानिज्ज <वाणिज्य

बार <द्वार

बाहन केन = आवाहन किया

बाहि = बेधकर, मारकर

बिअच्छरि = दो अक्षर का

बिंट, बींट = (१) वृन्त, भेंटी (२) छितराना

बिंद = दूल्हा

बिंय = इव, द्वितीय

बियौ = (१) कहा, (२) द्वितीय

बिरष्षं <वृक्ष

बिरसोज <विरसवज्ज <विरस बाह्य

बीज = (१) बिजली, (२) दुइज

बीभच्छरिन = शत्रुओं के लिए वीभत्स रस

बीराइमं = वीर नामक राजपुत्र का

बीरी = बीड़ी (पान का)

बुअंजानि <प्रभंजन ?

बुट्ठ <वृष्ट, बरसा

बुद्धया = (१) बुद्धि से (२) अबोध

बुंब = आवाज

बुल्लिग = बोला

ब्रंनन <वर्णन

ब्रनं = वर्णन करता है

ब्रन्न <वर्ण

ब्रष, ब्रष्ष = (१) वर्षा, (२) वृक्ष

भंति = भ्रान्ति

भकरुण्ड <भग्न रुण्ड

भषंन = भक्षण

भष्ष <भक्ष्य

भज्जह = भग्न

भंडिय = कहा

भग्गिय = भागा

भत्तिय <भणित

भद्द <भाद्र

भद्दव <भाद्रपद

भमर = भ्रमर

भय = (१) भया, हुआ, (२) डर

भयान = भयानक रस

भर <भट [भर-भिरनं = भटों का भिड़ना]

भरथ्थ <भरत

भवरयं = भाँवरी
भविछत<भविष्यत्
भारथ्थ<भारत, युद्ध
भांमि<भामिनी
भारथी<भारती, सरस्वती
भार<भट [सुभार = सुभट]
भारिय = भारी
भासह } कहा
भासो }
भिष्ट<अभीष्ट
भुअ (१)< भू (२) भुज, (३)हुआ
भुअन्न = भ्रू, भौंह
भुआर<भूपाल
भुष = भूषित
भुगति<भुक्ति
भूत<भूत, हुआ
भुसंत = भूँकता है
भुल्लै = भूलता है
भृत = भृत्य
भोडलयं<भूमंडल, नक्षत्र-समूह
भोयंसी = भोग
भ्रत्त = भृत्या
भ्रत्तार<भर्तृ, भरतार
भ्रसुण्ड<भुशुण्डि
मंडिय<मंडित
मन्त<मंत्र
मंमि<अमृत ?
मक्र<मकर
मग्ग<मार्ग
मझ्झ = मध्य में

मझ्झि = [मुखं मज्झिपायं = मुख में से फेन निकल रहा है, तेजी के कारण]
मत्ता<मात्रा
मत्त्थं = मत्त हो उठे
मयमत्त<मदमत्त
मन्नयं = माना
मय<मद
मरनय<मरण
महिय = पृथ्वी
महीव = महती
महु<मधु
महुर<मधुर
माजं<मञ्जन
मार = (१)चोट, (२) माँड या शोभा
मिग<मृग
मित्तह = मित्र का
मुक्ति<मोती
मुक्क = मुक्त
मुक्कालि = देना, छोड़ना
मुख, मुष्ष<मुख, <मुख्य
मुति = (१) मूर्ति, (२) मोती
मुर<मुद
मुर बेस } मुदवयस् = युवाकाल
मुर बैस }
मुरी<मुली, लता
मुद्ध<मुग्धा
मुहर<मुखर
मेगल } मत्तगज, हाथी
मेगज }
मेछ<म्लेच्छ

मेतं<मैत्र

मल्हइ = छोड़ता है

मुण = मर्यादा

मेर = मेरु

मैंन<मदन

मोकल = (१) भेजना, संदेश देना (२) बहुत

म्रग, म्रग्ग<मृग

म्रगमद, म्रगम्मय } मृगमद, कस्तूरी

म्रत<मृत्यु, मृत

रंगभोम<रंगभूमि

रंभ (१) आरम्भ (२) रंभा

रष्षन<रक्षण

रष्षिय, रष्यौ } रक्षित, रखा

रज, रज्ज } राज्य, राज

रतंन<रत्न

रत्तरी<रात्रि

रत्ति<रात्रि

रत्तं<रक्त; (१) खून, (२) लाल

रत्तौ = अनुरक्त हुआ

रबद्दं = आवाज

रब्बारिय = राबड़ी, दूध से बना हुआ भोज्य पदार्थ

रम = रम्या, (सु-रम = सुरम्या)

रलिय = मिले

रली = आनंद, मौज

रवन = रमण, प्रिय

रवन्निय<रमणी, स्त्री

रह = रथ

रावत्त<राजपुत्र, राउत

रावर<राजकुल, अन्तःपुर

राह<राहु

रिद एवं<हृदये, हृदय में

रिन, रिन्न } = अरिन, शत्रुओं

रुवंत, रुदंत = रोता हुआ

रुधिधार<रुधिर धार

रूनौ, रून्नौ = रोया

रूपधरारी = रूपवती

व, ब } रूप

रूरिग = आवाज की

रूहिर<रुधिर, रक्त

रूष<वृक्ष

रूरी = (१) उत्तम (२) रोली

रेहंत = उरेहना, आँजना

रोमयं अंचं = रोमांच हुआ

रोही = लाल, खून

लष्ष = (१) देखा; (२) लाख (एक लष्ष दस अग्ग ११००००)

लष्षी = एक प्रकार का घोड़ा

लछिन्न<लक्षण

लच्छीस<लक्ष्मीश

लत, लति, लत्त, लत्ता } लत्ता, आदत

लज, लज्ज = प्रिया,

लद्धी<लब्धा

लंभि = प्राप्त करके

लरथ्थर = कंपित, लड़खड़ाते हुए

लल्लरिय = खूब लड़े

लहू (१) <लघु, (२) रक्त
लिद्धि = लिया, ली
लुथ्थि = लोथ
लुंपति = लोप करता है, या लोप होता है।
लोय <लोक
लोयन
लोइन } <लोचन, आँख
वंक <वक्र
वंकम <बंकिम
व्यंद <बिंदु
वकारिय, <बगारिया = फैलाया
वग्ग = (१) वर्ग (२) वल्गा, लगाम
वचन्न = (१) वचन (२) वचनिक गद्य लेख
वत्त
वत्तरी } बृत <वार्त्ता
वथ्थ <वस्तु
वद्दि = बोली
वनथ्थि = वर्ण से
वय (१) वयस, उमर (२) चिड़ियाँ
वरउंच = वरयोग्या
वरष्ष = वर्ष
वरद्दिय = वरदायी, चंद
वसीठ <विसृष्ट = दूत
वहिग = (१) वही, (२) वह गया
वाइ
वाय } <वायु
वागवानी <वाक्, वाणी
वाजित्र <वाद्य
वानीय <वाणी
वामंन <वामन
वारुन्न <वारण = हाथी
वारौठि = वरौठे का, द्वाराचार
विक्रम = विक्रम
विगत = बीती बात, घटित वार्ता
विगस्सि = विकसित होकर
विचष्षन <विचक्षण
विंटन = वीटना, छितराना
विडारना = तितर-बितर कर देना
वत्तां करै = बातें करता है
वित्थार <विस्तार
विद्दी = वेधा
विनह = बिना
विनानं = बनाव ?
विफार <विस्फार = कंपन, ज्यानिर्घोष
विमग्ग <विमार्ग
विय = (१) इव, (२) द्वितीय
विरष्ष <वृक्ष
विलहान <बोल्लाह (एक प्रकार का घोड़ा) का बहुवचन
विरदै = विरुद गाते हैं
विवहा = विविध
विवानं <विमान
विसष्षै = विशिष्ट होवें
विसव्वा = विश्वा
विसेक = विशेष
विहंडि = नष्ट करके
वीय = द्वितीय
वृत
वृत्त
वृत्तह } > व्रत

वृत्य<वृत्ति

वृन्न = वर्ण

वोहथ्थ
वोह वृथ्थं } जहाज

व्रन्नै = वर्णन करता है

श्रप्प = (१) शाप, (२) सर्प

श्रप्पौ = शाप दिया

श्रब्ब<सर्व

श्रब्बन-विवरि = श्रवणविवर में

श्रब्बन<श्रव्य

श्रोतान = (१)सुलतान (सु०सुरत्राण)
(२) श्रवण

श्रोतानं = श्रुतों में, सुने हुये लोगों में

श्रोन<(१)श्रवण, (२)लाल (शोण)

संकमौ<संक्रम

संकरयं = संधिकाल

संष = (१) शंख, (२) संख्या

संषुलै<संकुलित

संघन = साथी

संघातिय = संगी ?

सच
सँची } = सच

संध = संधि

सन्नाह = संनाह

संपत्तौ<संप्राप्त

संवरिय = सुमिरा

संभ = शंभु

संभरि
संभरी } = शाकंभरी क्षेत्र, साँभर का इलाका

संभरिधनीं
संभरेवै
संभरेस } पृथ्वीराज

संभरौ = स्मरण करो

संमुह<सम्मुख

सक्करी<शर्करा चीनी

सष्षिय
सष्षी } सखी

सग्गा = सगाई

सगत्ति<शक्ति

सगपन
सगप्पन } सम्बंध

सगीन = सखियों या हमजोलियों में

सञ्चीव = शची, इंद्राणी

सच्छ = स्वच्छ

सज्जन = प्रिय, साजन

सझ्झ = <साध्य

सट्ठयो = साठ

सतपत्रं = कमल

सतफल<सतफला, घुँघची

सत्त = (१) सत्य, (२) सप्त, सात
(३) सत्व, बल

सत्तमी = सप्तमी

सत्ती = (१) सत्य (२) शक्ति

सथ
सथ्थह
सत्थय } = साथ

सद्द<शब्द

सद्दि<बुलाकर

सद्धै = सिद्ध होता है, शोभता हे

सयन्न<शयन

सयन्न-पगारं = सैन या इशारे के प्रकाश से

सभ<सभा

समष्षन <समक्ष

समग्ग <समग्र

समथ <समर्थ

समप्पन = समर्पण

समप्पो = समर्पण किया

समह्व = साथ

सपत्तौ <संप्राप्त हुआ, पहुँचा

सयनंतर <शयनांतर, शयन में,

सयन = (१) शयन (२) सेना
(३) इशारा

सयल <सकल

सरित्त = सरिता

सरूव = स्वरूप

सलष = सलख, पांवर नामक सरदार

सल्लै = सालता है

सहाब = शहाबुद्दीन गोरी

सत्र = यज्ञ

साइक्क = सायक, बाण

साकत्ति = शक्ति

साकत्ति } शक्ति या शक्तिब्रज नामक पृथ्वीराज का घोड़ा
साकति वाजं

साक्रत = शक्र-सम्बन्धी

साद <शाखा

साकुन्न <शकुन (१) सगुन (२) गृद्ध

साज = (१) साजता है, शोभता है,
(२) सज्जा (३) साजिश,
साँठ-गाँठ

साजं = सज्जित किया

साटक = शार्दूल-विक्रीडित के समान
छंद, सद्दूल सट्टक

साम <संमुख

स्याल = स्यार

सार = तलवार, लोहा

सारंगहर <शार्ङ्गधर, विष्णु

सारि = (१) शतरंज की गोटी
(२) मैना

सावज = वन्यजीव, श्वापद

सावत्त } सावित्र
सावर्त

सायरं <शावक = बच्चा

सिषंड = शिखंड, मयूर सी शिखा

सिषंडिय = मयूर

सिज्जा = शय्या

सिढ़ि = सीढ़ी

सित्त (१) <शत (२) शप्त

सित्ता = शीघ्र

सिंभ = (१) सिंह (२) नाच-गान,
सिंगार

सिलह = हथियार

सिष्ट <सृष्टि

सिस = शीर्ष, पत्र-शीर्ष

सिलीषा = (१) शिला-सी

सु = अच्छा, कई जगह पाद-पूर्णार्थक
अव्यय

सुइंद् = इंद्र

सुकलेव = सुकल्पित पूजा के लिए
रचित

सुंजुरी = संयुक्त, जड़ी हुई

सुतिभावहिं = सत्यभाव से

सुथनं <सुस्तन

सुदब्ब = सुद्रव्य

सुदीह = सुदीर्घ, लंबा
सुलर < सुभट
सुभन्त = शोभित
सुभत्तौं = सुभक्त; अच्छा भात
सुरंम = सुरम्य
सुर = देवता, (२) सुरत्राण (सुलतान)
सुरतान = सुलतान
सुरम = सुरम्य
सुरसुरी = गंगा
सुरी = छुरी
सेज = सैन, इशारा ?
सैंध = संधि
स्रोवन, सोबन = सौवर्ण
स्रग = स्रक्, माला
स्रग्ग, स्रग्ग } स्वर्ग
स्रब्ब = सर्व
हक = हाँकना, प्रचारना
हुंड = खोजना, हींडना

हक्कयौ = हाँका, ललकारा
हकौ हक्कवक्कं = सभी आश्चर्य चकित रह गए
हथलेव = हथलेवा, पाणिग्रहण
हल = हडकम्प
हथ्थि = हाथी
हब्बिस = हवि
हलहलिय = खरभरा गए
हलै = हिलता है
हली = हिली
हारय < हार
हाँसल = हासिल, प्राप्य या प्राप्त
हाहुलीराय = एक सरदार
हुज्जाब = गोर का एक सरदार
हुलं < फुल्ल = प्रफुल्ल
होज्जम { (१) हैजम = फौजदार, सेनापति (२) फौज (दे० डिंगलकोश)
हेंवर, हैवर } हयवर घोड़ा
है = हय, घोड़ा



साहित्य भवन प्राइवेट लिमिटेड
इलाहाबाद